जीवन को पलटाने वाली

एक अद्भुत जीवन कहानी

भाग – 1

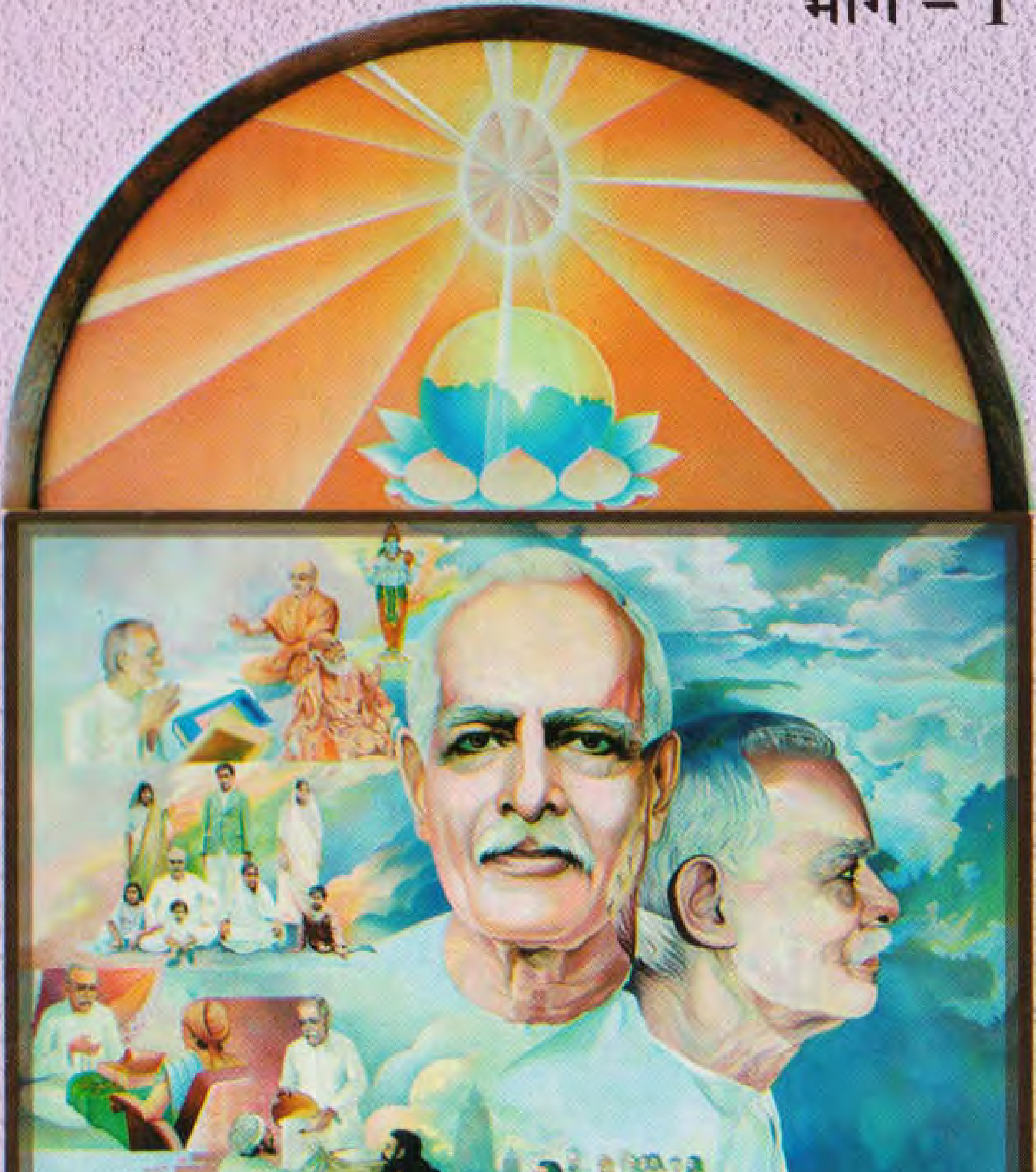

जीवन को पलटाने वाली

एक अद्‌भुत जीवन-कहानी

भाग – 1

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय
आबू पर्वत (राजस्थान)

प्रकाशक :-

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय
पाण्डव भवन, आबू पर्वत (राज०)

मुद्रक : ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड (राज.)

एक अनोखी और अलौकिक जीवन-कहानी

इस पुस्तक में जो जीवन-कहानी दी हुई है, उसमें एक अद्‌भुत मनुष्य का बहुत ही अनोखा, महत्वपूर्ण और दिलचस्प जीवन-वृत्त है। साथ ही साथ, उसी मनुष्य के तन में परमपिता परमात्मा के अवतरण अथवा प्रवेश की प्रेक्टीकल और अद्‌भुत कहानी भी इसमें है। इस विचित्र मानवी जीवन-कहानी में ईश्वरीय चरित्रों का भी आँखों देखा हाल लिखा है।

हमारे इस कथन पर बहुत-से लोगों को आश्चर्य होगा और शायद कुछेक को इस पर विश्वास नहीं होगा क्योंकि आज बहुत-से लोग परमात्मा के अवतरण में ही आस्था नहीं रखते। परन्तु मेरा नम्र निवेदन है कि इस जीवन-वृत्त को पढ़ने के बाद ही वे निर्णय करें।

जिस असाधारण मनुष्य की विचित्र जीवन-कहानी का यहाँ उल्लेख है, उन्हें लोग स्नेह से 'दादा' कहते थे परन्तु परमपिता परमात्मा ने उनके तन में प्रविष्ट होने के बाद उनको कर्त्तव्य-वाचक नाम दिया — 'प्रजापिता ब्रह्मा'। हम उन्हें **'ब्रह्मा बाबा'** अथवा 'बाबा'— इस मधुर शब्द से याद करते हैं। परमात्मा त्रिकालदर्शी हैं और सर्वज्ञ हैं अत: उन्होंने करोड़ों मनुष्यों में से उस मनुष्य को चुनकर उसके तन में प्रवेश किया तो अवश्य ही इसके कई कारण रहे होंगे। परमात्मा ने उस विशिष्ट पुरुष की अनेक जन्मों की कहानी हमें बताई भी है, जिससे स्पष्ट होता है कि वह सचमुच एक अद्‌भुत व्यक्ति थे। परन्तु चौरासी जन्मों की उस कहानी को छोड़कर यदि हम 'दादा' अथवा **'ब्रह्मा बाबा'** के वर्तमान जीवन पर भी ध्यान दें तो इस लौकिक बुद्धि को और इन चर्म-चक्षुओं को भी उनमें ऐसी योग्यताएँ अथवा विशेषताएँ दिखाई देती थीं कि जिनके कारण परमात्मा ने उनके तन में प्रवेश किया।

प्रभावशाली व्यक्तित्व

दादा के शरीर की बनावट को और स्वभाव को देखने से भी ऐसा

मालूम होता जैसे कि साधारण मनुष्य-तन में श्री नारायण स्वयं साकार हुए हैं। संसार में ऐसे तो कई लोग होते हैं जिनके सर्व अंग सुन्दर हों और स्वस्थ भी हों, परन्तु उनकी सुन्दरता का दूसरों पर दिव्य प्रभाव पड़े, ऐसा कोई बिरला ही नर हो सकता है। सूरत और सीरत (चित्र और चरित्र) दोनों का सुन्दर होना-यह किसी देव-तुल्य मानव के ही भाग्य में होता है दादा को दोनों प्रकार का सौंदर्य प्राप्त था। उनके व्यक्तित्व के बारे में लोगों का यह अनुभव दादा को ईश्वरीय ज्ञान होने से पहले भी होता था। उनका व्यक्तित्व ऐसा चुम्बकीय था कि जो कोई भी उनके सम्पर्क में आता, वह स्नेह और आकर्षण अनुभव करता।

उनका गौर वर्ण था और एक विशेष प्रकार का सुन्दर चेहरा था। उनका कद ठीक ऊँचा था, शरीर संतुलित था, मुखमंडल दिव्य कान्ति से दैदीप्यमान था। उनके नेत्रों में विशेष तौर से ऐसा लगता था कि जैसे उनमें सारे संसार के लिये स्नेह और सौहार्द की भावना छलक रही हो और उनकी भुजायें वीरों की तरह दीर्घ थीं। वे उनके साहस और सहनशीलता की प्रतीक थीं

राजकुलोचित संस्कार

उनका व्यक्तित्व ऐसा था कि साधारण वेश में भी वे एक राजा मालूम होते थे। उनका व्यापारिक सम्बन्ध भी बहुत राजाओं से था। परमात्मा शिव के प्रवेश के बाद उनके ये संस्कार ईश्वरीय सेवा में भी बहुत काम आये। बाबा सदा रॉयल्टी (Royality) से या राजकुलोचित रीति से ही ईश्वरीय सेवा करने का आदेश देते थे। परन्तु उन्हें गरीब जीवन का भी अनुभव था। इसलिए गरीबों से उनकी विशेष सहानुभूति थी। वे कहा करते थे कि 'परमात्मा गरीब-निवाज है'। अत: परमात्मा ने उन्हें ही इस कार्य के लिए निमित्त बनाया क्योंकि उन्हें ग़रीब जीवन से लेकर राजाई जीवन तक का अनुभव था और वे इसलिए सभी प्रकार के लोगों को ज्ञान से लाभान्वित करने की युक्ति जानते थे। पुनश्च, परमात्मा भी तो राजयोग सिखा कर

राजाओं के राजा बनाने के लिए अवतरित होते हैं, अत: राजकुलोचित संस्कारों वाला व्यक्ति ही उनका माध्यम हो सकता था।

दादा को धन की, वैभवों की, सत्ता की जरा भी भूख न थी, वह बिल्कुल तृप्त थे। इसलिए वे दूसरों के संस्कारों को भी ऐसा बनाने में काम आये। वे सभी वत्सों को शिक्षा देते — ''बच्चे, मांगने से मरना भला, कभी भी किसी से दान या 'चन्दा-चीरा' न माँगना क्योंकि आप 'दाता' के बच्चे हो और राजाओं के राजा बनने वाले हैं।'' दादा सच्चे राजाओं-जैसा ही शिष्टाचार, आतिथ्य, उदारता, स्वच्छता आदि गुणों को धारण करने की शिक्षा देते थे। वे उदार-चित्त इतने थे कि यदि कोई सखावत करना चाहे तो उनसे सीखे। वे एक-एक आत्मा के कल्याण के लिए काफी धन का व्यय करने को तैयार रहते।

सभी के प्रति कल्याण की भावना

दादा में दूसरी विशेषता यह थी कि उनके मन में सदा सभी के कल्याण की भावना बनी रहती थी। उनमें धर्म, जाति, देश, भाषा आदि के आधार पर भेदभाव न था। उनके मन में कभी किसी के प्रति वैर या विरोध की भावना का आविर्भाव नहीं हुआ। परमपिता परमात्मा की प्रवेशता से पूर्व जब उन्हें कभी ईश्वरीय ज्ञान का बोध नहीं हुआ था, तब भी जल की अंजलि देते समय स्वभाव से ही उनके मुख से ये शब्द निकलते थे — ''सभी आत्माओं के प्रति''। जब वे गंगा में स्नान करते हुए डुबकी लगाते थे, तब भी वे कहते थे — ''सभी आत्माओं के कल्याण के लिए।'' पूर्व कल्प में सभी आत्माओं के धर्म-पिता अथवा विश्व के प्रजापिता होने के कारण उनके ये स्वाभाविक संस्कार थे। परमात्मा भी विश्व का परमपिता है, उसे भी सभी आत्माओं का कल्याण करना होता है, अत: उसने ऐसे ही गुण-कर्म-स्वभाव वाले व्यक्ति के तन में प्रवेश किया।

असाधारण प्रतिभा

सुन्दर शारीरिक रचना और उच्च संस्कारों के अतिरिक्त दादा की बुद्धि भी असाधारण थी। किन्हीं कर्मों के वश उनका जन्म एक साधारण घराने में हुआ था परन्तु वे अपनी मेधावी बुद्धि के आधार पर बिजली की रफ्तार से उन्नति की ओर बढ़े। जवाहिरात का धन्धा बहुत ऊँचा धन्धा माना जाता है और जवाहिरात को पहचानने की अचूक बुद्धि हरेक को प्राप्त नहीं होती। दादा हीरों के ऐसे निपुण पारखी थे कि वे हीरों की पुड़िया को देखते ही उसका मूल्य एक मिनट में बता देते कि व्यापारी दंग रह जाते थे। व्यापारी स्वयं जो हीरे आदि खरीदते थे, उनका मूल्य कराने के लिये भी वह दादा के पास हीरे ले जाते थे। दादा में व्यापार बुद्धि भी ऐसी चमत्कारी थी कि कुछ ही समय में बहुत-से राजा-महाराजा उनके ग्राहक बन गये। दादा ने एक साधारण घराने में जन्म लिया था परन्तु अपने पुरुषार्थ से उन्होंने कौड़ियों से व्यापार शुरू करके हीरे बना लिये थे। दादा कहा करते थे कि मैं बैगर से प्रिन्स (Beggar to Prince) बना हूँ। दादा की पारखी बुद्धि एवं असामान्य सूझ के कारण परमपिता परमात्मा शिव ने उनके तन में प्रवेश किया क्योंकि वह भी इस सृष्टि पर नर-नारी के जीवन को ''कौड़ी-तुल्य से बदलकर हीरे तुल्य'' बनाने के लए आते हैं। वह भी रंक को राव अथवा नर को विश्व-महाराजन् श्री नारायण बनाने के लिए अवतरित होते हैं। दादा में हीरों की जो परख थी, वह भी उन्हें ईश्वरीय सेवा के कार्य में बहुत सहायक हुई।

उच्च कोटि की भक्ति और निर्भय अवस्था

दादा भक्त ऐसी उच्च कोटि के थे कि उन्होंने कभी भी अपने नियमों को नहीं तोड़ा और कभी भी अपने मन्तव्यों के विपरीत कोई कर्म नहीं किया। उनके जीवन में चाहे कैसी भी परिस्थितियाँ आईं, उन्होंने सदाचार, सौजन्य, सद्‌व्यवहार और भक्ति-भाव को नहीं छोड़ा। आगे चलकर ज्ञान में भी यह काम आये।

दादा लोक-लाज या आलोचना के भय से कभी भी अपने नियम, मन्तव्य या पुरुषार्थ को नहीं छोड़ते थे। चाहे कोई राजा हो, मुखी हो या उपद्रवी, दादा किसी अच्छे कार्य के लिये उनसे भी संकोच नहीं करते थे। वे अपनी धुन के पक्के थे।

मन की सच्चाई

दादा के संस्कार ऐसे शुद्ध थे कि सभी उन पर विश्वास करते थे। उनकी ईमानदारी पर कभी किसी को सन्देह नहीं था। जो लोग भी उनसे सौदा या लेन-देन करते थे, उन्हें यह निश्चय होता था कि वे सच्चा सौदा करके जा रहे हैं। वह बहुत ही ईमानदार और मन के सच्चे थे। अत: उनके सच्चे होने के कारण ही सच्चे पर साहिब राजी हुए, अर्थात सत्य स्वरूप परमात्मा ने उनके तन में प्रवेश किया।

कहाँ तक गिनाएँ, दादा में इतने गुण थे कि वर्णन करना कठिन है। इस जीवन-कहानी को पढ़ने से हमारे जीवन में भी अनेक दिव्य गुणों की धारणा होती है तथा जीवन पवित्र होता है। इसलिए इसका नाम 'जीवन को पलटाने वाली एक अद्भुत जीवन-कहानी' रखा गया है। यह अद्भुत कहानी हर ५,००० वर्ष के पश्चात् पुनरावृत्त होती है।

–जगदीश

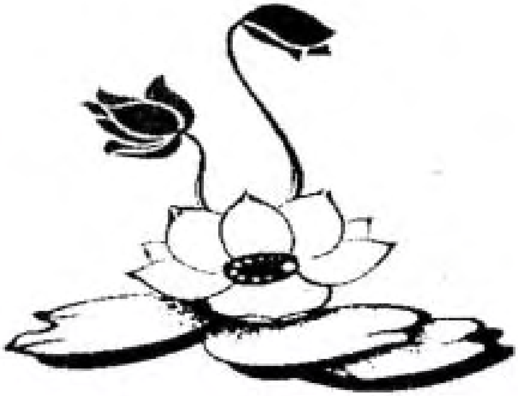

अमृत-सूची

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ
१.	जीवन को पलटाने वाली एक जीवन-कहानी	९
२.	हैदराबाद सिन्ध में निराले सत्संग की धूम	२६
३.	लोक-लाज, भय और निन्दा की परीक्षाओं से पार होना	६५
४.	विघ्न-विनाशक प्रभु ने विघ्नों से कैसे पार किया? ..	१०७
५.	अलौकिक माता-पिता द्वारा सुख घनेरे	१२६
६.	अपकार करने वालों पर भी उपकार	१३४
७.	दिव्य दृष्टि के निराले अनुभव और योग की भट्ठी ..	१४२
८.	यज्ञ-वत्स के लिये बाबा का श्रेष्ठ, प्रेरणाप्रद और आदर्शमय जीवन	१५१
९.	भारत की सेवा के लिए ईश्वरीय-आदेश, कराची से भारत में आना	१५६
१०.	भारत में ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की स्थापना	१६४
११.	सोचा था क्या	१८७
१२.	चेतन ज्ञान-गंगाएँ, पतितों को पावन करने	२०८
१३.	आत्माओं का मिलन—परमपिता परमात्मा तथा प्रजापिता ब्रह्मा से	२३३
१४.	ईश्वरीय सेवा के विभिन्न कार्यक्रम	२६४
१५.	भक्तों को सन्देश दो !	३०९

जीवन को पलटाने वाली एक जीवन-कहानी

आज तक संसार में अनेकानेक विशिष्ट व्यक्तियों की जीवन-कहानियाँ लिखी गई हैं। परन्तु इस लेख-माला में एक ऐसे अनोखे मानव का जीवन-वृत्तान्त दिया गया है जिसके जीवन में एक अनुपम और अद्भुत परिवर्तन आया और जिसने अपने जीवन को सम्पूर्ण रीति से प्रभु के अर्पण करके प्रभु से सर्वस्व पा लिया। इसमें एक ऐसी निराली आत्मा के जीवन का उल्लेख है जिस आत्मा ने संसार में एक ऐसा कार्य किया जो अन्य कोई भी मानव नहीं कर सका। यह जीवन-कहानी क्या है, यह नर से श्री नारायण अथवा मनुष्य से फरिश्ता बनने का एक मनोहर वृत्तान्त है जिसे हमने वर्तमान जीवन में अपनी आँखों से देखा है। इस जीवन-कहानी के साथ संसार के इतिहास के बहुत ही महत्वपूर्ण वृत्तान्त जुड़े हुए हैं और इसके एक भाग के साथ स्वयं दुःखहर्त्ता, सुखकर्त्ता परमपिता परमात्मा के भी दिव्य चरित्र सम्बद्ध हैं। इसमें वर्णित वृत्तान्तों ने संसार को एक नया दिशा-निर्देश दिया है और अनेकानेक नर-नारियों के जीवन को महान बनाया है। अत: स्वाभाविक है कि इस जीवन-कहानी को पढ़ने से मनुष्य के जीवन को एक नया मोड़ मिलता है और सच्ची शान्ति तथा अपार आनन्द की अनुभूति की चाबी उसके हाथ लग जाती है।

बात लगभग ६० वर्ष पहले की है। तब सिन्ध में हिन्दू समाज की धार्मिक दशा बहुत ही बिगड़ चुकी थी। कई शताब्दियों से मुसलमानी, क्रिस्तानी तथा पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव पड़ने के कारण हिन्दू लोगों का खान-पान तमोप्रधान अथवा भ्रष्ट हो चुका था। शराब और माँसाहार का आम रिवाज था। लोग भक्ति करते थे,परन्तु वे जितना पाठ-पूजा करते थे उतना ही उनमें धन के लिए लोभ, व्यापार में छल-कपट, व्यवहार में क्रोध, घर में मोह तथा मन में वासना भी भरी हुई थी। निरर्थक एवं खर्चीली रस्में और

थोथे रिवाज समाज को घुन की तरह खाये चले जा रहे थे। पुजारी, पण्डित और उपदेशक लोगों से धन बटोरते थे, परन्तु वे उनके घर-गृहस्थ को पवित्र, सदाचार-युक्त एवं शान्ति सम्पन्न बनाने वाला वास्तविक ज्ञान नहीं देते थे, क्योंकि वे केवल कर्मकाण्डी और शास्त्रपाठी ही बन गये थे। यद्यपि लोगों के पास धन था तथापि उनका घरेलू जीवन मनोविकारों और अशान्ति के कारण तथा सात्विकता के अभाव के कारण नरकमय बन गया था। माताओं की दशा विशेष तौर पर चिन्ताजनक थी। उनका स्थान केवल घर और बाल-बच्चों को संभालने वाली दासी-जैसा था तथा वे अपने पति की वासना-तृप्ति ही के लिए थीं। चाहे पति शराबी-कबाबी हो और विषय-वासना में ही डूबा रहता हो, परन्तु स्त्री के लिए वह परमेश्वर और गुरु मानने के योग्य समझा जाता। व्यापारी वर्ग के लोगों के यहाँ कन्याएँ प्राय: अशिक्षिता-सी रहती थीं और माताएँ प्राय: बड़े-बड़े घूँघटों में मुँह छिपाकर शादी आदि रस्मों में सम्मिलित होती थीं, या तो वे प्राय: घर की चार-दिवारी में विचित्र वेश-भूषा में ही रहती-सहती थीं। उन्हें पुरुषों के 'बायें पाँव की एड़ी' माना जाता था। उन्हें धर्म-प्रचार का प्राय: कोई अधिकार नहीं था, न ही उन्हें संन्यासियों की तरह ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने का कोई हक था। घोर कलियुग की इस बेला में सभी आत्माएँ अपने विकारी संस्कारों अथवा कर्मों की बेड़ियों में बंधी हुई थीं। सभी लोग अज्ञान-निद्रा में मूर्छित-से हुए पड़े थे और कहीं भी प्रकाश की एक किरण भी दिखाई नहीं देती थी। ब्रह्मा की रात्रि का वह अत्यन्त अन्धकारमय पल था।

एक साधारण परन्तु विशेष व्यक्तित्व

ऐसे वातावरण में हैदराबाद सिन्ध में एक निराले व्यक्ति थे, जिहें लोग स्नेह से 'दादा' कहते थे। उनका पूरा नाम 'दादा लेखराज' था। यों तो वे साधारण थे परन्तु फिर भी उनमें बहुत विशेषताएँ थीं। यदि कहीं सौ व्यक्तियों के बीच वे जा रहे हों तो वे सभी से न्यारे और प्यारे प्रतीत होते और झट पहचाने जा सकते थे, क्योंकि उनकी आकृति-प्रकृति उनके कद-

बुत और व्यक्तित्व में एक अवर्णनीय मनमोहकता थी और उनके व्यवहार में विशेष मधुरता और मृदुलता थी। उनके सम्बन्ध में स्नेह तथा सहृदयता थी और उनके स्वभाव में एक चुम्बकीय आकर्षण था। उनके नयन-बैन, उनका मुख-मण्डल, उनका विशाल एवं उनत मस्तक, उनके बाल, उनकी चाल, उनका रहन - सहन, उनका शिष्टाचार और उनकी भक्ति-भावना सभी चित्त को चुराने वाले थे। इसलिए लोगों से उनकी अच्छी मित्रता थी और वे सिन्ध के लोगों के स्नेही थे। यद्यपि एक मध्यम वर्ग के घराने में उनका जन्म हुआ था तथापि उन्होंने अपनी व्यवहार-कुशलता, व्यापार चातुर्य, ईमानदारी तथा परिश्रम से गिने- चुने धनी-मानी लोगों में स्थान पा लिया था। ऐसा व्यक्ति संसार में कोई बिरला ही होता है जिससे अपने कुटुम्ब-परिवार के लोगों, अड़ौसी-पड़ौसी, मित्र तथा व्यापार के कारण सम्पर्क में आने वाले लोग, सभी सन्तुष्ट हों। कोटि-कोटि मनुष्यों में से कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो लोगों को भी प्रिय हो और जिसे अपने मन में भी लोगों के लिए प्यार हो। ऐसे व्यक्ति थे 'दादा लेखराज' क्योंकि, वे दूसरों से मिलते जुलते, उनके लिए सुख की साज-सामग्री रचते तथा उनसे मित्रता निभाने में बहुत कुशल थे, उदार-चित्त थे और वचन के बहुत पक्के थे। उनकी कायिक रचना, उनका स्वास्थ्य, उनकी वेश-भूषा, उनकी वाणी में भरे मिठास का हम कैसे वर्णन करें? वे सभी इस बात की ओर संकेत करते थे कि पूर्व-जन्मों में उनके कोई विशेष ही संस्कार रहे होंगें और कि कुदरत ने उनके इस शरीर रूपी रथ को बनाने में विशेषता और अलौकि-कता का प्रयोग किया होगा। जिन लोगों ने एक बार उन्हें देख लिया अथवा जो उनके सम्पर्क में आये, वे ऐसा अनुभव करते थे कि दादा उनके भी सम्बन्धी हैं, अथवा वे मन में सोचते कि क्या ही अच्छा होता यदि वे दादा के निकट कुटुम्बी होते।

लौकिक जीवन का प्रारम्भ

दादा लेखराज का जन्म सन् १८७६ में सिन्ध के कृपलानी कुल में

एक वल्लभाचारी भक्त के यहाँ हुआ था। उनके लौकिक पिता एक स्कूल में प्रधान अध्यापक थे परन्तु दादा अपनी चमत्कारी बुद्धि और अथक पुरुषार्थ द्वारा गेहूँ के एक छोटे व्यापारी से उठकर एक प्रसिद्ध जौहरी बन गए थे। उन्हें हीरे-जवाहिरों की अचूक परख थी। अपने इस व्यापार के कारण राजाओं-महाराजाओं, धनाढ्य व्यक्तियों तथा तत्कालीन वाईसराय आदि से भी उनका मेल-मिलाप था और नेपाल के राज्यकुल तथा उदयपुर के महाराजा का तो उन्हें विशेष आतिथ्य और स्नेह-सम्मान प्राप्त था और वे उनके राज दरबार में भी आमन्त्रित होते थे। इस विषय में ब्रहमाकुमारी बृजइन्द्रा जी, जोकि लौकिक नाते से दादा की बहू थीं और जिनका लौकिक नाम राधिका था और जो प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय महाराष्ट्र ज़ोन की इंचार्ज थीं, लिखती हैं:—

"उनके सम्पर्क में आने वाले राजाओं का उनमें इतना विश्वास था कि उन्होंने दादा को खुली छुट्टी दे रखी थी कि वह कभी भी राजमहल में सीधे अन्दर आ सकते थे, उन्हें सेक्रेटरी आदि को सूचना देने की या पहले राजा की आज्ञा लेने की आवश्यकता नहीं थी। दूसरे व्यापारी अपना सामान सेक्रेटरी को ही आकर देते थे परन्तु जहाँ तक दादा की बात थी, उन्हें राजमहलों में राजमाता अन्दर ही अपनी बहू-बेटियों को हीरे-जवाहिर दिखाने या देने के लिए निस्संकोच बुला लेतीं और कहतीं — 'लखीराम, इस बेटी को यह जेवर दिखाओ'। राजमहलों के वासी दादा की धर्म-निष्ठा और उनके स्वभाव तथा व्यवहार से परिचित हो गये थे। कई बार राजा लोग उन्हें कहते — 'लखीराम बाबू, भगवान से तो भूल हो गई कि हमको तो राजा बनाया परन्तु आपको नहीं बनाया, राजापन के सभी संस्कार तो आप में हैं।' परन्तु वास्तव में भगवान ने भूल नहीं की थी क्योंकि वे राजे तो एक ताज वाले राजा थे जबकि भगवान ने दादा को दो ताज (प्रभा मण्डल तथा स्वर्ण-मुकुट) वाला दैवी राजा बनने का पुरुषार्थ कराया।"

राजा लोग उन्हें इतना सम्मान देते थे कि वे दादा को विशेष निमंत्रण

भेजते थे और दादा के पधारने पर उनको विशेष स्थान-मान देते तथा उनका आतिथ्य करते थे। एक बार हम लोग उदयपुर के महाराज के निमंत्रण पर उनके राजमहल में ठहरे हुए थे। राजा का दरबार लगने वाला था। दादा सामने गैलरी में बैठे हुए थे। राजा ने देखा कि दादा अकेले बैठे हैं, उनकी युगल (पत्नी) और उनके परिवार के अन्य सदस्य साथ नहीं बैठे हैं (दादा की युगल 'जसोदा' का यह विचार था कि पहले हम श्रीनाथ द्वारे में दर्शन करने जायेंगे, इसलिये वह गैलरी में नहीं आयीं थीं, न ही हम आये थे)। राजा ने दरबार शुरू नहीं होने दिया और वज़ीर को विशेष तौर पर दादा के परिवार को आमंत्रित करने के लिए भेजा। जब हम आये तब राजा ने स्वागत किया, बैंड बाजे बजे और तब दरबार चालू हुआ। तब राजा ने वज़ीर को प्रोग्राम दिया कि इनको श्रीनाथ द्वारे ले जाने की व्यवस्था हो। रास्ते में हमें ड्राईवर ने बताया कि राजा ने आपकी खास मेहमान-निवाजी की है, वरना इस प्रकार दरबार कभी नहीं रुका।

औपचारिक रीति से दादा ने कोई बहुत शिक्षा प्राप्त नहीं की थी परन्तु अभ्यास से उन्हें सिन्धी का अच्छा महावरा था, वे हिन्दी के धर्म-ग्रन्थों का सहज ही अध्ययन कर लेते थे वे गुरुमुखी में ग्रन्थ साहिब अच्छी तरह समझ लेते थे और अंग्रेजी के समाचार-पत्रों को पढ़ा करते थे। उन्हें पत्र लिखने में विशेष कुशलता प्राप्त थी और अच्छे साहित्य एवं कला की उन्हें पैनी पहचान थी। अपने व्यापारिक जीवन में भी वे अपनी ही सूझ से ज़ेवरों के नये-नये डिज़ाईन बनाते थे। वे इस कार्य में किसी की नकल न करते थे।

दादा के जीवन में अनन्य भक्ति-भाव और संयम-नियम

दादा बाल्यकाल से ही श्री नारायण के अनन्य भक्त थे। श्री नारायण की स्मृति उन्हें इतनी प्रिय थी कि वे अपने पूजा-पाठ के कक्ष के अतिरिक्त, श्री नारायण का चित्र अपने शयनागार में और अपने सिरहाने के नीचे भी रखते थे। उनकी तिजोरी और जेब में भी श्री नारायण का चित्र रखा रहता

था ताकि दिन-भर जिधर भी वे देखें या जहाँ भी उनका हाथ पड़े वहाँ ही श्री नारायण उनके सामने आ जायें। बाजार में श्री नारायण के जो छपे हुए चित्र प्राय: मिलते थे, उनमें श्री नारायण को लेटे हुए और श्री लक्ष्मी को उनके चरणों की दासी के तौर पर पाँव दबाते हुए चित्रित किया हुआ होता है। दादा को ये चित्र पसंद न थे क्योंकि वे इस चित्र को ऐसे समाज का प्रतीक मानते थे जिसमें स्त्री को गौण, दासी-जैसा अथवा तिरस्कार-युक्त स्थान दिया जाता हो। दादा स्त्री के स्थान को पुरुषों के स्थान से गौण नहीं मानते थे। इसलिये वे चित्रकार से ऐसा चित्र बनवा लेते थे जिसमें कि लक्ष्मी का दासी-भाव अंकित न हो।

दादा का भक्ति-भाव इतना परिपक्व था कि व्यापार या घर की कैसी भी परिस्थिति हो, वे एक दिन भी भक्ति और पाठ के नित्य नियम से नहीं चूकते थे। चाहे वे रेल-यात्रा कर रहे हों तो भी वे श्रीमद्‌भगवदगीता का पाठ अवश्य करते थे क्योंकि गीता में उनकी अनन्य श्रद्धा थी। दादा की श्रद्धा भक्ति के बारे में ब्रह्माकुमारी बृजइन्द्रा जी लिखती हैं कि —'जिन राजा-महाराजाओं तथा धनाढ्‌य व्यक्तियों के साथ दादा का हीरे-जवाहिरात का व्यापार था, वे कई बार उनके यहाँ अतिथि बनकर आते और उनकी गाड़ी के पहुँचने का समय कई बार वही होता था। परन्तु फिर भी दादा भक्ति और पाठ को नहीं छोड़ते थे। दादा का खान-पान और रहन-सहन सात्विक-जैसा था। जब कभी वे मित्रों को भोज या पार्टी देते तो उसमें सिगरेट, शराब आदि की गंध भी नहीं होती थी। दादा द्वारा दिये गए भोज में सम्मिलित होने वाले राजा तथा रईस लोग कई बार सिगरेट, शराब आदि को न पाकर विनोदपूर्ण लहजे में कहते —'दादा, पार्टी फीकी रही।'' परन्तु दादा मुस्कराते हुए उत्तर देते —''आपके लिए हम अपना धर्म थोड़े ही भ्रष्ट करेंगे। आप तो हमें कागज के नोट देते हैं परन्तु हम तो उनके बदले में आपको हीरे देते हैं।'' ये सुनकर वे लोग हँस पड़ते।

दादा को अमरनाथ, हरिद्वार, प्रयाग, वृन्दावन, काशी आदि की यात्रा

में विशेष रुचि थी और साधु-संन्यासियों को अपने यहाँ ठहराने में उन्हें बहुत खुशी होती थी। अपने लौकिक गुरु में उनकी बड़ी श्रद्धा थी और उनके स्वागत, सत्संग तथा आतिथ्य पर वे हज़ारों रुपया खर्च कर देते थे। वे गुरु की आज्ञा को कितना महत्व देते थे, इस विषय में ब्रह्माकुमारी बृज इन्द्रा जी की निम्नलिखित पक्तियाँ पढ़ने-योग्य हैं :-

गुरु के प्रति अत्यन्त श्रद्धा

''उन दिनों दादा की अपनी गुरु में भावना भी बहुत थी। एक बार गुरु अपनी बहुत बड़ी शिष्य-मण्डली लेकर उनके यहाँ आया। दादा ने बहुत ही आदर से उनका स्वागत किया। उनमें गुरु भक्ति इतनी थी कि उन्होंने गुलाब जल की बोतलों की कई पेटियाँ मँगवाई। प्रात: और सायं दोनों काल 'गुरु' के शौच-गृह में जाने से पहले वहाँ खूब गुलाब-जल छिड़का जाता। दादा अपने ही हाथ से वहाँ एक बोतल गुलाब-जल छिड़क आते और अगरबत्ती भी जगा आते।''

उन्हें 'गुरु' के आराम का भी बहुत ध्यान रहता। कहीं आवारा कुत्तों की आवाज 'गुरु' के आराम या एकान्त में खलल न डाले, विशेषकर इस खयाल से वे एक पहरेदार रखते। आम का मौसम न होने के कारण बाजार में चार रुपये का एक आम मिलता, तो भी वह गुरु के लिए आम ले आते।

वह गुरु की हर आज्ञा को हर हालत में शिरोधार्य मानते थे। एक बार की बात है कि दादा के पोते का नामकरण संस्कार होना था सायंकाल सब बड़े-बड़े व्यक्तियों का भोज था। अचानक ही 'गुरु' का तार आया कि तुरन्त आओ। दादा ने जसोदा जी (दादा की लौकिक पत्नी) को कहा कि तुरन्त कपड़े निकालो और ड्राईवर को बुलाओ क्योंकि मुझे जाना है। जसोदा दी बोलीं —''इस अवसर पर कैसे जा सकोगे'' दादा बोले —''सुनो, गुरु का बुलावा गोया काल का बुलावा है। काल आये तो क्या हम उसे ऐसा कहकर रोक सकते हैं कि आज हमारे पोते का नामकरण है।'' दादा इतना कहकर अन्दर चले गये। अब हम क्या करते। उसी समय

सभी मित्रों को फोन करके बताया कि —''दादा को किसी कारण से बाहर जाना पड़ गया है। दादा को 'गुरु' ने इसलिए बुलाया था कि दस हजार रुपये चाहिए थे, क्योंकि उसके किसी शिष्य को सट्टे में घाटा पड़ गया था''।

दानवीर दादा

दादा स्वभाव से ही दानी थे। उनके एक चाचा, जोकि, 'मूलचन्द आजवाला' (हाथी दाँत के व्यापारी) के नाम से प्रसिद्ध थे, एक 'निष्काम दानी' के तौर पर विख्यात थे। उनके जीवन-काल में ही दादा भी उनकी कोठी पर जाकर बैठते और पीड़ित लोगों को दान करते थे। इस परोपकार के कार्य में दादा अपने चाचा के अच्छे सहयोगी थे।

भक्ति की पराकाष्ठा

दादा में भक्ति के संस्कार इतने पक्के थे कि चाहे कैसा भी अवसर क्यों न हो, उनके कर्मों में भक्ति की झलक स्पष्ट दिखाई देती थी। उन्होंने जब अपनी लौकिक पुत्रियों तथा भतीजी का विवाह कराया तो उन्हें दहेज में हीरे-सोना तथा लाखों का सामान देने के अतिरिक्त उन्हें श्रीमद्भगवदगीता तथा चाँदी का एक सुन्दर मन्दिर भी विशेष सौगात के रूप में दिया ताकि वर और वधू के जीवन में भी भक्ति-भावना बनी रहे। वे शादी के अवसर पर भी अपने लौकिक गुरु को आमन्त्रित कर लिया करते थे और शादी को भी एक सत्संग का-सा रूप दे देते थे, अर्थात् उस अवसर पर भी वातावरण को धार्मिक बना देते थे तथा अन्य लोगों की तुलना में उसे निराले ढंग से सम्पन्न करते थे।

दादा की भक्ति – भावना का परिचय इस बात से भी मिलता है कि लाखोंपति होते हुए, तथा लौकिक दृष्टि से एक प्रसिद्ध कृपलानी कुल के होते हुए भी उन्होंने अपनी एक पुत्री, जिसे वे प्यार से पुट्टु नाम से याद करते थे, का विवाह बोधराज नामक एक ऐसे व्यक्ति से किया जो कि

स्कूल में मुख्याध्यापक थे, परन्तु एक साधारण परिवार के थे। दादा की पुत्री सुशील थी, शोभनीय थी और सुखों में पली थी परन्तु दादा ने उसका विवाह किसी धनाढ्य कुल के युवक से न करके बोधराज से इस कारण किया कि बोधराज धर्म-प्रिय थे। वे चिदाकाशी मठ में अपनी लगन के लिए विशेष-रूप से योगीराज नाम से भी प्रसिद्ध थे। अत: दादा ने अपने परिवार में भक्ति का वातावरण बनाये रखने के लिए यह कदम उठाया था, हालाँकि, उनके इस कार्य से उनके कुल में बहुत ही हलचल पैदा हुई और बहुत-से लोगों में यह एक चर्चा का विषय बन गया कि दादा ने अपने ही उच्च कुल को छोड़कर बाहर के एक 'साधु-तुल्य' व्यक्ति के साथ अपनी पुत्री की शादी क्यों की? दादा की पत्नी तो श्रीकृष्ण की अनन्य भक्तिन थीं हीं, उनकी बहू में भी भक्ति के बहुत पक्के संस्कार थे और, विपुल धन होते हुए भी दादा में ऐश अथवा विलासिता के संस्कार नहीं थे, बल्कि उनके जीवन से एक नितान्त भद्र, सुशील एवं धर्म-प्रिय व्यक्ति की भासना आती थीं।

ब्रह्माकुमारी मनोहर इन्द्रा जी, जो कि वर्तमान समय 'ज्ञान सरोवर' आबू पर्वत की इंचार्ज हैं, बोधराज के साथ दादा की पुत्री के विवाह के प्रसंग में इस प्रकार कहती हैं :—

"मैंने दादा जी और उनके लौकिक परिवार को कई बार देखा था। दादा जी का एक मकान, मेरे मकान के पास ही था। दादा का एक लौकिक पुत्र, जिसका नाम 'नारायण' है, मेरे लौकिक भाई के साथ पढ़ता था। दादा जी की अपनी लौकिक पुत्री, 'पुट्टू' का विवाह जब बोधराज से हुआ था, तब मैंने उसे अपनी आँखों से देखा था। उस विवाह की यह विशेषता थी कि उसमें शोर, कोलाहल, स्थूलता या घोर सांसारिकता देखने में नहीं आती थीं। बल्कि, वह विवाह ऐसा लगता था जैसे कि कलियुग में किसी देवी और देवता का विवाह हो रहा हो। उस समय के दृश्य का मेरे मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। मेरे मन में यह विचार इसलिए उठा कि मुझे

आज दादा के कुटुम्ब का 'सात्विक-सा, वातावरण मेरे मन को बहुत भाता था।''

इस प्रकार का जीवन था दादा का। कलकत्ते में उनकी हीरों की दुकान थी और बम्बई में भी वे जवाहिरात के व्यापार के सिलसिले में आते-जाते थे। कलकत्ते और बम्बई के अतिरिक्त उनका एक मकान हैदराबाद में भी था जहाँ पर कि वे बहुत समय से रहते थे। इन तीनों स्थानों पर उनका जीवन अब राजकुल के जैसे सुख में व्यतीत हो रहा था। यद्यपि दादा में प्रभु-निष्ठा, दान-वीरता आदि की विकसित भावना थी तथापि अभी घर छोड़कर वानप्रस्थी होने का संकल्प उन्हें नहीं था।

जब दादा की आयु लगभग साठ वर्ष की हुई तो उनकी पत्नी, जिनका नाम 'जसोदा' था, ने उनसे कहा – ''अब तो हमें वानप्रस्थ होकर किसी एकान्त स्थान पर बैठ जाना चाहिए।'' परन्तु दादा ने उन्हें कहा - ''अभी ठहरो, अभी इतने लाख रुपया कमाया है, अभी इतने लाख और कमा लेने दो, फिर हम वानप्रस्थी हो जायेंगे।'' दादा धन कमाने में बहुत सिद्ध-हस्त थे और उनका विचार था कि और दो-चार वर्ष तक धन कमाकर फिर खूब दान भी करेंगें और जीवन के बाकी दिन निराधार होकर भक्ति में गुजारेंगें। परन्तु ''नर के मन कछु और है, साहब के मन और।'' अनायास ही किसी ईश्वरीय योजना के अनुसार, दादा की मनोवृत्ति संसार से उपराम हो गई। उन्हें अंतर्मुखता का अनुभव होने लगा। उन्हें एकान्त ही प्रिय लगने लगा। वे मनन-चिंतन में रहने लगे।

दादा को दिव्य-चक्षु का वरदान

एक दिन ऐसा आया कि जब वे बम्बई में बाबुलनाथ के मन्दिर के सामने वाले अपने घर के विशाल आँगन में हो रहे सत्संग में बैठे थे, तो उन्हें एक निराला ही आन्तरिक अनुभव होने लगा। वे सत्संग के स्थान से उठकर अपने एक कमरे में चले गये। वहाँ बैठे हुए वे एक अलौकिक नशा-सा अनुभव कर रहे थे। उन्हें शरीर का भान नहीं था। उस अवस्था में उन्हें सबसे पहले 'विष्णु चतुर्भुज' का दिव्य साक्षात्कार हुआ। दादा ने सोचा

कि 'गुरु' ने ही ये साक्षात्कार करवाये होंगे। इसलिए उन्होंने अपने गुरु के पास जाकर बहुत खुशी में यह सब वृत्तान्त सुनाया। परन्तु गुरु के हाव-भाव से उन्होंने समझा कि गुरु इन बातों से बिल्कुल ही अपरिचित है और दिव्य साक्षात्कार कराना उनकी सामर्थ्य से बिल्कुल बाहर की बात है। अत: उनका मन अब परमपिता परमात्मा की ओर मुड़ा जो ही वास्तव में सबका सद्गुरु है। दादा के मन में निश्चय हुआ कि दिव्य दृष्टि और दिव्य बुद्धि का दाता केवल परमात्मा ही है और उस एक ही को सच्चा गुरु मानना चाहिए। उन्हें महसूस हुआ कि परमपिता परमात्मा ही ने उन्हें दिव्य-चक्षु रूप वरदान दिया है।

ज्योतिर्लिंगम् शिव का तथा कलियुगी सृष्टि के महाविनाश का दिव्य साक्षात्कार

कुछ समय के बाद दादा वाराणसी में चले गये। वहाँ वे अपने एक मित्र की वाटिका में बैठकर मनन किया करते थे। वहाँ एकान्त में बैठकर जब वे प्रभु-चिन्तन करते तो उन्हें नित्य नये अनुभव और कई दिव्य साक्षात्कार हुआ करते। तब वे अपने घर में जो पत्र लिखा करते थे, उससे यह बात स्पष्ट मालूम होती थी। ब्रह्माकुमारी बृज इन्द्रा जी (दादा की लौकिक पुत्र-वधु) कहती हैं कि तब दादा ने एक पत्र में लिखा :—

"खज़ाना बहुत है,पा रहा हूँ, पा रहा हूँ।" दूसरे पत्र में लिखा — "चाबी मिल गई, पा लिया, पा लिया" इस प्रकार के पाँच पत्र दादा ने हम लोगों को लिखे थे। उन्हीं दिनों दादा को अनेक अलौकिक अनुभव हुए और उस स्थिति में दादा ने लिखा कि —"पा लिया जो था कि पाना और क्या बाकी रहा" एक दिन दादा को निराकार ज्योतिर्लिंगम् शिव परमात्मा का साक्षात्कार हुआ तथा कलियुगी सृष्टि के महाविनाश का साक्षात्कार भी हुआ। दादा ने देखा कि बहुत ही भयंकर बम बनाए गए हैं। उनके विस्फोट से असह्य अग्नि निकल रही है। उन्हें आभास हुआ कि ५००० वर्ष पहले महाभारत युद्ध में जिन अस्त्रों का प्रयोग हुआ था और जिन्हें 'महाभारत'

ग्रंथ में 'अग्नि बाण' 'ब्रह्मास्त्र' और 'मूसल' कहा गया है, ये वही अस्त्र-शस्त्र हैं और इन्हीं द्वारा अमरीका तथा यूरोपवासी लोगों का महाविनाश हो रहा है।

दादा को जिन दिनों यह साक्षात्कार हुआ, उन दिनों अभी अमरीका ने ऐटम और हाईड्रोजन बम हिरोशिमा और नागसाकी पर नहीं फैंके थे बल्कि तब वैज्ञानिक लोग प्रयोगशाला में ही उन पर अभी प्रयोग कर रहे थे। तब रूस और अमरीका आपस में मित्र राष्ट्र थे और जर्मनी तथा जापान के विरुद्ध उनका संयुक्त मोर्चा था। तब दादा को परमपिता परमात्मा ने दिव्य-चक्षु देकर यह अग्रिम साक्षात्कार कराए थे कि आगे चलकर ये दोनों देश एक-दूसरे के शत्रु बन जायेंगे और एक विश्व-युद्ध होगा जो कि अन्तिम होगा। उसमें इन अस्त्रों-शस्त्रों के प्रयोग से, बहुत ही थोड़े-से समय में, एक अग्निज्वाला में, भारत से बाहर दूसरे देशों में एक महाविनाश हो जायेगा।

दादा ने गीता-प्रसिद्ध अर्जुन की भाँति यह भी साक्षात्कार किया कि सृष्टि में महाविनाश होने के परिणामस्वरूप करोड़ों आत्माएँ परमधाम को वैसे ही लौट रही हैं जैसे पतंगे प्रकाश की ओर लपकते हैं। दादा ने दिव्य दृष्टि द्वारा भारत में विकराल गृह-युद्धों का और प्राकृतिक प्रकोपों का भी अग्रिम साक्षात्कार किया। विनाश के ये अत्यन्त डरावने दृश्य देखकर दादा काँपने लगे। दादा ने देखा कि एक बहुत बड़ी बाढ़ आई है। जीव-प्राणी अत्यन्त भयभीत होकर जान बचाने के लिए इधर-उधर भाग रहे हैं परन्तु वे बच नहीं पा रहे। कहीं पर अग्नि अपना महाविकराल रूप धारण करके नगरों और जीव-प्राणियों को भस्मसात करती जा रही है, कहीं पर धमाके से खूब मूसलाधार वर्षा हो रही है तो कहीं पर पृथ्वी कम्पायमान होकर फट रही है और सब जगह लोग हाहाकार कर रहे हैं और प्राणों की रक्षा के लिए भाग रहे हैं, परन्तु लोग पारस्परिक युद्धों तथा प्राकृतिक प्रकोपों से बच नहीं पा रहे। दादा, जिनकी आँखों से कभी किसी ने आँसू नहीं देखते

थे, की आँखों से अब अश्रुधारा बह रही थी और वे कह रहे थे –"प्रभु, बस कीजिए! बस कीजिये, प्रभु! इतना भयंकर विनाश!! अब मुझे मोहिनी रूप दिखलाइये।"

व्यापार से अवकाश

भविष्य में होने वाले महाविनाश को देखकर दादा का मन अब अपने व्यवसाय से उठ चुका था। अत: उसे समेटने के लिए वे वहाँ से कलकत्ता गये। उन्हें अब सब हीरे पत्थर की तरह दिखाई देने लगे। वह बोले, यह तो झूठा व्यापार है। उन्होंने अपने भागीदार से कहा –"अब हमें छुट्टी दो।" उसने कहा –"यह कैसे होगा?" दादा का भागीदार किसी राजा को पहचानता तक न था। उसने सोचा कि दादा मुझे छोड़ जायेंगे तो बड़ी कठिनाई होगी। उसने शायद यह भी सोचा कि पता नहीं दादा क्यों नाराज़ हो गए हैं और कि पता नहीं वे कितना हिस्सा मागेंगे परन्तु दादा ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा –"मैं किसी मतभेद के कारण नहीं जा रहा बल्कि इसलिए जाना चाहता हूँ कि मुझे अब यह धन्धा झूठा लगता है। मुझे ईश्वरीय आवाज़ आई है कि कलियुगी सृष्टि का महाविनाश होना है। अत: मुझे अब यह पैसा ईश्वरीय सेवा में लगाना है। मैं अभी बैठकर आपसे कोई हिसाब-किताब नहीं करूँगा। आप बाद में अपने वकील द्वारा, जैसे भी ठीक समझो, हिसाब करा देना।"

हम पहले बता आए हैं कि दादा के एक चाचा थे जो कि 'काका मूलचन्द' के नाम से प्रसिद्ध दानी थे। दादा ने उन्हें वचन दिया था कि उनका सदाव्रत चलता रहेगा। दादा दान-कर्म में उन्हें काफ़ी आर्थिक सहयोग देते थे। अभी कलकत्ते में अब उन्हें अपने भागीदार से हिसाब करना था तो उन्हीं दिनों सिन्ध से 'काका' के बीमार पड़ जाने का तार दादा के पास आया। दादा ने भागीदार के साथ हिसाब नहीं किया बल्कि उन्हें भागीदार के वकील द्वारा हिसाब का फैसला करने से सम्बन्धित जो कागज़ मिले, उन्हीं कागज़ों और उसी हिसाब-किताब को उन्होंने ठीक मान लिया। तब

उन्होंने घर में तार दिया जिसमें लिखा था :–

''अल्लिफ़ को अल्लाह मिला,
बे को मिली झूठी बादशाही।
आई तार अल्लिफ़ को,
हुआ रेल का राही।।''

यहाँ 'अल्लिफ़' का अर्थ पहले व्यक्ति अर्थात् दादा से है और 'बे' उनके भागीदार का वाचक है। ऐसा तार देखकर विचार चलता था कि पता नहीं दादा को क्या हुआ है। जब दादा सिन्ध में आये तो उनका जीवन बिल्कुल ही बदला हुआ था।

मृत्यु दशा का साक्षात्कार

हाँ, तो मैं काका मूलचन्द की बीमारी की बात कर रही थी। दादा के पहुँचने से पहले ही काका मूलचन्द ने शरीर छोड़ दिया था। उनकी मृत्यु के बाद एक दिन दादा उनकी कोठी पर एकान्त में बैठे थे। वहाँ उन्हें काका मूलचन्द की मृत्यु-दशा का साक्षात्कार हुआ। उन्हें दिखाई दिया कि आत्मा मस्तक से अलग होती गई। सत्ता छोड़ते-छोड़ते वह पाँव के अंगूठे तक आई। फिर थर्मामीटर के पारे की तरह धीरे-धीरे ऊपर चढ़ते-चढ़ते मस्तक तक आई। इस प्रकार उन्हें मृत्यु दशा का साक्षात्कार हुआ। काका मूलचन्द की मृत्यु-दशा के साक्षात्कार के लगभग एक सफ्ताह के अन्दर दादा को एक और साक्षात्कार हुआ। दादा ने देखा कि विष्णु उनके सामने प्रगट होकर कह रहे हैं – 'अहम् चतुर्भुज तत् त्वम्'। फिर श्री कृष्ण, जगन्नाथ जी, ब्रदीनाथ जी और केदारनाथ जी बारी-बारी आये और उन सभी ने भी ऐसे ही कहा। इन साक्षात्कारों से जहाँ दादा को बहुत हर्ष हुआ, वहाँ इस बात पर उनका विचार भी चलने लगा कि –''मुझे तत् त्वम्'' का जो वरदान दिया गया है, उसका वास्तव में क्या भाव है। ये साक्षात्कार मुझे किसने कराये?

उन दिनों दादा के 'गुरु' भी आये हुए थे। दादा ने उनके आगमन पर

२५००० रुपये खर्च किये। उन्होंने एक बहुत बड़ी सभा की थी। उसमें बहुत लोग बैठे थे, परन्तु मुझे दादा का उठना-बैठना बहुत निराला लगा। दादा थे तो साकार अर्थात् शरीरधारी ही परन्तु मुझे ऐसा लगा कि उनका शरीर उनसे दूर है। गुरु का भाषण चल रहा था परन्तु दादा सभा से उठ गये। इससे पहले कभी भी दादा सभा से उठकर नहीं गए थे। मेरा ध्यान दादा की ओर गया। मैंने जसोदा जी, जोकि दादा की धर्मपत्नी थीं, को दादा के पास भेजा। जसोदा जी के जाने के बाद मुझे ख्याल आया कि मैं भी जाऊँ। मैं दादा के कमरे में गई। मैं दादा के पास बैठ गई और जसोदा जी गुरु की सभा में लौट गई।

विश्व के इतिहास में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वृत्तान्त

मैंने देखा कि दादा अर्थात् बाबा के नेत्रों में इतनी लाली थी कि ऐसे लगता था जैसे कि उनमें कोई लाल बत्ती जग रही हो। उनका चेहरा भी एकदम लाल था। और कमरा भी प्रकाशमय हो गया था। मैं भी शरीर-भान से अलग, मानो अशरीरी हो गई। इतने में एक आवाज़ ऊपर से आती मालूम हुई, जैसे कि दादा के मुख से कोई दूसरा बोल रहा हो। वह आवाज़ पहले धीमी थी, फिर धीरे-धीरे ज़्यादा हो गई। आवाज़ यह थी :—

"निजानन्द स्वरूपं, शिवोऽहम् शिवोऽहम्
ज्ञान स्वरूपं शिवोऽहम् शिवोऽहम्
प्रकाश स्वरूपं, शिवोऽहम्, शिवोऽहम् ।"

फिर दादा के नयन बन्द हो गये।

मुझे आज तक न वह अद्भुत दृश्य भूलता है, न वह आवाज़ ही भुलाई जा सकती है। वह वातावरण भी अविस्मरणीय है और उस समय की वह अशरीरी अवस्था भी मुझे अच्छी तरह याद है।

दादा के नयन खुले तो वे ऊपर-नीचे कमरे में चारों ओर आश्चर्य से देखने लगे। उन्होंने जो कुछ देखा था उसकी स्मृति में वे लवलीन थे। मैंने पूछा —"बाबा, आप क्या देख रहे हैं?" बाबा बोले —"कौन था? एक

लाईट थी। कोई माईट (Might) शक्ति थी। कोई नई दुनिया थी। उसके बहुत ही दूर, ऊपर सितारों की तरह कोई थे और जब वह स्टार नीचे आते थे तो कोई राजकुमार बन जाता था तो कोई राजकुमारी बन जाती थी। एक लाइट और माईट ने कहा –''यह ऐसी दुनिया तुम्हें बनानी है'' परन्तु उसने कुछ बताया नहीं कि कैसे बनानी है। मैं यह दुनिया कैसे बनाऊँगा!! 'वह कौन था' — कोई माईट थी।''

यह दादा के तन में परमपिता परमात्मा शिव की प्रवेशता थी

अब दादा बहुत गहन विचार में थे। वह गहरी सोच करते और फिर कहते थे –''वह कौन था? वह कौन सी शक्ति है जो मुझे ऐसे ज्ञान-युक्त दिव्य साक्षात्कार कराती है और इनके पीछ रहस्य क्या है'' दादा के कुटुम्बी-जन भी इस सोच में रहते थे कि पता नहीं दादा को क्या हो गया है। दादा अब बहुत ही अन्तर्मुखी हो गए थे और वे आत्म-चिन्तन में ही तल्लीन मालूम होते थे। स्वयं दादा को भी आगे चलकर यह रहस्य स्पष्ट हुआ कि परमपिता परमात्मा शिव ने दादा के तन में प्रवेश होकर अपना परिचय दिया था और उन्होंने ही दादा को कलियुग सृष्टि के महाविनाश का तथा आने वाली सतयुगी सृष्टि का भी साक्षात्कार कराया था और उस पावन सृष्टि की स्थापनार्थ उन्हें निमित्त अथवा माध्यम बनने का निर्देश दिया था।

अन्तरात्मा में गीता-ज्ञान का स्फुरण और दिव्य विवेक की प्राप्ति

अब दादा को अन्दर ही अन्दर ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि भगवान् अव्यक्त अथवा गुप्त रूप में उन्हें गीता-ज्ञान दे रहे हों। अब उनकी अन्तरात्मा में गीता-ज्ञान का स्फुरण हो रहा था और साथ-साथ वे उस ज्ञान में स्थिति और अनुभूति का भी रसास्वादन कर रहे थे। उनकी बुद्धि को स्वत: ही यह सूझ भी प्राप्त हो रही थी कि गीता में भगवान् के वास्तविक महावाक्य कौन-से हैं और उनमें प्रक्षिप्त क्या-क्या है। गोया अब उन्हें दिव्य विवेक की प्राप्ति हुई और इस सत्यता में उनका विश्वास और दृढ़ हुआ कि

'गीता' ही एक ऐसा शास्त्र है जिसमें स्वयं भगवान् के महावाक्य हैं। परन्तु अब जबकि स्वयं भगवान् उन्हें ईश्वरीय ज्ञान दे रहे थे और उसकी अनुभूति करा रहे थे तो गीता शास्त्र, जिसे वे नित्य-प्रति पढ़ा करते थे, अब उनसे स्वत: ही छूट गया था। दादा को ऐसा अनुभव होता कि वह अर्जुन हैं और स्वयं भगवान् उनकी ज्ञान-पिपासा तृप्त कर रहे हैं। अब भगवान् स्वयं भक्तों की आशा पूर्ण करने के लिए और गीता में दिया हुआ अपना वचन निभाने के लिए फिर से गुप्त वेश में आये हैं।

दादा को अब यह निश्चय हो गया कि मैं यह देह नहीं हूँ, मैं एक अविनाशी आत्मा हूँ, यह शरीर विनाशी है। उन्हें ऐसा लगा कि अब उन्हें स्वरूप की सही पहचान मिली है और कुछ वर्षों के बाद कलियुगी पुरानी सृष्टि का महाविनाश होगा। इस प्रकार की गुप्त आवाज़ सुनकर वे अन्य मित्रों तथा सम्बिन्धियों को भी आत्मा का ज्ञान देकर उन्हें प्रभु के स्नेह में मग्न अपनी नज़र से निहाल कर देते थे। वे स्वयं भी आत्मानुभूति की मस्ती में रहते थे और अन्य सभी को भी कहते कि —'तुम आत्मा हो।' अब उन्होंने लिखना शुरू किया कि —''मैं आत्मा हूँ, जसोदा आत्मा है, राधिका आत्मा है।'' इस प्रकार लिख-लिखकर वे कुटुम्ब के सभी सदस्यों को आत्मा का पाठ पक्की तरह याद कराते थे। अब उनके सम्पर्क में आने वाले हरेक नर-नारी को ऐसा अनुभव होने लगा जैसे कि उसके जीवन की ज्योति अब जग गई हो। हरेक को एक-दूसरे से ज्योति का साक्षात्कार होने लगा जिसके फलस्वरूप सबको आत्मा-निश्चय के साथ परमशान्ति का भी अनुभव होने लगा। उनके मन में विकारों के प्रति घृणा पैदा होने लगी और उनका खान-पान भी शुद्ध हो गया।

परमपिता परमात्मा शिव ने दादा के तन में प्रवेश करके अब नर-नारी के खान-पान, व्यवहार, दृष्टि-वृत्ति आदि को शुद्ध किया और उनकी शिक्षा की व्यवस्था भी की। उन्होंने सबको पितृवत स्नेह भी दिया और उन्हें जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिए नियम भी बताए। फिर क्या हुआ-यह आगे पढ़िए।

—सम्पादक

हैदराबाद सिंध में निराले सत्संग की धूम

ब्रह्माकुमारी बृजइन्द्रा जी लिखती हैं कि अब दादा ने कई दिनों से बाहर घूमने जाना भी बन्द कर दिया था। हम घर के सभी छोटे-बड़े सदस्य बैठ जाया करते थे और दादा आत्मा का जो ज्ञान देते, वह हम सुनते थे। इस आत्म-ज्ञान में इतनी शक्ति थी कि उसे सुनते ही हमारे मन में उसकी धारणा हो जाती थी। थोड़े ही दिनों में दादा के दूर के सम्बन्धी भी आने लगे। अपनी अन्तरात्मा में ज्ञान की गुप्त आवाज़ सुनकर दादा को गीता में और अधिक श्रद्धा हो गई थी, इसलिये वे गीता-ज्ञान सुनाया करते थे। अब उन द्वारा गीता का ज्ञान सुनाते-सुनाते गीता के भगवान् शिव सब माताओं को जगाने के लिए कल्प पहले की तरह स्वयं ही नर-नारियों को साक्षात्कार कराने लगे। उनके सत्संग में सम्मिलित होने वालों को श्रीकृष्ण का साक्षात्कार, कलियुगी सृष्टि के महाविनाश का साक्षात्कार और आने वाली सतयुगी दैवी दुनिया का दिव्य साक्षात्कार होने लगा। इस अद्भुत बात की चर्चा सारे शहर में होने लगी कि दादा के पास जाकर सत्संग करने से साक्षात्कार होते हैं। अब दादा के मित्रों और सम्बन्धियों के अतिरिक्त अन्य कन्याएँ तथा पुरुष भी आने लगे। वे ऐसा मानते थे कि दादा ही साक्षात्कार कराते हैं, हालाँकि स्वयं दादा को भी शुरू-शुरू में जब साक्षात्कार हुए थे तो वे इस सोच में पड़ गये थे कि ये साक्षात्कार कौन कराता है? दादा को भी बाद में ही यह ज्ञान हुआ था कि उन्हें और उन द्वारा दूसरों को साक्षात्कार कराने वाला स्वयं परमपिता परमात्मा ही है।

सत्संग सुनने के लिए आने वालों में एक बहुत धनवान परिवार की महिला थीं जिनका नाम 'रुक्मिणी' था। वह हैदराबाद में एक बहुत बड़े घर की बहू मानी जाती थी। उनका ससुर वहाँ के विशिष्ट अथवा गिने-चुने व्यक्तियों में से ही एक माना जाता था। लेकिन उस महिला के पति की

अकाल मृत्यु हो गयी थी और इस कारण से वह बहुत ही दु:खी और अशान्त रहती थी। अचानक ही दादा के सत्संग की महिमा सुनकर जब वह दादा के पास पहुँची तो उस पर दादा के प्रवचनों का और दादा की अलौकिक आभा का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और उसे अपने जीवन में अत्यन्त दु:ख की बजाय अब अतीन्द्रिय सुख का अनुभव हुआ। अत: अन्य लोगों की तरह वह भी अपने स्वजनों एवं सम्बन्धियों को कहती —''चलो-चलो ॐ बाबा (दादा) के पास। उनके पास कोई गुप्त शक्ति है। उनके वचनों से अमृत बरसता है जो संतप्त हृदय को एक अलौकिक शीतलता देता है। उनका मस्तक एक दिव्य तेज से चमक रहा है। उनकी दृष्टि में कोई अलौकिक प्रकाश है। वह गीता का सच्चा ज्ञान सुनाकर मन को सच्ची शान्ति देते हैं।'' इस प्रकार उस माता के दु:खी जीवन में एक अद्भुत परिवर्तन देखकर तथा उसका अनुभव सुनकर उसके स्वजन-सम्बंधी आने लगे। उस माता की एक लौकिक, विवाहिता पुत्री, जिसका नाम 'गोपी'* था, भी उसके साथ सत्संग में आने लगी। ओम् बाबा (दादा) के सन्मुख जाने पर उन्हें ऐसा अनुभव होता था जैसे कि वह बाबा के तन में, गुप्त रूप में आये हुए भगवान् से मिल रही हो। उनको बाबा के माध्यम से श्रीकृष्ण का आभास होता था और वह कई बार देह की सुधि भूलकर स्वयं को आत्मा रूप में एक ज्ञान-गोपी समझती थी।

ईश्वरीय ज्ञान की एक झलक

इस प्रकार, ईश्वरीय ज्ञान द्वारा अतीन्द्रिय सुख का अनुभव करते हुए अनेकानेक नर-नारी आत्मिक उन्नति कर रहे थे। उन दिनों बाबा जो ज्ञान देते थे और उस ज्ञान से जो अनुभव होता था, उसकी एक झलक

*वर्त्तमान समय भी उनके भाई-बान्धव करोड़ों रुपयों का व्यापार चला रहे हैं और अब वह 'बड़ी दीदी' के स्नेहयुक्त नाम से प्रसिद्ध हुईं तथा ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणि जी के साथ ही ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की मुख्य कार्य-वाहिका रहीं।

ब्रह्माकुमारी हृदय पुष्पा जी ने इस प्रकार दी है :–

''बचपन से ही मेरा यह संस्कार था कि जब भी अपने सम्बन्धियों में से किसी की शादी की सूचना मुझे मिलती तो मुझे बहुत दु:ख -सा अनुभव होता था। शादी से मुझे घृणा थी। मुझे इस घृणा का कारण समझ में नहीं आता था। परन्तु जैसे-जैसे मेरी अपनी शादी के दिन निकट आते जा रहे थे, मैं रोती रहती थी। (शायद मेरी अन्तश्चेतना में निर्विकार जीवन की उत्कृट चाह थी।) आखिर जब मेरे विवाह का समय आ पहुंचा तो मुझे ऐसा लगा कि मेरी मृत्यु का दिन आ गया है। मेरा विवाह तो हो गया परन्तु पति के प्रति मेरी दृष्टि में वासना-भाव रंचक भी न था। पति बीमार रहते थे और मैं एक नर्स की भाँति उनकी देख-भाल तथा सेवा करती थी परन्तु मेरे मन में कभी भी मोह-भाव अथवा पति- पत्नी के सम्बन्ध का भान पैदा नहीं हुआ। बहुत सेवा और इलाज के बावजूद भी विवाह से छ: मास के अन्दर ही उनका देहान्त हो गया। मेरे माता-पिता को इस बात का बहुत दु:ख हुआ। मुझे भी यह दु:ख हुआ कि छह मास पहले मैं कन्या थी, परन्तु अब लोग मुझे 'विधवा' की दृष्टि से देखेंगे। मेरे लौकिक भाई ने भी १७ वर्ष की तरुणावस्था में शरीर छोड़ा था। उसका दु:ख भी मेरे माता-पिता के मन में बहुत था। वही माँ-बाप का इकलौता बेटा था और वही इतनी बड़ी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनने वाला था। माता-पिता को दु:खी देखकर मेरे दु:ख में और वृद्धि हुई थी। हमारा कुल एक धनी-मानी कुल था, इसलिए हमारे दु:ख की दास्तान हैदराबाद में काफ़ी लोगों तक पहुंच चुकी थी। स्वयं बाबा ने भी हमारी गाथा सुन रखी थी।

दूसरी ओर सिन्ध में इस बात की धूम मची थी कि ओम् बाबा के सत्संग में कोई जाता है तो उसे परम शान्ति का अनुभव होता है और अनेकों को श्रीकृष्ण का भी साक्षात्कार हुआ है। यह बात मेरे कान तक भी पहुँची। मैं दूसरे ही दिन बाबा के सत्संग-स्थान पर गयी। बाबा के व्यक्तित्व से शान्ति बरसती थी और उनके सन्मुख जाने से सुख महसूस हो रहा था।

बाबा ने मुझसे पूछा –''आप कौन हो। जानती हो आप कौन हो?''

मैंने कहा –''मैं एक दु:खी इन्सान हूँ। फिर बाबा ने पूछा –''अच्छा बताओ, संसार दु:ख रूप है या सुख रूप है?''

मैंने कहा – ''बहुत दु:ख रूप है।''

बाबा ने कहा –''अच्छा, बैठो!'' मुझे सामने बिठाकर बाबा ने अपने हाथ से एक मनुष्य का चित्र खींचा और उसकी भृकुटी में आत्मा अंकित की। उस चित्र पर उन्होंने मुझे समझाया –''देखो, यह शरीर तो पाँच तत्वों का पुतला है और विनाशी है। परन्तु इसके अन्दर जो आत्मा है, वह मन, बुद्धि और संस्कारों सहित है, चेतन है और अनादि-अविनाशी है। बच्ची, यह दो चीज़ें अलग-अलग हैं। शरीर जल जाता है,आत्मा नहीं जलती है। वह एक शरीर से निकल कर दूसरे शरीर में प्रवेश कर जाती है। अब बताओ, आप दोनों में से कौन हो? आप यह पाँच तत्व का शरीर हो जो कि जल जाता है या इसमें जो आत्मा है, आप वही हो?'' मैंने कहा –''बाबा इस स्पष्टीकरण के अनुसार तो मैं एक आत्मा हूँ।'' तब बाबा ने कहा –''बच्ची, आत्मा का स्वधर्म शान्ति है, अशान्ति तो प्रकृति के धर्म को अर्थात् परधर्म को अपनाने से होती है। अब बताओ, यह किसने कहा कि मैं एक दु:खी इन्सान हूँ।'' क्या आप दु:खी इन्सान हो या शान्ति-स्वरूप आत्मा हो?''

यह सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई कि मैं एक शान्ति-स्वरूप आत्मा हूँ। बाबा ने कहा कि बुद्धि को इस शरीर के भान से निकालो और अशरीरी हो जाओ और अपने स्वधर्म में स्थित शान्तिस्वरूप हो जाओ। देखो, तुम कौन हो, देख रही हो कैसा तुम्हारा स्वरूप है। ऐसे सुनते-सुनते मैं आत्मा के स्वरूप में स्थित हो गयी और शरीर को भूल गयी। इसी बीच मैंने देखा कि आत्मा बिन्दु स्वरूप है और वह ऊपर-ऊपर उड़कर शरीर से अलग होती जा रही है। फिर ऐसा महसूस हुआ कि आत्मा विस्मृति से स्मृति में आती जा रही है। जैसे बादल दुर होने से चाँद दिखाई देता है, मुझे लगा

कि अज्ञान का पर्दा दूर होने से बहुत खुशी हुई है। मैं लगभग दो घण्टे उस सहज समाधि अथवा आत्मनिष्ठ अवस्था में गद्‌गद् हो बैठी रही। जब उस अवस्था से कुछ नीचे उतरी तब बाबा ने मुझे बुलाया और पूछा –''अब बताओ कि आप कौन हो?'' मैंने कहा –''मैं एक आत्मा हूँ।'' बाबा ने फिर पूछा –''अब आप दु:खी हो या सुखी?''

मैंने कहा– ''मैं एक शान्तिस्वरूप अथवा सुख स्वरूप आत्मा हूँ। मेरे जैसा सुखी कोई नहीं।''

बाबा ने पूछा –''संसार दु:खस्वरूप है या सुखस्वरूप?''

मैंने कहा – ''सुख रूप है।''

तब बाबा ने कहा –''अच्छा, आज का पाठ पक्का करना और फिर कल मैं दूसरा पाठ पढ़ाऊँगा।''

उस समय मेरा मन कुछ इस प्रकार गा रहा था :–

तुमने मुझको ज्ञान सुनाया, सोये हुए हृदय को जगाया
तुमने मुझको योग सिखाया, मानुष से देव बनाया।
जगाकर आत्म-निष्ठ बनाया!
एक घड़ी में योगी बनाया, 'अहं' और 'मम' का राज़ बताया
अहम 'आत्मा' और मम् प्रकृति, तख्ते ताऊस बिठाया
जगाकर पवित्र मार्ग दिखाया!

मैं जब बाबा के पास आई थी तो मन ही मन में रोती हुई आई थी और अब हँसते हुए घर लौट रही थी। मेरी अवस्था आत्म-स्थित और हर्षमय थी। मुझे एक अलौकिक नशा-सा था। मैंने घर में जाकर अपनी दु:खी माता को भी यह ज्ञान-वार्तालाप सुनाया। मैंने माता जी को कहा- ''आप रोती क्यों हैं?'' प्रकृति के बने शरीर तो नाशवान हैं ही, उनके लिए क्या रोना?'' आत्मा तो अजर-अमर अविनाशी है। आप तो शान्तिस्वरूप हैं......।'' माता जी को यह बातें बहुत ही अच्छी लगतीं। वह मुझसे कहा करतीं कि तुम प्रतिदिन जाकर ज्ञान सुन आया करो और

मुझे भी सुनाया करो। मैंने एक दिन बाबा को स्वयं ही अपनी लौकिक माता के दु:ख का समाचार सुनाया। बाबा ने कहा –"अच्छा, मैं उनके पास चलता हूँ।" बस, उसी घड़ी दयालु बाबा हमारे साथ चले, हमारी दु:खी माता को शान्ति देने। हम वहाँ पहुँचे। अहा, मेरी लौकिक माता बाबा को देखते ही एक सैकण्ड में देह-भान को भूल गयीं और विष्णु चतुर्भुज का दिव्य साक्षात्कार करने लगीं। अब उनके मुख पर मानसिक शान्ति की रेखाएँ उभर आयीं और वे हाथ जोड़े बैठी ध्यान निमग्न थीं। ध्यानावस्था से नीचे उतरने पर बाबा ने उन्हें भी ज्ञानामृत पिलाकर शीतल किया। इस प्रकार, अन्य अनेकानेक नर-नारियों को भी यहाँ मन की सच्ची शान्ति मिली और ईश्वरीय ज्ञान भी प्राप्त हुआ। उन्हें दिव्य साक्षात्कार हुए और ऐसा मालूम हुआ कि भगवान् उन दु:खी माताओं को कह रहे हैं :–

क्यों हो अधीर माता गुरुकुल में आ बसा हूँ
क्यों हो अधीर माता गुरुकुल में आ बसा हूँ
संताप सख्त भारी, अबला भी देख रहा हूँ
अधर्म दूर करने, सत्य धर्म स्थापन करने
गीता की ज्ञान-वर्षा, निशि-दिन बरसा रहा हूँ

ईश्वरीय ज्ञान द्वारा समाज-सुधार

उन दिनों सिन्ध में यह रिवाज था कि किसी निकट सम्बन्धी की मृत्यु हो जाने पर माताएँ मिट्टी से सने हुए मैले-कुचैले कपड़े पहनती थीं, वे स्यापा करती थीं और रोती रहती थीं। मेरी लौकिक माता का भी यही हाल था। वे भी मैले-कुचैले कपड़े पहने रहती और रोती रहती थीं। परन्तु बाबा का ज्ञान सुनने से उनके मन पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि लोक-लाज और 'आसुरी मर्यादा' अथवा कुरीति को तोड़कर अब उन्होंने मैले-कुचैले कपड़े पहनना छोड़ दिया और वह आत्मिक सुख में रहने लगीं।

ओम् मण्डली में आने वाली अनेकानेक माताओं के जीवन में इस

प्रकार के कई सुधार हुए। उन दिनों सिन्ध में बहुत-से घरों की बहू-बेटियाँ पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के कारण फैशन करती थीं। कई तो ज़ेवरों से लदी रहती थीं और अन्य बहुत-सी जिह्वा के स्वाद के वशीभूत थीं। धनाढ्य लोगों के घर में नौकर ही खाना बनाते तथा और सब कार्य करते थे। परन्तु अब जो कन्याएँ-माताएँ ओम् मण्डली के सम्पर्क में आयी थीं, उन्होंने फ़ैशन करना तथा स्वयं को स्वर्ण-आभूषणों से सजाना छोड़ दिया और वे घर का सब काम- काज भी अपने हाथों से करने लगीं। अब उनके जीवन में सहज ही सादगी आ गई और खान-पान पर भी उनका कण्ट्रोल हो गया क्योंकि ओम् मण्डली में उन्हें कर्मेन्द्रियों को वश करने की शिक्षा मिलती थी। इस सत्संग में आने वाली माताओं का मन अब दहेज- प्रथा से तथा बनाव-श्रृंगार से उठ गया। अत: उनके जीवन में ये सुधार देख-कर, सिन्ध में, विशेष तौर पर हैदराबाद में, लोगों के मन में ओम् मण्डली के लिए एक आदर-भावना थी क्योंकि वे सोचते थे कि शताब्दियों से चली आयी कुप्रथाओं और कुरीतियों को, जिन्हें कि अन्य कोई नहीं तोड़ सका, ओम् मण्डली ने और ओम् बाबा ने उनसे माताओं को मुक्त किया है। ओम् मण्डली की यह ख्याति सुनकर और बहुत-से कुटुम्बी अपनी बहू-बेटियों और माताओं-कन्याओं को सत्संग में भेजने लगे।

ॐ राधे का शुभागमन

इस प्रकार हैदराबाद के लोग इस ज्ञान से लाभ ले रहे थे। ऐसे सुन्दर सत्संग में, आने वाली माताओं, बहनों में एक विशिष्ट कुमारी भी थीं जिनका नाम 'राधे' था। वह बाद में 'ओम् राधे' के नाम से प्रसिद्ध हुई। वह अपनी लौकिक माता के साथ ही सत्संग में और बाबा से मिलने आयी थीं। वह अपनी शोभा और गुणों से देवी-सी लगती थीं। ऐसा प्रतीत होता था कि वे किसी दिव्य लोक से उतरकर इस धरा पर आकर साकार हुई हैं। वह बहुत ही शिष्ट, प्रतिभाशालिनी एवं चमत्कारी बुद्धि वाली थीं। वे अपने कॉलेज में सदैव प्रथम श्रेणी प्राप्त किया करती थीं। वह वीणा-वादन में भी

कुशल-हस्त थीं और गायन कला में भी अलौकिक थीं। उनके स्वर में एक अनुपम दिव्यता थीं। जब उन्होंने बाबा के मुख कमल से सच्चा गीता-ज्ञान सुना तो उनका चित्त बहुत ही आनन्दित हुआ। उस आनन्द की तुलना में उन्हें सांसारिक सुख तुच्छ प्रतीत हुए। उन्होंने शीघ्र ही अपने जीवन के बारे में यह निर्णय किया कि वह आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करेंगी और स्वयं को सम्पूर्ण रीति से ज्ञानामृत पीने और पिलाने का उच्च कार्य करने में लगा देंगी। उन्होंने मन में यह निश्चय किया कि यह ज्ञान सर्वोत्तम है। दादा जी से मिल कर उन्होंने अनुभव किया कि यह कोई निराले व्यक्ति हैं जिनका मस्तक मणी की तरह चमक रहा था, जिनके नयनों में एक अलौकिक मस्ती थी और जिनके 'ओम् ध्वनि' में एक ऐसा अनुपम आकर्षण था कि सुनने वाले देह की सुधि भूलकर आत्म स्वरूप-स्थित हो जाते थे। इस प्रकार का दिव्य अनुभव करते ही राधा जी ने सिन्धी भाषा में अपने अनुभव का एक गीत बनाया जिसकी कुछ पंक्तियाँ निम्नलिखित हैं :-

''ओम् मण्डलीय माँ वञी हुते मूँ छा डिठो[1]
सखूँ मूँ वञी छा डिठो
ओम सन्दे शुद्ध मन्त्र जो, तीर सन्दो आलाप आहे
बुधन्दे मन शीतल थ्यो, फाटो मींजो गम जो चिट्ठो
सखूँ मूँ वञी छा डिठो।''

इस प्रकार उन्होंने जो गीत बनाकर अनुभव-स्थित होकर मधुर स्वर में गाया, उसे सुनते ही सभी लोग खुशी में झूमने लगे। जब ओम् राधे ने सत्संग में आना शुरू नहीं किया था तब एक बार दादा की लौकिक पत्नी

१. इसका भावार्थ यह है: ''ऐ सखियों! मैं आपको क्या बताऊँ और कैसे बताऊँ कि ओम् मण्डली में जाकर मैंने क्या देखा! सखियों, उस सुख का भी मैं कैसे वर्णन करूँ? वहाँ ओम् का जो अलौकिक आलाप हो रहा था, वह ऐसे तीर की तरह मेरे मन में लगा कि मेरा मन शीतल हो गया और मेरे ग़म के चिट्ठों का अन्त हो गया।

जसोदा को साक्षात्कार हुआ था कि राधे भविष्य में श्री लक्ष्मी बनेंगी और मैं उनको राज्य-भाग्य दूँगी। परन्तु इसका अर्थ वह नहीं समझ सकी थीं। अब जब वह ईश्वरीय सत्संग में आने लगीं तो बाबा ने समझाया कि इस विश्व ड्रामा में राधे का बहुत ही उच्च पार्ट है और कि ईश्वरीय ज्ञान तथा दिव्य-गुणों की धारणा और सहज राजयोग के अभ्यास के फलस्वरूप आने वाली सतयुगी सृष्टि में वे श्री लक्ष्मी पद प्राप्त करेंगी। ऐसा ही हुआ। वह बाबा द्वारा जो ईश्वरीय ज्ञान सुनतीं उसे धारण करके, वे ऐसी अच्छी तरह से समझातीं कि सभी को बहुत हर्ष होता। कुछ ही समय के बाद सब के मन से यह बोल निकलते थे :—

योगिन प्यारी ऋषि कुमारी, ज्ञान की बंसी बजाय
ओम् राधे विदेह-मुक्त बनाय
सरस्वती प्यारी ब्रह्माकुमारी, गीता की मुरली बजाय
महतारी ओम् के अर्थ टिकाय
मोह-ममता की फाँसी से अब जिया मेरा घबराय
पाँच विकार की आग लगी है श्वास वृथा जाय
माता गंगा-जल बरसाये
अम्बा प्यारी, ज्ञान-भंडारी, ज्ञानामृत पिलाय
ब्रह्माकुमारी सरस्वती माता, विदेह-मुक्त बनाय

लौकिक सम्बन्धियों पर भी ज्ञान-रंग

अब जैसे और लोग ईश्वरीय ज्ञान से लाभान्वित हो रहे थे, वैसे ही दादा अपने लौकिक सम्बन्धियों को भी ज्ञान के रंग में रंगने के लिए प्रत्यनशील थे क्योंकि दादा को इस उक्ति में विश्वास था कि ''खेरात घर से शुरू होनी चाहिए'' (Charity begins at home) दादा की धर्म-पत्नी और बहू तो पहले से ही धर्म-परायण और भक्ति-भाव से भरपूर थीं और अब वे दोनों ईश्वरीय ज्ञान द्वारा स्वयं को आत्म-निष्ठ बनाने के पुरुषार्थ में

तत्पर थीं; इसलिए, अब दादा का ध्यान विशेष तौर पर अपनी बड़ी पुत्री की ओर गया था। ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त होने से पहले वाले जीवन-काल में दादा ने उस पुत्री की शादी सिन्ध के एक बहुत ही नामवर और धनाढ्‌य मुखी घराने में की थी। अब ज्ञान-प्राप्ति और दिव्य-साक्षात्कारों के बाद दादा को सदा यह खयाल आता था कि -''मैंने ही अज्ञान-काल में उसे काम-वासना के सम्बन्ध में (विवाह में) दे दिया था। गोया इस जीवन में मैं ही उसके पतन का निमित्त बना था। अत: अब मेरा ही कर्त्तव्य है कि मैं उसे भी पवित्रता के मार्ग पर ले आऊँ।'' आखिर दादा का यह शुभ संकल्प पूरा हुआ। कैसे उसके बारे में दादा की उस बड़ी पुत्री, जो कि वर्त्तमान समय 'निर्मल शान्ता' के नाम से प्रसिद्ध हैं और ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की संयुक्त मुख्य प्रशासिका हैं, ने निम्नलिखित पंक्तियाँ लिखी हैं :—

''ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति से पहले भी बाबा अथवा पिता श्री का जीवन सचमुच राजाई ठाठ से और भक्ति से पूर्ण था। इसलिए बाबा ने मेरा विवाह बहुत ही धूमधाम से मुखियों के घर कराया। मेरे ससुराल में सांसारिक सुखों की कोई कमी न थी। मैं उन्हीं सुखों में ही मस्त रहती थी। मुझे भक्ति-पूजा की ओर कोई विशेष खिंचाव नहीं महसूस होता था। जब मैं कन्या थी और बाबा के पास रहती थी, तब भी बहुत ही सुखी जीवन था। बाबा किसी भी चीज़ की कमी नहीं रखते थे और बहुत ही प्यार से पालते थे। परन्तु जब पिता-श्री में परमपिता परमात्मा शिव की प्रवेशता हुई तो मैंने देखा कि अब बाबा का हमारी ओर पहले-जैसा लगाव और ध्यान न था। मुझे ऐसा लगता था कि अब हमारे बाबा एक अलौकिक मस्ती में मस्त रहते है और हमारे लिए तो एक विरक्त साधु ही बन गए हैं। अब मैं जब भी अपने लौकिक माता-पिता से मिलती तो वे दोनों मुझे ज्ञान ही सुनाते थे। उनके मन में मेरे कल्याण की भावना थी। वे सोचते थे कि यह भी ईश्वरीय मार्ग पर चल पड़े। यह क्यों ईश्वरीय आनन्द से वञ्चित रहे?

आखिर एक दिन उनकी इस शुभ भावना की विजय हुई।

उस दिन कोई त्योहार था और बाबा ने मुझे भोजन के लिए घर बुलाया था। जब मैं वहाँ पहुँची तो मैंने देखा कि वहाँ कुछ मातायें-कन्यायें आदि ज्ञान सुना रहीं थीं और उनमें से कुछेक ध्यानावस्था में रास कर रही थीं। वह रास पहले तो मुझे अच्छी नहीं लगी परन्तु मैंने देखा कि जो महिलायें रास कर रहीं थीं उन सभी से मैं अच्छी तरह परिचित थी। रास करने वाली माताओं को और उनकी अद्भुत रास को देखकर मेरे मन में यह संकल्प आया कि जिस प्रकार की दिव्य रास यह इस समय कर रही हैं, यह तो कोई इस कला का विशेषज्ञ भी शायद नहीं कर सकेगा। तब ये मातायें जिन्होंने कभी ऐसा ढंग-रंग सीखा ही नहीं वे इसे इस अलौकिक रीति से कैसे कर पा रही हैं? हो न हो इस समय यह इस संसार के भान में नहीं हैं और दिव्य-चक्षु द्वारा श्री कृष्ण और देवलोक की कोई रास देखते हुए उसी तन्मयता से रास कर रही हैं। उनकी मुद्रायें और हाव-भाव ऐसे थे कि जैसे वे सांसारिक स्थिति में हज़ार मिन्नतें किए जाने पर भी नहीं कर सकती थीं। उनके मुख पर भी शान्ति, प्रभु-प्रेम तथा सात्विकता की ऐसी रेखाएँ दीख रहीं थीं कि जिन पर मेरी दृष्टि पड़ने से मेरा मन बोल उठा कि यह अवश्य ही प्रभु-मिलन का सुख लूट कर कृतकृत्य हो रहीं हैं।

जब वे ध्यानावस्था से कुछ नीचे उतरीं तो मैंने उनका अनुभव सुनने की इच्छा प्रकट की। उनमें से जब एक को मैंने निवेदन किया तो मैंने देखा कि अभी तक वह उस मस्ती में थीं और उस सुख का रसास्वादन करते हुए वह वाणी तक नहीं लौटना चाह रहीं थीं। उन्होंने धीमी-सी आवाज़ में केवल इतना कहा था —''कल बताऊँगी।'' मुझे उसका अनुभव सुनने की इच्छा थी, इसलिए जाते समय मैंने बाबा को कहा —''बाबा, कल कार, (मोटर गाड़ी), भेज देना, मैं आऊँगी।'' बाबा ने कहा —''अच्छा बच्ची, कल देखा जायेगा।'' मुझे यह उत्तर अच्छा नहीं लगा। मैंने कहा —''बाबा, आज आप ऐसा क्यों कह रहे हैं!'' बाबा ने कहा —''बच्ची, अपना विचार

तो कार भेजने का ही है, परन्तु बच्ची, देखें कल क्या होता है।'' मैं बहुत नाजों से पली थी। कभी मैंने बाबा के मुख से ऐसा उत्तर नहीं सुना था। अज्ञानता के नशे में मुझे बहुत क्रोध आया। मुझे लगा कि मेरा अपमान हुआ है। पहले मैं बाबा से यदि आकाश के तारे भी माँगती तो बाबा उनके लिए भी 'न' नहीं करते बल्कि उन्हें भी तोड़कर ला देते। आज मैं कार भेजने के लिए कहती हूँ और बाबा उसके लिए यह उत्तर दे रहे हैं!

मैं कार में बैठकर ससुराल जा रही थी। बाबा भी मेरे साथ बैठे थे। वे मुझे ससुराल छोड़ने आए थे। उतरते समय मैंने उसी क्रोध की लहर में कहा – ''बाबा, आप कार न भेजना, मैं कल नहीं आऊँगी।'' मुझे याद है, तब बाबा ने मुस्कराते हुए कहा था –''बच्ची, क्या तुम यह जान सकती हो कि कल क्या होगा?'' मैंने कहा –''आखिर कल होगा क्या? कल देखेंगे!''

ससुराल में पहुँचकर मैं रात्रि को सो गई। कोई दो-ढाई बजे होंगे कि अचानक ही मैंने देखा कि बहुत तेज़ लाईट है और पास बाबा खड़े हैं। मैं जाग गई। मैंने सोचा कि रात्रि को मैं बाबा से बात करके लौटी थी, शायद इसी कारण ही बाबा मन के सामने आ रहे हैं। परन्तु कुछ ही समय के बाद मुझे फिर वही साक्षात्कार होने लगा। मैं समझ नहीं सकी। मैं फिर सो गई। तीसरी बार मैंने फिर देखा कि मेरे सामने बाबा खड़े हैं और उनके साथ ही श्रीकृष्ण खड़े हैं और बाबा बहुत ही आकर्षणमय रूप से, मधुर स्वर से कह रहे है –''बेटी, जागो, तुमको विश्व के कल्याण का कार्य करना है।'' बस, ये महावाक्य एक दिव्य बाण की तरह थे जो मेरे मन को अच्छी तरह लग गए। मैंने तुरन्त ही बाबा की उँगली पकड़ी। उसी क्षण मुझे अपने जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन अनुभव हुआ और न चाहते हुए भी मेरे मुख से ये शब्द निकल पड़े –''बाबा, आप में तो सचमुच भगवान् हैं। हमने आपको नहीं जाना था। अब से लेकर आप मुझे जैसा कहेंगे, मैं वैसा ही करूँगी।''

प्रात: होते ही यह दिव्य दृश्य बार-बार मेरे सामने आने लगा और मेरे मन में यह ईश्वरीय आकर्षण बना रहा कि बाबा से जाकर मिलूँ। मैं जल्दी-जल्दी तैयार होने लगी। परन्तु मुझे शारीरिक कष्ट ऐसा हुआ कि मैं जाना चाहते हुए भी न जा सकी। तब मुझे बाबा के ये शब्द याद आये – ''बेटी, कल क्या होता है, वह देखा जायेगा।'' वह शब्द मेरे कानों में गूँजने लगे और मैंने सोचा कि हम बाबा के साधारण रूप को देखकर उन्हें ठीक-ठीक पहचान नहीं पाते हैं। उन द्वारा जो शक्ति कार्य कर रही है, उसे हम जान नहीं पाते हैं। अस्तु, सायंकाल को बाबा स्वयं ही वहाँ मेरे पास आये। बस, उन्हें देखते ही मेरी आँखों से प्रेम के, पहचान के और पश्चात्ताप के आँसू बहने लगे और उनसे गले मिलकर मैं बोल उठी –''बाबा, अब मैंने आपको पहचाना है। अब आप जो-कुछ भी कहेंगे,सो मैं करूँगी।'' बस, उस दिन से मेरे जीवन को एक नया मोड़ मिला।

दादा काश्मीर में

इस प्रकार कईयों के जीवन में परिवर्तन लाने के बाद, दादा एकान्त के लिए कश्मीर में चले गये[1] अपने लौकिक परिवार को भी वे साथ में ले गए। जब बाबा काश्मीर में थे तो उनके कुछ मित्र-सम्बन्धी तथा अन्य मातायें-कन्यायें, जिनमें आत्म-जागृति आई थी, बाबा के उसी पुराने मकान में आते रहे और आपस में ज्ञान-वार्त्तालाप भी करते रहे। वे बाबा के साथ पत्र-व्यवहार भी करते रहे। उनमें से ध्यानी, किकनी, रुक्मिणी, गोपी और राधे के नाम विशेष तौर पर उल्लेखनीय हैं। अब बाबा उनका काश्मीर से पत्रों के रूप में ज्ञान का अमूल्य खज़ाना भेजते रहते थे। बाबा एक दिन एक माता के नाम पत्र भेजते तो दूसरे दिन दूसरे के नाम। जिसके नाम पर पत्र आता था वह बहुत ही हर्षित होती थी और दूसरों को भी वह पत्र सुना-सुनाकर अतीन्द्रिय सुख देती थी। वह उस पत्र को विशेष तौर पर अपने

१. यह बात जुलाई, १९३६ की है।

नाम आया समझकर, उसे एक अनमोल निधि मानती थी और उसमें लिखित शिक्षाओं को अपने जीवन में अपनाने का भरसक प्रयत्न करतीं। उस समय उस 'वाणी' या ज्ञान-पत्र को सत्संग की हरेक बहन अपने पास कापी में नोट करती रहती थी और उनको पढ़कर आनन्द का अनुभव करती रहती थी। उन सभी को उस समय गोपियों-जैसा सुख अपने जीवन में प्राप्त होता था। कभी ज्ञान की मुरली की याद, कभी प्रेम के आँसू, इस प्रकार भिन्न-भिन्न प्रकार से निराले अनुभव होने लगे। ऐसी अवस्था में उनको सांसारिक पदार्थों का सुख तुच्छ महसूस होने लगा और उनका नया जीवन शुरू हुआ। सब को ऐसा महसूस होता था जैसे कि वे निराली मस्ती में झूम रही है।

काश्मीर में ज्ञान-मंथन

काश्मीर में दादा एकान्त में ईश्वरीय चिन्तन में लवलीन रहते थे। वे कुछ समय ज्ञान-युक्त पत्र लिखने में व्यतीत करते और कुछ समय वहाँ साथ रहे हुए सम्बन्धियों को ईश्वरीय ज्ञान देते थे। अतः उनकी धारणा भी अब अधिकाधिक ऊँची उठ रही थी। वहाँ ज्ञान-लाभ के बारे में ब्रह्माकुमारी निर्मल शान्ता जी (दादा की लौकिक पुत्री) लिखती है :–

''मैं काश्मीर में बाबा के साथ गई थी। वहाँ भी बाबा हमें ज्ञान सुनाते थे। उसे सुनकर मैंने निर्णय किया कि अब तो मुझे प्रभु की सच्ची गोपी बनना है और अपने जीवन को पवित्र बना कर विश्व के कल्याण के लिए कार्य करना है। दिनोंदिन मुझमें ज्ञान की मस्ती बढ़ती जाती थी। अब मेरी बुद्धि में ज्ञान ही समाया हुआ था। एक दिन की बात है कि मैं घर से बाहर कहीं जा रही थी कि वहाँ काश्मीर में आये हुए हमारे एक परिचित व्यक्ति, जिनका नाम रीझूमल था, ने मुझसे एक पहाड़ी का रास्ता पूछा। मैंने ज्ञान की खुमारी में उनसे कहा –''आप पहाड़ी का रास्ता पूछते हो या परमधाम का? मेरी ऐसी बातें सुनकर उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ और उस दिन से लेकर वे भी हमारे यहाँ ज्ञान सुनने के लिए आने लगे।''

उन्हीं दिनों मैं बाबा के साथ अमरनाथ भी गयी थी। हम लोग घोड़ों पर सवार थे। हम रास्ते में ही थे कि बहुत बड़ा तूफ़ान आया। बहुत-से लोग तो रास्ते में ही लौटकर वापस चले गए थे परन्तु बाबा नहीं रुके। उन्होंने कहा कि हमें अपनी मंज़िल पर जाना है। मैंने देखा कि बाबा की प्रतिज्ञा हमेशा दृढ़ हुआ करती थी। वे बहुत साहसी थे और मार्ग की कठिनाईयों से कभी न घबराते थे। आखिर हम वहाँ पहुँचे। हालाँकि उस दिन बाबा बहुत साधारण वेश-भूषा में थे, तो भी पुजारी लोगों ने बाबा को देखकर समझा कि वह कोई राजा हैं। बाबा ने उनसे पूछा कि वह बर्फ़ का लिंग कैसे बनता है? पहले तो वे यह भेद बताने में आनाकानी करने लगे परन्तु उन्होंने दादा को कोई राजा समझकर आखिर सब भेद बता ही दिये थे।''

हैदराबाद में सत्संग में दिनोंदिन वृद्धि

दादा की अनुपस्थिति में, उनके ही मकान में, अपने आप ही सत्संग की स्थापना हो गई। उनके मित्र-सम्बन्धी और आने वाले कुछ नर-नारी इस ज्ञान से इतने प्रभावित हो गये थे कि उनके द्वारा घर-घर में इस सत्संग की महिमा की आवाज़ पहुँच गयी थी। शहर के लोगों ने देखा कि इस सत्संग में जो कोई भी आता है, उसके जीवन में विशेष परिवर्तन आ जाता है। वह अशुद्ध खान-पान को छोड़ देता है और उसकी अन्य बहुत-सी गन्दी आदतें भी मिट जाती हैं। जो माताएँ घर में पहले झगड़ा करती थीं, अब वे शान्तिपूर्ण व्यवहार करती थीं। लोगों ने यह भी सुना था कि यहाँ साक्षात्कार भी सहज ही होता है। इसलिए लोग इस सत्संग की ओर आकृष्ट थे। अत: दिनोंदिन सत्संग में आने वालों की संख्या बढ़ने लगी। अब लगभग ३०० मातायें-कन्यायें तथा भाई प्रतिदिन आने लगे । वहाँ प्रोग्राम यह चलता था कि दादा काश्मीर से जो ज्ञान-युक्त गीत बनाकर भेजते थे, पहले तो सभी मिल-जुलकर वह गीत गाते थे। फिर, दादा जी के ज्ञान-पत्र जिस माता के नाम आये होते थे, वह उनमें समाए हुए ज्ञान

को बुद्धि में धारण करके, आत्मा के स्वरूप में टिक कर, उस ज्ञान के आधार पर इतना सुन्दर भाषण किया करती थी कि सुनने वाले लोग चकित हो उठते थे कि उसमें ज्ञान की ऐसी ऊँची बातें बोलने की इतनी शक्ति कहाँ से आ गयी! इतना ज्ञान इसने कैसे सुनाया! अवश्य ही कोई ईश्वरीय शक्ति है जो ऐसी अबला नारियों को ज्ञान-बल देकर इतना योग्य बना रही है।

शुरू से ही ज्ञान का कलश कन्याओं-माताओं के सिर पर रखने से उनमें एक अलौकिक शक्ति आने लगी। जो कल तक अपने जीवन से असन्तुष्ट थीं और बोलने में हिचकिचाती थीं, आज वे निःसंकोच ज्ञान-गजगोर करती थीं। बारह-चौदह वर्ष की छोटी-छोटी कुमारियाँ भी ऐसा सुन्दर भाषण, विकारों को जीतने के विषय पर अथवा मन को तथा इन्द्रियों को वश करने के विषय पर किया करती थीं। उस सत्संग की यही विशेषता थी कि जब अशरीरी रूप में स्थित होकर वहाँ जाने वाले नर-नारी ज्ञान सुनते थे तो वे शान्तिधाम का तथा वैकुण्ठ का अनुभव करते थे।

दादा (ओम् बाबा) जब काश्मीर से लौटे तो उन्होंने देखा कि सत्संग में आने वालों की संख्या में काफी वृद्धि हो गयी है। कन्यायें, मातायें और पुरुष बहुत ही उमंग और उल्लास में ज्ञान-अमृत पीकर अपना जीवन पवित्र और सुख-शान्तिमय बना रहे हैं। बहुत लोगों को तो घर बैठे ही दादा का साक्षात्कार हुआ था और उस अवस्था में अव्यक्तमूर्त्त प्रभु ने उनसे कहा था कि ''मैं अमुक स्थान पर आकर ईश्वरीय ज्ञान दे रहा हूँ, आप वहाँ मेरे पास आओ।'' इस साक्षात्कार से पहले उन लोगों को दादा का या ओम् मंडली का किसी तरह का कोई भी परिचय नहीं होता था। इसी साक्षात्कार के आधार पर वे 'ओम् मंडली' में आ पहुँचते थे। वे आते ही दादा से कहते —''आपने ही तो हमें दिव्य साक्षात्कार कराके यहाँ बुलाया है.....।'' दादा सोच में पड़ जाते। इन सभी बातों को देखकर दादा को अन्तःप्रेरणा हुई कि यह अव्यक्त एवं गुप्त परमपिता परमात्मा का कार्य चल रहा है। वही स्वयं

उन द्वारा, अर्थात् दादा द्वारा, और माताओं द्वारा, यह कार्य करा रहा है और आगे चलकर मनुष्यमात्र के कल्याण का कोई विशेष कार्य कराना चाहता है।

हम बता आये हैं कि सत्संग में आने वाले कई भाई-बहिन ऐसे थे जिन्होंने दादा जी की अनुपस्थिति में आना शुरू किया था। अत: जब दादा काश्मीर से लौटे तो उन भाई-बहनों ने दादा को पहली बार देखा। अहा! प्रथम मिलन में ही उन सभी को ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि वे दादा के अलौकिक बच्चे अथवा बच्चियाँ हों। उन्होंने देखा कि बाबा का शरीर एक न्यारा शरीर है। वस्त्र बिल्कुल सफ़ेद हैं, मस्तक ज्ञान-सूर्य के प्रकाश से खूब चमक रहा है। नयन तेजोमय दिखाई दे रहे हैं जैसे कि उनसे ज्योति की किरणें निकल रही हों। बाबा की उपस्थिति से, देखने वालों के मन पर शीतलता का प्रभाव पड़ रहा होता था, मानो कि दादा के मन में और उनकी कर्मेन्द्रियों में अथाह शीतलता हो। दादा के शरीर की बनावट ऐसी है जैसे कि श्री नारायण साधारण रूप में खड़े हों। अन्य पुरुषों की तुलना में उनकी कान्ति ऐसी दिखाई देती जैसे कि वे सितारों के बीच चाँद हो।

बाबा को देखकर अथवा उनकी अलौकिक दृष्टि पड़ने से कुछ ही क्षणों में कई भाई-बहिन दिव्य दृष्टि पाकर श्रीकृष्ण का तथा वैकुण्ठ का साक्षात्कार करते थे और उस वृद्ध शरीर में श्रीकृष्ण को देखकर वे उन्हें जोर से पकड़ लेते। बहुत बार बाबा उन बच्चियों से छुटकारा पाने के लिए वहाँ से हट जाते और छिप जाते परन्तु जो बहनें अथवा भाई दिव्य दृष्टि द्वारा साक्षात्कार कर रहे होते थे, वे चर्म-चक्षु बन्द होने पर बाबा को दिव्य-चक्षु द्वारा ढूँढ लेते और अतीन्द्रिय सुख में फूले न समाकर श्रीकृष्ण के अव्यक्त रूप को देखते हुए रास रचाते रहते थे। आनन्दमय अवस्था में वे कई बार ये मधुर सामूहिक गीत भी गाते थे :—

मोहे ज्ञान के झूले झुलाये कोई
मोहे प्रेम के झूले झुलाये कोई

मेरा जाने-जिगर है योगी सोई
मीरा-सम हूँ मैं प्रेम-प्यासी
दीदार खातिर मैंने लोक-लाज खोई
मैंने दीदार खातिर लोक-लाज खोई
मोहे ज्ञान के झूले झुलाये कोई

बचपन में भी दिव्य साक्षात्कार

छोटी आयु के बच्चों को और बच्चियों को भी साक्षात्कार होते थे। इस विषय में ब्रह्माकुमारी हृदयमोहिनी जी, जोकि वर्तमान समय देहली में ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की दिल्ली ज़ोन की इंचार्ज हैं और जिन्हें कि अब भी दिव्य साक्षात्कार होते हैं, लिखती हैं :—

एक दिन की बात है कि 'ओम् बाबा' को हमारे लौकिक मित्र-सम्बन्धियों ने अपने घर में सत्संग के लिए निमन्त्रण देकर बुलाया था। कृपालु बाबा अपने बच्चों के कहने पर आ पधारे। रोज ही सायँकाल को सत्संग होता था जहाँ कुछ ज्ञान-युक्त गीत, ओम् की ध्वनि और व्याख्यान चलते रहते थे। मेरी लौकिक माता[1] को ईश्वर-प्राप्ति की बहुत ही तीव्र इच्छा थी। वह प्रति-दिन सत्संग में जाया करती थीं। मैं तब लगभग नौ वर्ष की थी और घूमने-फिरने तथा पढ़ने में ही मग्न रहती थी। इसलिए धर्म की बातों की ओर मेरा ध्यान नहीं गया था। मैं माँ के साथ ही दो-तीन बार सत्संग में जाती रही परन्तु वहाँ भी खेल-कूद में ही सत्संग का समय व्यतीत कर देती थी। परन्तु एक दिन विचित्र ही बात हुई।

मैं सत्संग के स्थान पर बैठे-बैठे अचानक ही ध्यानावस्था में चली गई। मेरे आसपास जो मातायें बैठी थीं, उन सबने यह सोचा कि शायद यह सो रही है। परन्तु काफ़ी समय से एक ही आसन पर स्थिर बैठे देखकर

१. ब्रह्माकुमारी धैर्य पुष्पा (आल-राउण्डर), देहली ज़ोन की इन्चार्ज थी।

कुछेक का मेरी ओर ध्यान गया। (जब मैं ध्यानावस्था से उतरी, तब ऐसा उन्होंने मुझे बताया)। मैं तो इस संसार से परे दूसरे लोक का अनुभव कर रही थी। मैंने क्या देखा कि एक बहुत बड़ा हाल है जिसकी सजावट ऐसी सुन्दर थी कि इस कलियुगी संसार में वैसी मिलना असम्भव है। ऐसे सुन्दर हाल में लगभग १० वर्ष की आयु वाले सजे-सजाये, मोहिनी-मूर्त श्रीकृष्ण अपनी अंगुली से मुझे इशारा कर रहे थे कि आओ, मेरे साथ रास करो।

जब मैं ध्यानावस्था से उतरी और स्वयं को शरीर में महसूस करने लगी तो मैं अपने आसपास कुछ माताओं को बैठी देखकर घबरा गई और खूब रोने लगी। मैंने सोचा कि पता नहीं मुझे क्या हो गया है कि ये सब मुझे देख रही हैं। मेरी लौकिक माता और अन्य संम्बन्धियों ने बहुत प्यार से मुझसे पूछा –''तुमने क्या देखा?'' मैंने कभी भी श्रीकृष्ण की मूर्ति की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया था अत: मुझे उनके बारे में यह ज्ञान नहीं था कि यह कौन है। अतएव मैं यह वर्णन नहीं कर सकती थी कि किसको देखा?'' मैंने अनिश्चित-सी भाषा में यही कहा कि –''कोई बहुत सुन्दर और बहुत ही सजा हुआ, बहुत ही अच्छा था और मुझे ऐसे-ऐसे बुला रहा था।'' बचपन की अनजान-सी अवस्था में मैंने कुछ वर्णन किया।

परन्तु मेरी लौकिक माता गीता-पाठी थीं । वह समझ गई कि मुझे श्रीकृष्ण या किसी देवता का ही साक्षात्कार हुआ है। इसी कारण, वह मेरे सामने श्रीकृष्ण और श्रीराम के चित्र लाकर मुझे दिखाने लगीं और पूछने लगीं –'क्या यह थे?' परन्तु मेरे लिए कठिनाई यह थीं कि चित्रकार इन देवताओं के जो चित्र बनाते हैं, वे कोई वास्तविक चित्र नहीं होते हैं। चित्रकार तो अपना भाव प्रगट करने के लिए जैसा बना सकते हैं, वैसा वे बनाते हैं। उन चित्रकारों ने साक्षात्कार तो किया नहीं होता, इसलिए वे सच्चा चित्र तो बना नहीं सकते। अब मुझे दिव्य-दृष्टि द्वारा वास्तविक रूप का जो साक्षात्कार हुआ था उसकी तुलना में तो ये चित्र बिल्कुल ही नीरस और कृत्रिम लगते थे। अत: मेरे लिए तो उस दिन यह कहना कठिन था

कि यह श्रीकृष्ण का चित्र है। हाँ उसके पोज, (Pose), उसकी मुरली और वस्त्रों के चित्र से थोड़ा-सा मेल था, इसलिए मैंने कहा कि -"हाँ, मैंने ऐसा देखा था, परन्तु वह इससे बहुत ही सुन्दर था और सजा हुआ था, आकर्षणमूर्त भी था। उसकी तुलना में यह चित्र तो कुछ भी नहीं है।"

इस प्रकार के साक्षात्कार और बहुत-से बच्चों को तथा बड़ी आयु वाले लोगों को भी होते थे।

सभी के लिए पितृवत प्रेम

इस प्रकार के गीत गा-गाकर सभी गोप-गोपियाँ अथवा सत्संगी भाई-बहन खुशी में झूमते रहते थे। कई बार जब दादा सत्संग पूरा करके उठते थे तो सभी बहनें-मातायें और भाई उठकर दादा के सामने खड़े हो जाते थे। दादा की पवित्र, पितृवत दृष्टि सभी आत्माओं पर पड़ती और सभी के प्रति —'बेटी, आ बच्ची'' - ये मधुर शब्द निकलते थे। सभी उपस्थित-जन अनुभव करते थे जैसे कि वे आत्मा के रूप में, आत्मा के पिता, जगत्-पिता अथवा धर्म के पिता के सम्मुख खड़े हैं। सभी के मन में बच्चों की तरह स्नेह का उद्रेक होता और उनकी अन्तश्चेतना बोल उठती कि ये हमारे बाबा हैं। वे सभी उन्हें 'ओम् बाबा' कह कर पुकारते थे।

कई बुजुर्ग और मुखी या चौधरी लोग जोकि बाबा को पहले-से ही जानते थे, वे भी जब बाबा के सम्मुख आते तो ऐसा अनुभव करते जैसे कि बिछुड़े हुए बच्चे बाप से मिल रहे हों। कई मातायें-बहनें अथवा पुरुष जो अब पहली बार ही इस सत्संग में आकर सम्मिलित होते , उनकी यद्यपि पहले से ही बाबा से जान-पहचान नहीं होती थी तो भी अब वे जब बाबा को देखते तो उनकी आँखों से प्रेम के आँसू टपक पड़ते और सहसा उनके मुख से, नहीं-नहीं जिगर से —'बाबा,बाबा' प्रेम से भीगे हुए ये शब्द निकल पड़ते।

बाबा कहते – ''ओ बेटी !ओ बेटा! बाबा तुम्हारे सामने खड़ा बोल रहा है। बच्ची, क्या कहती हो?''

वह कहती –''बाबा आप कहाँ थे, क्या आप हमको भूल गये थे? आप इतने वर्षों के बाद आकर हमें मिले हो। बाबा, ओ बाबा, हम कभी भी आपको नहीं भूलेंगी। बाबा, आप जल्दी से जल्दी हमें इस गन्दी, विकारी दुनियाँ से कहीं बहुत दूर ले चलो।'' उन्हीं दिनों एक ग्रामोफोन रेकार्ड चला था जिसमें भरा हुआ गीत कुछ इस प्रकार था :–

इस पाप की दुनियाँ से दूर कहीं ले चल
चित्त चैन जहाँ पाय, ले चल वहीं ले चल
लोगों की आवाज़ों से, दुनियाँ की निगाहों से
आहा और कहीं ले चल, अब जल्दी वहीं ले चल
इस पाप की दुनियाँ से अब दूर कहीं ले चल, अब.....। जब यह गीत सत्संग में आने वाली माताओं-कन्याओं ने सुना तो उन्हें ऐसा लगा कि उनके ही लिये परमपिता परपिता परमात्मा ने किसी द्वारा वह रेकार्ड बनवाया है। यह गीत गा-गाकर वे बाबा से कहतीं –''बाबा, बस, अब हमें अपने साथ शान्तिधाम ले चलो...।'' बाबा बहुत प्यार से कहते –''बेटी, ओ मीठी बेटी, देख तुम्हारे लिये बाबा क्या सौगात लाया है।''

ये मधुर बोल सुनते हुए गोप-गोपियाँ स्वयं को अन्त:वाहक शरीर में अनुभव करते तथा दिव्य चक्षु द्वारा वैकुण्ठ का साक्षात्कार करके अपूर्व हर्ष को प्राप्त होते थे। वे गद्‌गद् हृदय से हँसते थे और स्वयं को परम भाग्यशाली अनुभ्व करते थे और कहते थे –''ओम् बाबा, अब हमने सुखधाम की राह देख ली है। बाबा, अब हम शान्तिधाम में पहुँच गये हैं। बाबा, अब हम इस पतित एवँ विकारी दुनियाँ में, इस मृत्युलोक में नहीं जावेंगें...।'' इस अवस्था में उन्होंने एक मधुर गीत बनाया जिसे वे मिलकर सभा में भी गाते थे । गीत को गाते और सुनते हुए उन्हें ऐसा लगता कि वे कुँजों की तरह इस संसार से उड़कर बहुत ऊपर जा रही हैं, निज आत्माओं के धाम को। गीत के कुछ पद निम्नांकित हैं :–

उड़ी ओम में जाती हैं ये गातीं ब्रह्मा-ज्ञान

तन-मन-धन की सुध बिसराकर, जाती हैं निजधाम
ज्यों थककर चिड़ियाँ संग-संग उड़ती जाती हैं निज थाँव
त्यों सखियाँ थककर जन्म-मरण से होती हैं उपराम
मैं दुखियारी भटक रही थी, भूली थी निजधाम
ॐ मंडली ने लक्ष्य बताकर, मिलाया मुझे घनश्याम
अमृत प्याला भर-भर पीती, नित् करती ज्ञान- स्नान
ज्ञान अविनाशी गाते- गाते चली जाती सुखधाम

बस, इस सुख-शान्तिमय जीवन का अनुभव करते-करते वे शरीर की सुध-बुध भूल जाती थीं। वे सारा दिन एक अलौकिक मस्ती में रहती थीं। उनके जीवन में सुख और परिवर्तन देखकर, शहर के काफी बजुर्ग पुरुष भी अपने पुत्रों, पुत्रियों आद के साथ, अर्थात् समस्त कुटुम्बी सत्संग सुनने आते थे। उनमें भाई रीझूमल जी, भाई रत्नचंद जी, भाई दयाराम जी और, बाद में, भाई विश्व किशोर जी भी थे, जो कि हैदराबाद के प्रसिद्ध व्यक्तियों में से थे और सपरिवार ज्ञान-रत्नों की खुशी में और ज्ञानामृत तथा पवित्रता के नशे में, उमंग से चल रहे थे। इस सत्संग में आने वाले बहनों-भाइयों ने यह अनुभव-युक्त गीत बनाया था और इसे वे सभी मिलकर गाया करते थे :–

ज्ञान नगर में बिताऊंगी, तज के पाँच विकार,
प्रेम नगर में बिताऊंगी, तज के अशुद्ध विचार
ज्योति-नगर में बनाऊं घर, तज के देह-अहंकार
ज्ञान के गहने, ज्ञान के भूषण, ज्ञान ही सब श्रृंगार
अहा हा ....
ज्ञानी माता, ज्ञानी पिता, ज्ञानी है कुटुम्ब परिवार
ज्ञान के संग बिताती हूँ जीवन, योग ही प्राण आधार

अथवा

ज्ञान से है इस जग में आनन्द-निराला
ज्ञानी को होता है, अनुभव सुख का
ज्ञान-स्वरूप युगल की रीति है न्यारी
परमपिता है सच्चा सद्गुरु, शान्ति का भंडारी
सखी पीओ सदा तुम ज्ञान-अमृत का प्याला
ज्ञान से है इस जग में आनन्द निराला

उस समय सभा की शोभा ऐसी होती थी जैसे कि इन्द्र सभा लगी हो अथवा हँसों का झुण्ड बैठा हो। सभी कन्यायें-मातायें, जो पहले बहुत ही फैशनेबल थीं, श्रृंगार-प्रिय थीं, हीरे-जवाहिरात से सजी रहती थीं और अशुद्ध खान-पान वाली थीं, अब वे इस पवित्र गीता-ज्ञान को सुनकर अपने आप ही पवित्रता के रास्ते पर आ रहीं थीं। बाबा अथवा पिता-श्री के जीवन का सभी पर इतना गहरा प्रभाव था कि उनके प्रेक्टिकल जीवन से प्रेरणा लेकर उनमें भी त्याग की भावना आ गई थी। अब उन सबका जीवन सादा, विचार उच्च, बोल मधुर, दृष्टि ज्ञान-युक्त और वृत्ति सात्विक होने लगी थी। उन्होंने पवित्र जीवन का अच्छा रस लिया था। इस लिए अब उन्हें काम-वासना वाला जीवन दुर्गन्धपूर्ण, विषैला अथवा पलीद जीवन लगता था। ज्ञानामृत के घूँट भर-भर पीने से उन्हें एक नया जीवन मिला था जिसका निराला ही सुख था अत: उन्होंने मन ही मन प्रण किया था कि अब ब्रह्मचर्य व्रत में रहकर, प्रभु को मन में बसाकर, हम योगियों-जैसा जीवन व्यतीत करेंगें। घर में रहेंगे परन्तु कमल पुष्प के समान जीवन बनायेंगे, हम विकारों की कीच से ऊपर उठकर रहेंगे।

माताओं-कन्याओं की सर्वोत्तम सेवा में सर्वस्व अर्पण

अब बाबा ने जब सत्संग अथवा ईश्वरीय ज्ञान की क्लास का यह विकसित रूप देखा और परमपिता की करामात देखी तो उन्होंने ओम् राधे को इस सत्संग अथवा ईश्वरीय विद्यालय के लिए अवैतनिक (Honorary)

इंचार्ज नियुक्त किया और उनके साथ आठ-दस अन्य ज्ञान-निष्ठ कन्याओं-माताओं की एक कार्यकारिणी समिति (Managing Committee)[1] बनाकर अपना समस्त धन और अपनी सम्पत्ति माताओं की उस कमेटी को अर्पित कर दी। इस विषय में उन्होंने लिखा कि -''मैं अपना सब जर (सोना), जेवर, जमीन, मुतहरक और गैर मुतहरक जायदाद (चल और अचल सम्पत्ति) इन माताओं की कमेटी को समर्पित करता हूँ ताकि यह इस ईश्वरीय सेवार्थ कार्य में लगाई जावे।[2] अत: अब मातायें ही सारे कार्य को सम्भालने लगीं।

इस सत्संग का नाम 'ओम्-मण्डली' क्योंकर पड़ा?

अब यह सत्संग बहुत ही उन्नति को प्राप्त होने लगा। लोगों में यह 'ओम्-मण्डली' के नाम से विख्यात हो गया क्योंकि यहाँ 'ओम् की ध्वनि' की जाती थी और उसके अर्थ-स्वरूप में स्थित किया जाता था।

काश्मीर से लौटने के बाद बाबा ने देखा कि अनेकानेक माताओं-बहनों तथा पुरुषों के जीवन में ईश्वरीय शक्ति की झलक आ रही है। उनके जीवन में पवित्रता और आनन्द आ गए हैं। यह देखकर बाबा को बहुत खुशी हुई। उन्हें यह देखकर आश्चर्य भी होता था कि किस प्रकार उन्हें निमित्त बनाकर गुप्त रूप में परमपिता परमात्मा स्वयं नर-नारी का जीवन ज्ञानमय बनाने का कार्य कर रहे हैं। परमात्मा के सिवा किसी मनुष्य का तो यह कार्य हो ही नहीं सकता था। वही तो उनके शरीर के माध्यम से आत्माओं की जन्म-जन्मान्तर की ज्ञान-पिपासा बुझा रहे थे।

अब परमपिता परमात्मा शिव, अर्थात् गीता के भगवान् ने उनके मुख कमल द्वारा ५००० वर्ष पहले की तरह ये महावाक्य उच्चारण किए कि — ''काम विकार नरक का द्वार है।'' वे उन्हें समझाते थे कि ब्रह्मचर्य के

---

१. यह कमेटी अक्तूबर, १९३७ में बनाई गई।
२. १७ फरवरी १९३८ को लिखा।

बिना ज्ञानामृत की पूरी धारणा नहीं हो सकती। 'काम विकार' को ही ग्रन्थों में 'मूत पलीती' कहा गया है। यही हलाहल विष है जोकि आत्मा को पतन के गर्त में धकेलता है। सत्संग में आने वाले नर-नारी ने ज्ञानामृत का रस चख लिया था, उन्हें पवित्र जीवन का आनन्द मिल चुका था, अत: उन्होंने तो स्वत: ही मन में सोच लिया था कि अब वे पवित्रता पूर्वक जीवन व्यतीत करेंगी। उन्हें काम विकार वाला जीवन तो अब बिल्कुल गन्दा लगता था और वासना-भोग उन्हें मृत्यु से भी अधिक दु:खदायक महसूस होता था।

ज्ञानामृत पीने और पिलाने के लिए स्वीकृति पत्र लाने का आदेश

अब परमपिता परमात्मा शिव, जोकि तीनों कालों को जानते हैं, ने 'ओम् बाबा' के तन में प्रवेश करके, सभी को यह निर्देश दिया कि वे अपने पिता, पति, अभिभावक अथवा संरक्षक से पत्र ले आयें जिसमें यह लिखा हो कि वे अपनी पुत्री, बहू अथवा पुत्र को ओम् राधे के पास जाकर ज्ञानामृत पीने- पिलाने तथा अपने जीवन को पवित्र बनाने के लिए खुशी से छुट्टी देते हैं। जिन माताओं, कन्याओं अथवा बालकों के माता-पिता या परिवार के सभी जन आते थे, उन्हें तो ऐसा पत्र लिखा लाने में कोई कठिनाई न हुई परन्तु जिस-जिस महिला का पति इस सत्संग में नहीं आता था तथा जिस-जिसके अभिभावक का खान-पान, व्यवहार और संस्कार तमोगुणी, भौतिकवादियों-जैसा या पाश्चात्य सभ्यता से पूरी तरह रंगा हुआ था, उन्हें ऐसा पत्र लाने में बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ा। एक ओर तो वे नित्य ज्ञानामृत पिये बिना न रह सकती परन्तु दूसरी ओर उन्हें पत्र भी न मिलता था। यही अवस्था नाबालिग कन्याओं तथा कुमारों की भी थी। परन्तु प्राय: हरेक ने अपनी उच्च धारणाओं, अपने मनोपरिवर्तन, सादा जीवन आदि-आदि का प्रभाव डालकर ऐसा पत्र ले ही लिया ताकि उन्हें भी ऐसे उत्तम सत्संग में प्रवेश मिल सके। वास्तव में कुछ लोग यह समझ ही नहीं सकते थे कि यह किस प्रकार का सत्संग है। एक ओर तो वे वहाँ जाने

वाले नर-नारियों के जीवन में आशातीत परिवर्तन देखकर बहुत खुश भी होते और आश्चर्यचकित भी होते। दूसरी ओर वे वहाँ दिव्य साक्षात्कारों की भरमार देखकर इस सोच में पड़ जाते कि ऋषियों -मुनियों को भी साक्षात्कारों का होना बहुत कष्ट-साध्य था, यहाँ छोटे-बड़े सभी लोगों को सहज ही श्रीकृष्ण का साक्षात्कार, वैकुण्ठ का साक्षात्कार तथा कलियुगी सृष्टि के महाविनाश का साक्षात्कार कैसे हो जाता है! वे स्वयं आहार-व्यवहार की शुद्धि तथा ब्रह्मचर्य के नियमों का पूरी तरह पालन करने को उद्यत न होते और ज्ञान के रहस्यों को अपने मलिन विचारों के कारण समझ भी न पाते। इसलिए वे रुकावट भी डालते । उनमें से कई लोग इस पत्र के कारण सम्पर्क में आते और उनके अपने जीवन में भी सहज ही पलटा आ जाता। इस विषय में ब्रह्माकुमारी हृदय पुष्पा जी ने अपना अनुभव इस प्रकार व्यक्त किया है जोकि पढ़ने के योग्य है :—

''एक दिन बाबा ने कहा कि आप सभी अपने लौकिक माता-पिता से या सास-ससुर से चिट्ठी ले आओ जिसमें लिखा हो कि हम अपनी बच्ची या स्त्री को खुशी से छुट्टी देते हैं कि वह ओम् मंडली में ओम् राधे के पास ज्ञानामृत पीने और पिलाने जावे, अत: मैंने भी अपने लौकिक पिता से इसके लिए आवेदन किया। वह मांसाहारी थे, शराब खूब पीते थे तथा उनके संस्कारों का धर्म की ओर झुकाव नहीं था। वह यह सुनकर बहुत ही गरम हो गए और बोले कि — ''मैं ऐसा नहीं लिख दूंगा।'' मैं सोच में पड़ गई कि अब क्या होगा? बाबा चिट्ठी के बिना सत्संग में प्रवेश नहीं देंगें और पिता जी लिखकर नहीं देते। मैं तो ज्ञानामृत के बिना वैसे ही तड़प कर मर जाऊँगी जैसे मछली जल के बिना तड़प कर मर जाती है। मैं मन ही मन प्रभु को याद करके कहती थी कि ''प्रभु, आप ही मेरी सहायता करो।'' आखिर एक दिन मैंने लौकिक पिता को कहा कि —''आपको बाबा ने याद किया है।''

यह बात सुनते ही हमारे पिता का मन मोम की तरह पिघल गया। वह

कहने लगे –''दादा इतने बड़े व्यक्ति हैं,यदि वह मुझे बुलायें तो ऐसा नहीं हो सकता कि मैं न जाऊँ। मैं आज ही आपके साथ चलता हूँ।'' मेरे पिता जी एक बहुत बड़े कुल के थे और मेरे ससुराल का भी हैदराबाद में अच्छा ही मान था, परन्तु दादा की ओर से मिलने का सन्देश सुनकर, उन्हें सम्मान देते हुए मेरे ''लौकिक पिता मेरे साथ चले। मैंने बाबा को जाकर समाचार दिया है कि लौकिक पिता आये हैं। साथ ही यह बताया कि वे कुछ दिन पहले मुझे पत्र लिख देने से बिल्कुल इन्कार करते थे।'' बाबा उनसे मिले।

बाबा ने उनसे कहा –''क्या आप जानते हैं कि आपकी यह पुत्री यहाँ क्यों आती है? आज इसके जीवन में जो शान्ति है, वह इसे कैसे मिली?'' बाबा ने उन्हें थोड़ा ज्ञान दिया और फिर 'ओम् राधे' को कहा कि वह उन्हें और अधिक विस्तार से ज्ञान स्पष्ट करे।

ओम् राधे ने उन्हें समझाया था कि –''आप चेतन आत्मा हैं। यह शरीर आपका एक मन्दिर है। क्या मन्दिर में कभी माँस (Mutton) का भोग लगाया जाता है? कभी मूर्तियों या जड़ चित्रों को शराब की भेंट करते हो?....'' इस प्रकार, ओम् राधे जी ने उन्हें ऐसे प्रभावशाली तरीके से समझाया कि उनका जीवन ही पलट दिया। उन्हें अपनी अन्तरात्मा में ऐसा महसूस हुआ कि उन्होंने माँस, शराब आदि का सेवन करके तथा क्रोध और अशुद्ध व्यवहार आदि से बहुत पाप किए हैं। साथ-साथ उन्हें इस बात का मनन करते हुए एक अनोखा आत्मिक नशा भी चढ़ा कि 'मैं शरीर रूपी मन्दिर में रहने वाला अपने आदि-स्वरूप में एक चेतन देवता हूँ।' मन में दोनों लहरें लेकर वे घर आये और उन्होंने शराब की बोतलें उठाकर बाहर सड़क पर फैंकनी शुरू कर दीं। वह विलायती शराब की बहुत कीमती बोतलें थीं। उन्हें बोतलें फैंकता देखकर उनका लौकिक भाई बोला -'' दादा, आप इन्हें सड़क पर क्यों फैंकते हो? हमको दे दो।'' मेरे पिताजी ने कहा –''जो पाप का काम हमने छोड़ दिया, वह आपसे भी नहीं

कराना।'' उस दिन से लेकर पिताजी शाकाहारी बन गये और घर में अशुद्ध भोजन का निषेध हो गया।

जब मैंने देखा कि हमारे लौकिक पिता के मन में अब ज्ञान का रंग लगा है तो मैंने फिर वह पत्र लिख देने के लिए कहा। मेरी लौकिक बहन जी तथा माता जी भी चिट्ठी लेना चाहती थीं। हमें आश्चर्य भी हुआ और बहुत खुशी भी हुई कि पिता जी ने कहा कि –''मैं आपको भी अभी ज्ञान-अमृत पीने-पिलाने की छुट्टी देता हूँ और साथ में यह भी चिट्ठी में लिख देता हूँ कि मैं स्वयं भी ज्ञानामृत पिया करूँगा।'' उन्होंने हमें सहर्ष वह पत्र लिख दिया और बाद में हमारा सारा कुटुम्ब ही इस ईश्वरीय ज्ञान में तन,मन,धन सहित अर्पण हो गया। यह था बाबा द्वारा मिलने वाले इस ज्ञान का सच्चा चमत्कार अथवा जादू कि शीघ्र ही संस्कार बदल जाते थे और विषय वासना की लत छूटकर, आत्मा की प्रभु से सच्ची लगन लग जाती है तथा सहज ही सुख-शान्ति की प्राप्ति होती थी।''

इस प्रकार, बहुत-सी कन्याएँ-माताएँ तथा भाई पत्र लिखवा लाये थे। स्वयं बाबा ने अपनी लौकिक पुत्री को, बहू राधिका को तथा अपनी धर्मपत्नी 'जसोदा' आदि को ऐसे पत्र लिख दिये थे।

कुमारियों और बच्चों के लिए दोनों प्रकार की शिक्षा का प्रबन्ध

जो कुटुम्ब 'ओम् मंडली' में आते थे, उनके बुजुर्गों ने इच्छा प्रकट की कि बच्चों और बच्चियों की शिक्षा के लिये भी ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये कि उन्हें लौकिक विद्या के साथ-साथ आध्यात्मिक विद्या भी पढ़ाई जाय। स्वयं बाबा का तो यह पहले से ही विचार रहता था कि यदि छोटे बच्चों को बचपन से ही ''ज्ञान लोरी'' दी जाय और उनके लिये सच्चे गुरूकुल की तरह वातावरण हो तो उनका बहुत ही कल्याण हो सकता है। अत: अब बाबा ने बालकों और बालिकाओं की शिक्षा के लिए भी व्यवस्था की। प्रात: और सायं सत्संग तो होता ही था परन्तु बीच के समय में अर्थात् ८ बजे से १२ बजे तक कन्याओं को शिक्षा मिलती थी। उन्हें लौकिक विद्या,

आध्यात्मिक विद्या तथा सिलाई सिखाई जाती थी।

ओम् मण्डली में बच्चों की शिक्षा के बारे में यह गीत गया जाता था–

है माता के हाथ बच्चे का खुशगवार बचपन,
है माता के हाथ बच्चे का भविष्य का जीवन
होती है जिन्दगी की पहली बहार बचपन।।
माँ-बाप ज्ञान-रस्ता बच्चे को गर सुनावें,
बच्चे को धर्म-विद्या शुरू से जो पढ़ावें।
गीता का सार अमृत, वह ज्ञान जो दिलावें।।
आत्मा और देह का भेद, बचपन से ही समझावें,
माता मदालसा-सम, अध्यात्म जो सिखावे।
बन जाये फिर तो बच्चे का विदेह-मुक्त जीवन,
है माता के हाथ बच्चे का, आनन्द रूप जीवन।
कुमाता के हाथ बच्चे का है दु:ख रूप जीवन।।

बड़ों के अतिरिक्त छोटी आयु के बच्चों और बच्चियों को भी लौकिक और अलौकिक, दोनों विद्यायें पढ़ाई जाती थीं। इस प्रकार छोटे बच्चों में शुरू से ही सात्विकता लाने का पुरूषार्थ हो रहा था। कुछ समय के बाद जब उनकी संख्या बढ़ गई तो उनके लिए एक बोर्डिंग खोल दिया गया। कन्याओं और बच्चों की शिक्षा के विषय में ब्रह्माकुमारी गुलज़ार मोहिनी जी, जो कि लुधियाना में ईश्वरीय विश्वविद्यालय की इंचार्ज थीं और उस समय बच्चों तथा बच्चियों को शिक्षा देने के कार्य के लिये अन्य शिक्षिकाओं के साथ निमित्त थीं, ने लिखा है कि:–

"जब बच्चों की शिक्षा शुरू की गई तो थोड़े ही समय में शिक्षा-र्थियों की संख्या बढ़ गयी। उन दिनों बाबा की एक बिल्डिंग बन रही थी जो कि वास्तव में उनके लौकिक कुटुम्ब के लिये थी। सत्संग में आने वाली माताओं ने इच्छा व्यक्त की कि बच्चों के लिए एक बोर्डिंग बनाया जाय जहाँ हमारे बच्चे राज-विद्या के साथ-साथ ईश्वरीय विद्या भी पढ़ें। तब बाबा

ने तुरन्त यह आज्ञा दी कि उस मकान को बोर्डिंग बनाया जाय। उस इमारत को जल्दी-जल्दी तैयार कराया गया।

उन दिनों जो बड़ी आयु की कन्याएँ ज्ञान लेने आती थीं, उनके क्लास में बाबा ने पूछा कि छोटे बच्चों और बच्चियों को शिक्षा देने के लिए कौन तैयार हैं? तब ब्रह्माकुमारी कुमारिका जी, चन्द्रमणी जी, शान्तामणि जी, मैं (ब्रह्माकुमारी गुलज़ार मोहिनी), ब्रह्माकुमारी हृदय पुष्पा जी तथा दो-तीन माताओं ने भी यह जिम्मेदारी लेने के लिए अपना हाथ उठाया।

बोर्डिंग चालू हुआ। तुरन्त ही सभी बच्चों की एक-जैसी पोशाक (यूनीफार्म), सभी के एक- जैसे बिस्तरे आदि-आदि बनाये गए। राजकुमारों की तरह उनका पालन होता था। प्रतिदिन उन्हें स्नान कराया जाता था, रात्रि को भी वे हाथ-पाँव-मुँह आदि धोकर सोते थे। उनके लिए एक छोटे औषधालय की भी व्यवस्था थी।

उस बोर्डिंग में उनके सारे दिन की दिनचर्या और शिक्षा ज्ञान-युक्त रीति से चलती थी और बहुत ही आत्मिक प्रेम से राज-ऋषिकुमारों और राजऋषि कुमारियों की तरह उन्हें आध्यात्मिक रीति से शिक्षा तथा पालन मिलता था।

बोर्डिंग में ६ वर्ष से लेकर १० वर्ष तक की आयु के बच्चों का अलग-अलग क्लास होता था और ११ से १४ वर्ष तक की कन्याओं की अलग कक्षा थी।

बच्चों की दिनचर्या इस प्रकार थी कि वे प्रात-५ बजे उठकर सैर करने जाते थे। वहाँ उनको ड्रिल कराई जाती थी ताकि उनमें चुस्ती रहे और उन्हें शान्ति समाधि में भी बिठाया जाता था। वे ६-३० बजे वापस बोर्डिंग में लौट आते थे। उसके बाद नहा-धोकर वे नाश्ता करते थे। आठ बजे उनकी नियमित पढ़ाई शुरू होती थी जिसमें राज-विद्या के साथ-साथ उन्हें ईश्वरीय विद्या भी पढ़ाई जाती थी। उन्हें हिन्दी, सिन्धी और अंग्रेजी भाषा

लौकिक विद्या और ईश्वरीय विद्या

हैदराबाद (सिन्ध) में, ओम् निवास में बच्चों की शिक्षा की भी व्यवस्था की गयी थी ताकि उन्हें भी आत्मा का और आत्मा के स्वधर्म (पवित्रता और शान्ति का) परिचय दिया जाय। यह क्लास के भीतर का एक चित्र है। इन्हें लौकिक विद्या के साथ-साथ ईश्वरीय विद्या भी पढ़ाई जाती थी। बच्चों के लिये ज्ञान-युक्त वर्णमाला बनाई गयी थी और उन्हें शिक्षा देने तथा उनके खान-पान और रहन-सहन का तरीका ऐसा था कि शुरू से ही उनके संस्कार दिव्य बन जायें।

यज्ञ-सेवा

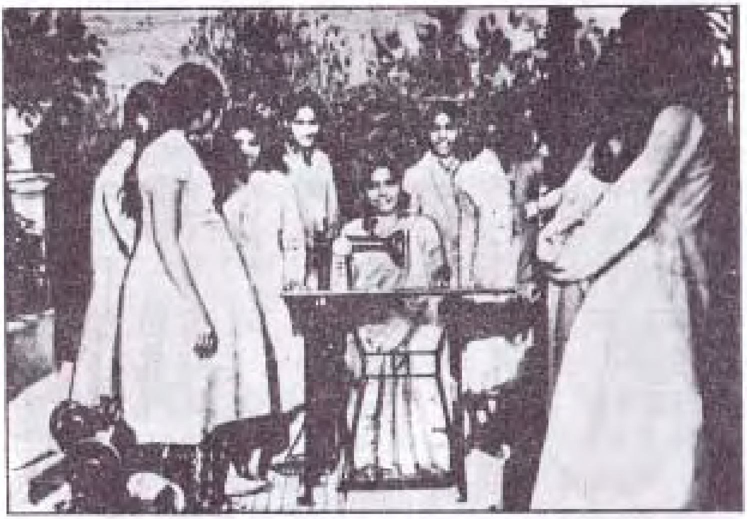

यह यज्ञ-वत्सों के कपड़े सिलाई करने वाला ग्रुप है। ये सब ही सेवा-कार्य में खुश दिखाई देते हैं। बाबा इन्हें कहा करते कि –''शरीर भी आत्मा का 'वस्त्र' ही है। आप स्वयं को सदा इससे न्यारा ही मानना और श्रेष्ठ कर्म करते रहना ताकि सतयुग में आपको देव-तुल्य, निरोग एवं सर्वांगसुन्दर काया मिले और दैवी राज्यकुलोचित वेश-भूषा मिले।'' यज्ञ के अन्यान्य कार्यों के लिये भी संगठन बने हुए थे। सभी मिल-जुलकर और ईश्वरीय स्मृति में स्थित होकर, अर्थात् सही अर्थ में 'कर्म योगी' होकर कार्य करते थे और इससे अपने जीवन को सफल मानते थे।

सिखाई जाती थी और हिसाब-किताब भी पढ़ाया जाता था परन्तु साथ-साथ ईश्वरीय ज्ञान भी दिया जाता था। उदाहरण के तौर पर हिन्दी भाषा का जो पाठ आत्मा से सम्बन्धित था, उसमें इस प्रकार लिखा रहता था -

''यह शरीर पाँच तत्वों का पुतला है। आत्मा ही इस शरीर को चलाने वाली शक्ति है। आत्मा ही शरीर का आधार लेकर मुख द्वारा कहती है कि ये हाथ-पाँव मेरे हैं। जानते हो कि यह 'मेरा-मेरा' कहने वाला मैं कौन हूँ। मैं एक ज्योति-स्वरूप, अमर आत्मा हूँ। मैं आत्मा सत्-चित् हूँ। मैं आत्मा इस सृष्टि में अपना पार्ट बजाने आई हूँ। मैं इन कर्मेन्द्रियों द्वारा कर्म करती हूँ। परन्तु मैं इनसे अलग हूँ।''

इस प्रकार के और भी पाठ बने होते थे। साढ़े दस बजे आधी छुट्टी होने पर उन्हें फल आदि दिया जाता था। फिर ११ बजे से १ बजे तक क्लास होता था। इसके पश्चात् वे भोजन करके कुछ देर विश्राम करते थे। ३ बजे से लेकर फिर उनको आध्यात्मिक ज्ञान के विषयों पर सरल- सरल संवाद, गीत आदि सिखाये जाते थे। फिर सायं ५ बजे वे दूध पीते थे और ६ बजे फिर घूमने जाते थे। साढ़े ७ बजे रात्रि को वे वापस लौट आते थे और भोजन करते थे। रात्रि को साढ़े ८ बजे उन्हें शिष्टाचार तथा अच्छे गुणों-सम्बन्धी कुछ शिक्षा दी जाती थी। उन्हें खान-पान की शुद्धि, जीवन में सादगी तथा अन्यान्य उच्च धारणाओं के बारे में भी सरल एवं प्रेरणा-दायक रीति से शिक्षा दी जाती थी।

प्रतिदिन अन्तिम पीरियड (Period) में अर्थात् लगभग १ बजे बाद-दोपहर सभी बच्चों को शान्त समाधि में बिठाया जाता था। तब एक शिक्षिका 'ओम् की धुन' भी करती थी। बच्चे भी उसके साथ ही धीमे स्वर में ओम् की धुन गाते थे। उस समय बहुत-से बच्चे ध्यानावस्था में चले जाते थे और कई बच्चे दिव्य रास करने लग जाते थे। वह दृश्य देखने-जैसा होता था। छोटे-छोटे बच्चे दिव्य दृष्टि द्वारा वैकुण्ठ के अनेक ऐसे साक्षा-त्कार करते और वहाँ के राजकुमारों की वेश-भूषा, उनके रहन-सहन, राज-

दरबार आदि-आदि का ऐसा वर्णन करते कि सुनने वाले आश्चर्य-चकित रह जाते और उनके दिव्य साक्षात्कारों का अनुभव सुन स्वयं उन-जैसा अनुभव पाने को लालायित होते।

सभी बच्चे इकट्ठे ही पंक्ति में बैठकर भोजन किया करते थे। जब तक सभी को भोजन न परस दिया जाये तब तक कोई भी भोजन खाना प्रारम्भ नहीं करता था। वे शान्तिपूर्वक भोजन करते थे। इस प्रकार बच्चों में अनुशासन, पारस्परिक प्रेम, शिष्टाचार तथा सफाई का गुण लाया जाता था। बच्चों के बिस्तर, उनके रहने का स्थान, स्नानगृह, उनके वस्त्र, सभी इतने स्वच्छ रहते थे कि देखते ही मन प्रसन्न हो जाता था।

बच्चों को आँख-मिचौनी, रस्सा कशी, दौड़, कुर्सियों का खेल तथा अन्य खेल भी कराये जाते थे। फिर, सायंकाल को सभी आत्मा रूप में स्थित होने का अभ्यास करते थे। इस प्रकार, समय पर सब कार्यक्रम होता था। अन्त में रात्रि को सोने के समय एक ग्रामोफोन रेकार्ड बजता था जिसका गीत इस प्रकार था :—

"सो जा राजकुमारी सो जा........"

यह गीत सुनते हुए सभी आत्मस्वरूप की याद में, शरीर को ढीला छोड़कर, सुखपूर्वक, सतोगुणी नींद में सो जाते थे। फिर प्रात: सवा चार बजे, "जागो मोहन प्यारे जागो...." यह रेकार्ड बजता था और सब उठ जाते थे।

शिक्षा-अधिकारियों द्वारा ओम् निवास का निरीक्षण

थोड़े समय में काफ़ी लोगों को यह मालूम हो गया कि ओम् मण्डली के प्रबन्ध से बच्चों के लिए ऐसा एक बोर्डिंग खुला है। कई शिक्षा-संस्थाओं के संचालक अथवा प्रधान-अध्यापक अथवा शिक्षा-क्षेत्र में कार्य करने वाले नामवर व्यक्ति[1] कई बार अचानक ही इस बोर्डिंग को देखने आ जाते। उनका यह विचार रहता कि सूचना दिये बिना, अनायास ही जाकर

१. इनमें से एस०एन० शेरवानी, आर०जी० सदाशिवानी, आर०एस० होतचन्द (भूतपूर्व कलैक्टर) और के० मीरचन्दानी के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके अनुभव समाचार पत्रों में भी छपे थे।

शरीर द्वारा कार्य करते हुए भी
आत्म-स्थित और शान्त-चित्त

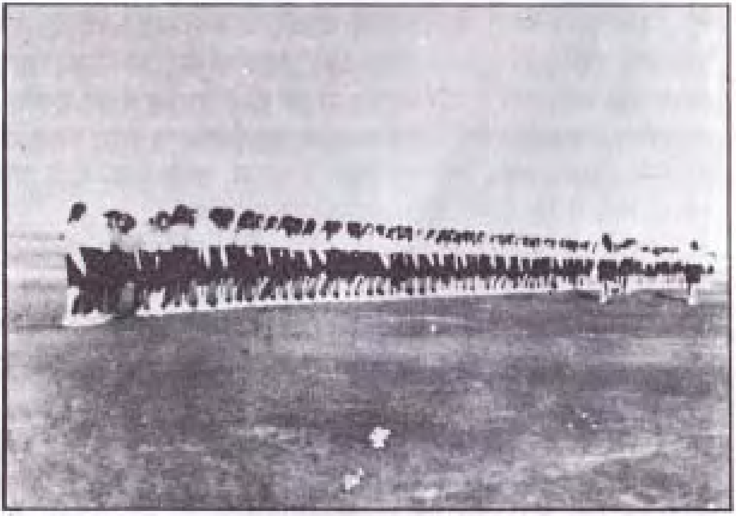

मन को स्वस्थ करने के साथ-साथ तन का स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये भी कुछ खेल और ड्रिल कराये जाते थे। ये शक्तिदल अपनी यूनिफ़ार्म में समुद्र-तट पर पंक्ति बद्ध खड़ा है। इस यूनिफ़ार्म को पहनने से उनका स्त्रीत्व का भान और देह-अभिमान टूट जाता था और वे आत्मा को 'पुरुष' तथा देह को 'प्रकृति' निश्चित करती थीं। इससे उनमें अनुशासन तथा संगठन की भावना भी बढ़ती थी। विशेष बात यह कि ड्रिल करते समय भी वे ईश्वरीय स्मृति में स्थित हुए रहने का अभ्यास करते थे।

करानी में समुद्र-तट के निकट क्लिफ्टन पर

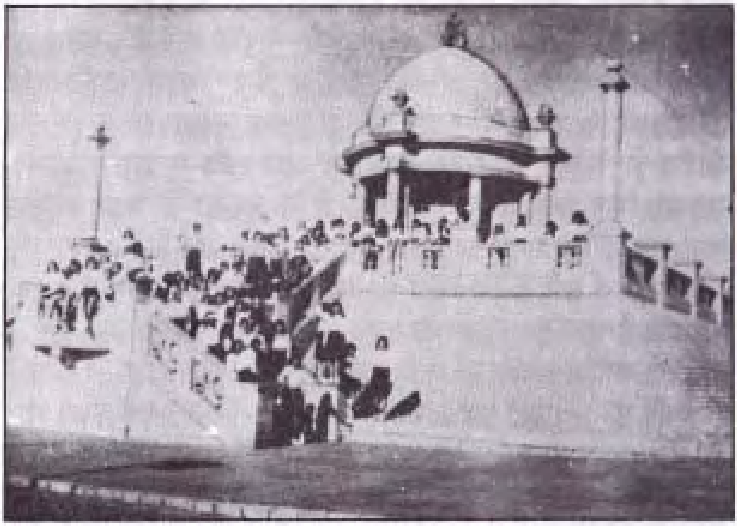

कराची में बाबा सबको समुद्र-तट पर घूमने ले जाया करते थे और वहाँ एकान्त में बैठकर प्रभु-चिन्तन के लिए कहा करते थे। क्लिफ्टन पर अथवा सागर के तट पर रेत के ढेरों पर बैठकर यज्ञ-वत्स आत्म-चिन्तन अथवा शान्त-समाधि का अभ्यास करते थे। बाबा उन्हें समझाते थे कि एक परमात्मा की याद में टिकना ही 'एकान्त' है। अब यह ज्ञान-हंस वापस लौट रहे हैं।

वहाँ की सफाई-सुथराई को, बच्चों को मिल रहे भोजन आदि को तथा वहाँ की शिक्षा-पद्धति को तथा वहाँ लौकिक विद्या के साथ ही साथ आध्यात्मिक एवं नैतिक शिक्षा देने की प्रणाली को देखा जाय। उन्हें वहाँ ओम्-निवास के प्रबन्ध-कर्त्ता अथवा शिक्षिकाएँ खुली छुट्टी देते थे कि वे बच्चों की पढ़ाई-लिखाई आदि-आदि के ढंग को देखें। वे लोग वहाँ राज-ऋषिकुल-जैसा वातावरण, वहाँ की स्वच्छता, वहाँ की भोजन-व्यवस्था आदि-आदि को देखकर बहुत ही प्रसन्न होते थे। कुछ लोग सुझाव देते थे कि इस बोर्डिंग को पंजीकृत (रजिस्टर) करा दिया जाय ताकि सरकार से आर्थिक सहायता मिल सके, क्योंकि वे सोचते थे कि सरकार से सहायता लिए बिना भला अधिक समय तक 'ओम् मण्डली' इतना खर्च कैसे बर्दाश्त कर सकेगी। परन्तु उन्हें बताया जाता था कि यह ईश्वरीय संस्था है, ईश्वर सब का दाता है। इसलिए चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

कई बार शिक्षा-अधिकारियों के सामने ही बच्चे ''ओम्, ओम्.....ओम्'' की ध्वनि सुनते - सुनते ध्यानावस्था में चले जाते और उन्हें इस संसार तथा देह की सुधबुध न रहती। वे इस दृश्य को देखकर बहुत आश्चर्य चकित भी होते थे तथा हर्षित भी। जब वे बच्चे ध्यानावस्था से नीचे उतरते थे तो वे उन बच्चों से पूछते कि उन्होंने क्या देखा? वे उन बच्चों द्वारा वैकुण्ठ का विस्तृत वर्णन सुनकर बहुत ही गद्‌गद् होते थे।

छोटे बच्चों में भी मोह नष्ट और संस्कारों का परिवर्तन

इस प्रकार की शिक्षा-प्रणाली से बचपन में ही उनके संस्कार अच्छे और जीवन दैवी बन जाता था। बहुत-से बच्चों के कई लौकिक सम्बन्धी, माता-पिता आदि भी उसी भवन में रहते थे। परन्तु चूँकि बच्चों की दिनचर्या और रहने की व्यवस्था ही ऐसी थी कि उन्हें अवकाश ही न मिलता था, इसलिए अब उनका अपने मात-पिता या सम्बन्धियों से सम्पर्क न रहा था। इसके फलस्वरूप, उनका अपने माता-पिता आदि के साथ लगाव या मोह न रहा था। अतः लौकिक विद्या प्राप्त करने के साथ-साथ उन्हें एक लाभ

यह भी हो गया था कि देह के सम्बन्धों के भान से न्यारे होने के विषय में भी वे सफलता प्राप्त कर रहे थे। यों तो बच्चों में चंचलता होती है और रूठने, अधिक बोलने आदि-आदि का स्वभाव भी होता है परन्तु उनके इन संस्कारों को बदलने के लिए बाबा सदा ज्ञान-युक्त रीति ही बताते थे। इस विषय में ब्रह्माकुमारी चन्द्रमणि जी,ने कहा–

''बच्चे अपने पुराने संस्कारों के कारण चंचल तो होते ही थे। उनकी चंचलता को जब हम ठीक नहीं कर सकती थीं तो हम बाबा से कहती थीं –''बाबा, यह बहुत तंग करते हैं। अब क्या करना चाहिए? इन्हें कैसे सुधारा जाए?'' बाबा कहते थे –'इन्हें कभी भी मारना-पीटना' नहीं। इन्हें पीटना गोया हिंसा करना है। बच्चे जिस प्रकार की भूल करते हैं, आप उस भूल से होने वाली हानि का उन्हें ज्ञान दो। जो बुराइयाँ उनमें हैं उसे छोड़ने से क्या लाभ होगा? यह बात उन्हें भली-भाँति समझाओ। यदि उनकी कोई उचित माँग है तो उसे पूरा करो। आप उनके मन को प्यार और ज्ञान द्वारा जीत लो, तो फिर वे आपके इशारे पर ही चलेंगें। उन्हें यह भी समझाओ कि फलाँ कर्म करने से मनुष्य का पाप बनता है जिसका फल मनुष्य को यहाँ या धर्मराजपुरी में दण्ड के रूप में भोगना पड़ता है। इस प्रकार उनकी आदतों को सुधारो, उन्हें मारो मत।''

बाबा कहते थे –''इन बच्चों ने घर छोड़ा है और अब यहाँ होस्टल में ही इनका आवास-निवास है। अत: यह भी इनका एक प्रकार का त्याग है। इनकी बुद्धि का तथा कर्मेन्द्रियों का पूर्ण विकास नहीं हुआ। ये बड़े मनुष्यों से बहुत-सी बातों में अच्छे भी होते हैं। आप इन्हें आत्मिक दृष्टि से देखकर इन्हें समझायेंगी तो इन पर शीघ्र ही प्रभाव पड़ेगा। फिर भी यदि ये अधिक चंचलता करते हैं, तो इनकी जो प्यारी चीज हो, आप वह बंद कर दो तो वे सुधर जाऐंगें। इसी प्रकार, चंचलता करने वाले बच्चे का जिस बच्चे से अधिक प्यार होता था, उससे बात करने के लिए भी उसे मना कर दिया जाता था। उसे कहा जाता –''जब तक तुम सुधरते नहीं हो तब तक

इस बच्चे से तुम्हें बात करने की मना है।'' इस प्रतिबन्ध से तंग आकर वह बच्चा शीघ्र ही सही रास्ते पर आ जाता था।

इसके अतिरिक्त, बाबा ने एक युक्ति यह भी बताई कि जो बच्चा उदण्ड हो, अधिक चंचलता करता हो, उसे क्लास में अलग ही एक कोने में बिठा दो और उससे मत बोलो। हम ऐसा ही करती थीं। उसकी पढ़ाई पर तो ध्यान देती थीं परन्तु उसे अलग बिठा देती । इससे भी वे सुधर जाते थे।

हरेक प्रकार की विद्या के अध्ययन के बाद परीक्षाएँ तो होती ही है। इसी प्रकार, ईश्वरीय विद्या पढ़ने वालों की भी परीक्षाएँ होना ज़रूरी है। ज्ञानवान् और योगी के बारे में प्रसिद्ध है कि वे निंदा स्तुति, मान-अपमान, हर्ष-शोक आदि में समान रहते है और विघ्नों को हर्ष से पार करते तथा सहन करते हैं। अतः अब ऐसी ही परीक्षाएँ ईश्वरीय विद्या पढ़ने वालों के सामने आईं। वह कैसा रूप धारण करके आईं और उन्हें कैसे पार किया गया, यह आगे पढ़िये।

—सम्पादक

लोक लाज, भय और निन्दा की परीक्षाओं से पार होना

इस प्रकार, बहुत नर-नारी ज्ञानामृत पीते, अच्छे नियमों का पालन करते, अपने जीवन का कल्याण कर रहे थे। परन्तु ऐसा हुआ कि कई माताओं के पति जो कि अपने व्यापार के सिलसिले में कुछ काल के लिए विलायत में गए हुए थे, अब जब वापस लौटे तो उन्होंने भोग-विलास की कामना की। विषय विकारों के प्यासे पति अपनी काम-चेष्टा पूरी न होने के कारण अबला नारियों पर अत्याचार करने लगे। वे उन्हें 'ओम् मण्डली' में जाने और ज्ञानामृत पीने से रोकने लगे। परन्तु जिन्होंने इतने समय से ज्ञानामृत पीकर अपने जीवन को पावन बनाया था, अब वह शक्तिमय आत्माएँ अपने ऊपर काम-कटारी कैसे चलाने दे सकती थीं? वे अमृत पिये बिना कैसे रह सकती थीं? जिन्हें यह निश्चय हो चुका था कि अब परमपिता परमात्मा पवित्र, सतोप्रधान सृष्टि की पुनर्स्थापना करना चाहते हैं और हमें अब आसुरी कर्म छोड़ देवी-देवता बनना है, वे आत्मा का हनन् करने वाले इस हलाहल विष का कैसे सेवन कर सकती थीं? वे तो अब ज्ञान की मस्ती में निम्नलिखित गीत गाया करती थीं :—

मैं क्षेत्र-नगर की शक्ति हूँ,
और ओम् मण्डली में रहती हूँ
स्वधर्म का पालन करती हूँ,
नित्य शान्त समाधि करती हूँ।
मैं ज्ञानामृत पिलाती हूँ,
नित्य विष्णु-अर्थ शुद्ध सेवा में
है ज्ञान ही मेरा जीवन-धन,
नित्य देस बेगमपुर रहती हूँ
निज आनन्दस्वरूप ओम् हूँ मैं,

जीवनमुक्ति मौज उड़ाती हूँ।
सुन ज्ञान- बँसी बजाती हूँ,
नित्य गोविन्द के गुण गाती हूँ
यह सृष्टि मेरा है गुलशन,
खुद-मस्ती में नित्य रहती हूँ।

अत: वे विनम्र भाव से, हाथ जोड़कर, पति से कहतीं — ''आत्मन्! हम आपके और विश्व के कल्याण की कामना करती हैं और इस घर को वेश्यालय की बजाय शिवालय अथवा मन्दिर बनाना चाहती हैं। आप श्री नारायण के समान देव-स्वभाव को धारण कीजिये और हम श्री लक्ष्मी के समान देवी बनेंगी तो यह घर पावन तथा स्वर्ग-तुल्य हो जायेगा। आर्य पुत्र! अब क्यों न हम अपनी पतित गृहस्थी को गृहस्थ- आश्रम अर्थात् आश्रम के समान पवित्र बनायें? देखो, आपसे हमारा प्यार कम नहीं हुआ है। हाँ, केवल हमारा इतना दृष्टिकोण अवश्य बदला है कि अब हम आपको आत्मिक दृष्टि से देखती हैं और आप से आत्मिक ही स्नेह करती हैं। आप भी परमपिता परमात्मा के अमर पुत्र हैं, हम भी प्रभु-पुत्री हैं। अत: आओ, उस परमपिता के साथ हम दोनों का जो नाता है, उस नाते को सामने रखकर, धर्म अर्थात् पवित्रता के मार्ग पर चलें। देखो, हम घर-गृहस्थ के सभी धर्मानुकूल कर्त्तव्यों को पहले से भी अधिक उत्तरदायित्व और परिश्रम से निभायेंगी, जो कार्य हमने पहले शायद कभी नहीं किया था, वह भी हम करेंगी, यहाँ तक कि यदि आपको थूकना होगा तो हम पीकदान की बजाय अपने हाथ भी आगे करने के लिए संकोच नहीं करेंगी। परन्तु, अब हम ज्ञान-गंगाओं को, शिव शक्तियों को, ज्ञान-परियों को, प्रभु-पुत्रियों को स्वीकृति और सहयोग दो कि हम इस घर को पावन बनायें। इस पर लगे माया के दाग-धब्बों को धो डालें तथा मनोविकारों को राख कर दें। आप 'काम वासना' के लिए हमसे प्रस्ताव मत किया करो। अब प्रभु हमसे पवित्र रहने का प्रस्ताव कर रहे हैं क्योंकि अब कलियुग का अन्त होने वाला है।

समय को पहचानो। हमारी बात मान लो, आप भी ज्ञानामृत का एक प्याला पीकर अपने भविष्य को उज्वल बना लो। सहयोग दो कि हम अपने गृहस्थ को कमल पुष्प के समान बनायें। हम आपसे केवल पवित्रता ही की भीख माँगती हैं। यह पवित्रता ही हम आत्माओं की प्यास है। हम आत्माओं ने अनेक जन्म विषय-विकारों में गोते लगाए हैं, परन्तु हम ज्ञान-मीराओं को अब इस एक जन्म के शेष थोड़े-से समय के लिए तो पवित्र रहने दो क्योंकि हमने अब 'काम' को मन से निकाल कर श्याम को अथवा राम को उसमें बिठाया है।'' इस प्रकार, वे अपने-अपने पति को पवित्र बनने के लिए जो प्रेरणा देतीं, वह प्रेरणा इस गीत के सुरों में भरी है :—

जीवन की घड़ियाँ यों ही न खो,
ज्ञानी बनो, योगी बनो।
चादर न लम्बी तान के सो,
पवित्र बनो, योगी बनो।
चोला यही है कर्म का,
सौदा यही है धर्म का।
धोना जो चाहे जीवन को धो,
ज्ञानी बनो, योगी बनो।
ओम् से मनवा अब शाद कर,
उजड़ा हुआ घर आबाद कर।
ओम् की माला मन में पिरो,
ज्ञानी बनो, योगी बनो।

परन्तु उन माताओं का यह अनुनय-विनय, उनका निवेदन-आवेदन उल्टे मटके पर पानी की तरह अथवा रेत पर घी की तरह व्यर्थ ही जाता था। जैसे अफीमची अफीम के बिना या शराबी, शराब के बिना नहीं रह सकता और हाय शराब, दो शराब —''इस प्रकार फरियाद करता है, वैसे

ही वे भी —''हाय विकार, हाय विष.....'' इस प्रकार काम-भोग के लिए व्याकुलता प्रगट करते। ''काम'' की कामना पूर्ण न होने से उनमें क्रोध की ज्वाला प्रज्वलित होती और उससे उनकी बुद्धि पर पर्दा पड़ जाता और वे बड़ी निर्दयता से मारते-पीटते । पत्नी कहती कि विष छोड़, अमृत पियो, परन्तु पति कहता —''हमें तो विष का प्याला चाहिए।''

वास्तव में एक विशेष बात यह भी हुई थी कि दो-तीन महिलाओं को उनके पतियों ने बहुत मारा-पीटा था, यहाँ तक कि उन्हें चोटें भी लग गई थीं और उनसे खून भी निकला था। उन्होंने उन महिलाओं के ज़ेवर उतार लिये थे, उनका स्त्री-धन भी ले लिया था और जो वस्त्र उन्होंने पहने हुए थे उनको फाड़ कर उन्हें घर से निकाल दिया था। उन माताओं ने दूसरे दिन ओम् मण्डली के सत्संग में पहुँचकर दूसरी माताओं-बहनों को अपना हाल सुनाया। जब सभी ने देखा कि उन माताओं को ऐसा पीटा गया है कि उन्हें निशान पड़ गये हैं और उन अबलाओं का मायके से लाया गया जेवर आदि भी उतार कर उन्हें निकाल दिया गया है, तो इस दृश्य का उनके मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने सोचा —''क्या इस समाज में स्त्रियों का बस यही मान है? जिसे 'धर्मपत्नी' कहा जाता है, वह जब धर्म के मार्ग पर चलती हैं, तब क्या अपने मन्तव्य के अनुसार साधना करने का उसे यह दण्ड मिलता है? उसे अर्धांगिनी (Half-Partner) कहा जाता है परन्तु व्यावहारिक जीवन में तो उसे एक पशु की भाँति बुरी तरह पीटा जाता है।'' अत: इस वृत्तान्त से माताओं का मन टूट गया और कन्याओं ने सोचा कि हम ऐसा विवाह नहीं करेंगी, जिसके परिणामस्वरूप यह हालत हो। हम ऐसे कामी-क्रोधी और विकारी मनुष्य से शादी नहीं करेंगी। अत: उन्होंने इस प्रकार एक गीत बना लिया :—

खबरदार होकर सुनो प्यारी बहनों,
अज्ञानी नरों से सगाई न करना।
हैं आजकल के विकारी बने नर,

क्षणिक प्रेम में फँस तबाह न होना।
खाते माँस-मदिरा, बने सर्व-भोगी,
ऐसे विकारी का दर्शन न करना।
खोया चाल-चलन है बुरी संगतों में,
भला ऐसे नर का भरोसा क्या करना
करो देख ज्ञानी पति प्यारी बहनों,
केवल रूप-धन पर कच्चाई न करना।
स्वधर्म न भूले घड़ी एक भी जो,
ऐसे पति का पल्ला तुम पकड़ना।
स्वयंवर लिए खूब सोचो-विचारो,
सीता-सती सम गले फूल धरना।
फलेगा फूलेगा, गुल जो खिलेगा,
जगत् का उद्धार वह निश्चय समझना।

सोचने की बात है कि माताओं-कन्याओं ने अपनी ही माता-जाति का जो तिरस्कार देखा और उन पर अत्याचार भी देखा तो उन्होंने स्वयं अपने मन से ही पवित्र रहने का निर्णय किया था। इसमें बाबा क्या कर सकते थे? बाबा तो गीता के ये महावाक्य सुनाया करते थे कि –''हे वत्स, काम ज्ञानवान् मनुष्य का महाशत्रु है अथवा काम-क्रोध और मोह नरक के द्वार हैं।'' इन महावाक्यों को सुनकर 'काम' विकार को छोड़ने का निर्णय तो माताओं ने स्वत: अपनी ही इच्छा से किया था। अत: यदि बाबा उनसे कहते भी तो वे फिर काम-क्रोध को नहीं अपनातीं परन्तु लोग उन की भावना को न समझ कर उन पर बहुत अत्याचार करते थे।

उन कामातुर पति लोगों ने तो क्या, उनके माता-पिता और बुजुर्गों ने भी धर्म-शर्म छोड़कर उन माताओं से आग्रह किया कि पति से वासना-भोग करो। न केवल इतना ही किया बल्कि वे एक कमेटी बनाकर अथवा पंचायत लेकर बाबा के पास आये। उन्होंने दादा के सामने ऐसी तीन माताओं का

मामला रखा जिन्होंने कि अपने-अपने पति को विषय-भोग के लिए इन्कार कर दिया था। वह पति लोग खूब शराब-पीने व कबाब खाने वाले थे और विलायत से लौटकर आए थे। विषय-भोग का प्रस्ताव पति द्वारा अस्वीकार होने पर उन्होंने उन (महिलाओं) पर बहुत अत्याचार किया था। सिन्ध में उस अत्याचार की खूब चर्चा चल पड़ी थी। एक पति ने तो न्यायालय में मुकद्दमा भी चालू कर दिया था। उस मामले को लेकर पंचायत के लोग बोले –''दादा, आप इनसे कहो कि ये अपने पति से विषय-भोग करें।'' परन्तु बाबा ने उन्हें कहा –''मैं तो ज्ञानामृत पिलाने की सेवा कर रहा हूँ; मैं इन्हें कैसे कह सकता हूँ कि ये विषय-विकार में डूबें? यह सत्संग में न आना चाहें तो भी इनकी इच्छा है, परन्तु जिस काम विकार को गीता में 'नरक का द्वार' कहा गया है, उस विकार के लिए मैं कैसे इन्हें सुझाव, अनुमति अथवा आज्ञा दे सकता हूँ।'' बाबा ने उनको यह भी कहा कि –''मेरी अपनी लौकिक पुत्री भी ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करती है। मैं स्वयं भी आश्चर्यचकित हूँ कि ब्रह्मचर्य की यह आज्ञा इन्हें और मुझे कौन देता है। इन्हें बड़ों का कहना तो मानना चाहिए परन्तु ये क्यों नहीं मानतीं? ये भी उस परमपिता की आज्ञा के कारण विवश हैं और मैं भी ....।'' बाबा ने ये भी कहा –''**मैं तो इन आत्माओं का एक सेवक हूँ। मुझे तो प्रभु ने इनकी सेवा के लिए निमित्त बनाया है, तब मैं इनका सेवक इन्हें आज्ञा कैसे कर सकता हूँ देखो, ये कोई मेरी आज्ञा पर नहीं हैं बल्कि जो इनको आज्ञा देने वाला है, वही मुझे भी अपनी आज्ञा पर चला रहा है। अत: आज्ञा देने वाला कोई और है, मैं तो स्वयं ही आज्ञा का पालन करने वाला हूँ।**'' इस विषय में भी उन दिनों एक गीत बना हुआ था, जिसका पहला पद था – ''सेवक अचे थी ओम् मण्डली में सेवा करण वास्ते।'' इसका भावार्थ यह था कि दादा कहते हैं कि –''मैं तो एक सेवक हूँ, ओम् मण्डली में सेवा करने के लिए ही आया हूँ।'' बाबा ने यह भी कहा कि –''यह तो इनके घर का आपसी मामला है, मैं इसमें कैसे दखल दे सकता हूँ।''

अब सोचने की बात है कि जबकि उन महिलाओं को दिव्य साक्षात्कार हो चुके थे, उन्होंने ईश्वरीय ज्ञान और पवित्रता का रसास्वादन भी कर लिया हुआ था और दूसरी ओर अज्ञानकाल में विकारी जीवन भी देख लिया था तो वे अब किसी के कहने से विषय-वासना के जीवन में कैसे प्रवेश करतीं? उनको तो किसी का कहना वैसे भी व्यर्थ ही था। वे तो अब दो-तीन वर्षों से इस गीत के भावार्थ में ही टिक गयी थीं :—

ज्ञान ही मन का मीत सखी री ज्ञान ही मन का मीत
जगत् में राखो ज्ञान से प्रीत
मण्डली गीता की मुरली बजावे,
मन को प्रभु की याद दिलावे
यही बुद्धियोग की है रीत,
सखी री सीता और राम की प्रीत
मन मस्ताना ठौर न पावे,
मेरा-मेरा सदा ललचावे
उसे 'ओम्' अर्थ से जीत, सखी री ज्ञान-खड्ग से जीत
जगत् में राखो ज्ञान से प्रीत।

अत: उन्हें पवित्रता (ब्रह्मचर्य) के नियम का इस दृढ़ता से पालन करता देखकर लोगों में हलचल शुरू हुई। वे सोचने लगे कि हमने ऐसा सत्संग कभी नहीं देखा। यदि मातायें ब्रह्मचर्य का पालन करने लगेंगी तो इस सृष्टि की वृद्धि कैसे होगी? उन्हें यह तो मालूम नहीं था कि सतयुग अथवा देवयुग में और त्रेता युग में मैथुनी सृष्टि नहीं होती, बल्कि उस काल के सतोगुणी लोगों अथवा देवी- देवताओं में काम-वासना नाम मात्र भी नहीं होती और तब सृष्टि मनोबल और पवित्रता-बल से अर्थात् योग-बल से पैदा होती थी और अब उसी सृष्टि की फिर स्थापना हो रही है।

दूसरी बात इस सत्संग में लोगों ने यह भी देखा कि यहाँ ईश्वरीय ज्ञान देने के कार्य में प्राय: माताएँ व कन्याएँ ही निमित्त बनी हुई हैं। अब तक

तो उन्होंने यही देखा था कि हर सत्संग में पुरुष ही शास्त्र सुनाते तथा कथा करते थे। तीसरे, लोगों ने यहाँ दिव्य साक्षात्कारों की भी धूम मची देखी जिसे वे अपने तमोगुणी संस्कारों के कारण तथा अशुद्ध खान-पान के कारण नहीं समझ सके।

'काम-वासना'के अधिकार की माँग

अत: जिन 'सिन्धवर्की'[१] लोगों की, विलायत से लौटने के बाद काम-चेष्टा पूरी नहीं हुई थी, उन्होंने जब पंचायत को लेकर शोर मचाया तो उस माया नगरी के और बहुत-से धर्म-विमुख लोग भी उनसे मिल गये। वे घर-घर में जाकर कहने लगे कि कन्याओं, माताओं अथवा पुत्रों-पौत्रों को इस सत्संग में जाने से रोको वरना हम बिरादरी से आपका बहिष्कार कर देंगे। कुछेक को तो डराया-धमकाया और पीटा भी गया कि वे अपनी पुत्रियों या पत्नी आदि का ओम् मण्डली में जाना बन्द करें। वहाँ के मुखिया लोगों का शहर पर काफी दबदबा था और कई समाचार पत्रों की व्यवस्था-समितियों अथवा बोर्ड में (जैसे कि 'सिन्ध ऑबजर्वर' नामक समाचार पत्र में) भी उनका उच्च स्थान था या उनकी पहुँच थी। अत: उन सबने मिलकर एक हंगामा शुरू कर दिया। कुछेक समाचार पत्रों ने उनका खूब सहयोग दिया। कल तक जिस सत्संग में स्वयं वे मुखी और चौधरी लोग आया करते थे अथवा अपनी बहू-बेटियों को उसमें सम्मिलित होने के लिये सहर्ष स्वीकृति-पत्र देते थे तथा दादा के कार्य की भूरि-भूरि सराहना करते थे, आज उसके विरुद्ध उन्होंने आन्दोलन शुरू करने के लिए एक संगठन बनाया जिसका नाम उन्होंने 'ऐण्टी ओम् मण्डली' रखा। उस मण्डली का प्रधान बनाया गया मुखी मंघाराम जी को जोकि दादा के एक निकट सम्बन्धी और प्रशंसक थे और स्वयं भी इस सत्संग में आते थे। अब लोगों ने उन्हें

१. सिन्ध के जो लोग व्यापार के कारण विलायत जाते थे, उन्हें सिन्धी लोग अपनी बोली में 'सिन्धवर्की' कहते थे।

भड़काया था। उन्हें कैसे भड़काया गया, इस विषय में भी एक बड़ा दिलचस्प वृत्तान्त है जोकि निम्नलिखित है :—

बाबा ने पतित-पावन परमपिता परमात्मा की तथा परमधाम की स्मृति दिलाने के लिये उस मुखी को एक ग्रामोफ़ोन रेकार्ड सौगात रूप में दिया। वह रेकार्ड थोड़े दिन पहले प्रचलित हुआ था। उसमें भरा हुआ जो गीत था, वह इस प्रकार था :—

इस पाप की दुनिया से अब और कहीं ले चल
चित्त चैन जहाँ पाये, ले जल्द वहीं ले चल
इस पाप की दुनिया से...
लोगों की जबानों से, दुनिया की निगाहों से
अब और कहीं ले चल, अब और कहीं ले चल
इस पाप की दुनिया से...

जब लोगों को यह पता लगा कि मुखी को यह रेकार्ड मिला है तो उन्होंने मुखी को कहा कि इस रेकार्ड में जादू है, इसे हाथ न लगाना, न घर वालों को हाथ लगाने देना वरना आप लोगों को भी जादू लग जायेगा। हम एक जादूगर को बुला लाते हैं; वह आकर आपको बतायेगा कि इस रेकार्ड मे कैसा जादू है। मुखी जी डर गये । वह बोले —''अच्छा, जादू-टोने वाले को ले आओ।'' लोग एक ऐसे व्यक्ति को ले आये जो टोने, झाड़ा-फूँकी, ताबीज आदि का काम करता था। वह आकर बोला —''आह, इस रेकार्ड पर तो जादू का खूब असर हुआ है। आप लोग बड़े खुशनसीब है कि आपने इसे हाथ नहीं लगाया, वरना...।'' बस, लोगों ने ईंटें, पत्थर, रोड़े उठा-उठाकर उस रेकार्ड को मारे ताकि उसमें भरा हुआ जादू अच्छी तरह उससे निकल जाये!! कहीं ऐसा न हो कि उसके किसी हिस्से में छिपा हुआ जादू निकल कर किसी को लग जाय।

देखिये तो संसार की कैसी हालत हो चुकी है। एक व्यक्ति जिसका धन्धा ही लोगों को ताबीज देना है और जिसे यही बता कर लाया गया है

कि ''इस रेकार्ड में जादू भरा हुआ है, उसे निकालने के लिए हमारे साथ चलो,'' उसके कहने पर सभी लोगों ने अपने विवेक का प्रयोग भी नहीं किया। वे पत्थर मार-कर जादू को भगाने में लग गये!! कभी-कभी समझदार और स्याने लोगों को भी क्या हो जाता है! इतना समय ज्ञान सुनने से जिन लोगों का जीवन बदला था, क्या वह जादू से बदला था? इतने लोगों को ज्ञान मिलने से जो शान्ति मिली थी, क्या वह जादू से मिली थी? बच्चों-बच्चियों की शिक्षा आदि का यह सब प्रबन्ध जादू के लिए किया गया था? वाह रे अभागे लोग! ईश्वरीय ज्ञान तो प्रायः लुप्त हो चुका था परन्तु क्या तूने सामान्य विवेक भी खो दिया? रस्मों, कर्म-काण्डों और जादू-टोनों की भरमार में तू ऐसा भटक गया कि बुद्धि पर लोहे का पर्दा पड़ गया। सोचिये कि यदि ओम् मण्डली के तपस्वियों के पास कोई ऐसा जादू होता तो वे देश के नेताओं तथा अन्यान्य लोगों को लगाकर उनको अपने वश न कर लेते?

सच है कि यदि कोई व्यक्ति बनावटी हीरों की दुकानों वाले बाजार में सच्चे हीरों की दुकान खोल ले तो उसके हीरे भी झूठे ही मानेंगे। वह चाहे कितने भी प्रमाण अपनी सच्चाई के लिये दे, लोग उस पर विश्वास नहीं करेंगे, बल्कि कोई विरला ही पारखी, जो अपने विवेक का निष्पक्ष प्रयोग करता होगा, उसके हीरों का सौदा करने को तैयार होगा। ठीक यही वृत्तान्त परमपिता परमात्मा के साथ होता है जब वह ज्ञान रत्नों को ऐसे संसार में आकर लोगों को देने लगते है जिनके यहाँ टोने, झाड़ा-फूँकी और झूठे जादू प्रचलित हैं। वह क्या जानें कि परमपिता परमात्मा का ज्ञान ही सच्चा जादू है। वह जिसको लग जाता है वह अपने जीवन से बुराईयों को छोड़ देता है परन्तु लोग उसे बदला हुआ देखकर सोचते हैं कि इस पर जादू हो गया है। सचमुच ऐसा खुदाई जादू तो सभी पर होना चाहिए कि जिससे आसुरी स्वभाव वाला मनुष्य बदलकर देवता बन जाये।

हाँ, तो 'ऐन्टी ओम-मण्डली' बनायी गयी थी और उसके प्रधान थे

वह मुखी मंघाराम जी जिनके भड़काये जाने का वृत्तान्त हम ऊपर लिख आये हैं। इन्हीं मुखी मंघाराम जी के पुत्र की धर्म-पत्नी दादा की अपनी बड़ी लड़की थी। कुछ घरेलू खटपट तथा दुर्व्यवहार के कारण दादा की वह पुत्री अपने पिता जी (दादाजी) के यहाँ चली आई थी। अत: मुखी मंघाराम जी बहुत ही गुस्से में थे। उन्होंने अपना साथी बनाया एक अन्य सेठ को। उस सेठ के एक पुत्र की मृत्यु होने के बाद उसकी बहू से, जायदाद के बटवारे के विषय में कुछ झगड़ा था। सेठ की वह बहू दादा के सत्संग में आती थी और वे ओम् मण्डली के निकट ही एक बिल्डिंग में रहती थी। वह सेठ दादा जी का एक मित्र था और प्रशंसक भी था । उसने दादा को कहा कि वह उसकी उस बहू पर दबाव डाले कि वह वापस उसके (सेठ के) घर में जाकर रहे और जायदाद के बटवारे का प्रश्न छोड़ दे। दादा ने इस बात से इन्कार किया क्योंकि एक तो यह उनका अपना निजी, घरेलू झगड़ा था जिसमें दादा ने हस्तक्षेप करना अनुचित समझा और दूसरे, उस बहू का जो कानूनी अधिकार था वह तो उसे मिलना ही चाहिए था। अपना अधिकार माँगने के लिए उसे रोकना दादा को एक अन्याय करने -जैसा कर्म मालूम होता था। परन्तु उस सेठ को यह आशा न थी कि दादा, जो कि उसके पुराने मित्र थे, उन्हें इन्कार कर देंगे। अत: वह भी बहुत क्रोधान्वित थे। अत: मुखी मंघाराम जी ने तथा उस सेठ ने 'ओम् मण्डली' को नीचा दिखाने की बात सोची। उस सेठ ने इस कार्य के लिये 'ऐन्टी ओम् मण्डली' को काफ़ी आर्थिक सहयोग दिया। कुछ दिन पहले तक जो मुखी व सेठ 'ओम् मण्डली' के सत्संग में आते थे और ज्ञानामृत पीते थे, अब उन्होंने शास्त्र-प्रसिद्ध राहू-जैसा पार्ट बजाने की ठान ली। 'ऐन्टी ओम्-मण्डली' का विशेष उद्देश्य यही था कि यदि दादा अथवा 'ओम् मण्डली' सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य की धारणा के प्रचार से न टलें तो उन पर प्रतिबन्ध लगवा दिया जाय। 'ऐण्टी ओम् मण्डली' ने लोगों पर दबाव डाला और इसके परिणामस्वरूप जो कन्यायें या मातायें 'ओम् मण्डली' में सत्संग के लिए

आती थीं, उन्हें उनके माता-पिता, सास-ससुर या पति आदि ने पाँच-पाँच, सात-सात ताले लगाकर कोठरियों में बन्द कर दिया और उन पर सख्त पहरा रखा जाने लगा। उनके साथ ऐसी निर्दयता से व्यवहार किया जाने लगा कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता।

पवित्रता के मार्ग पर चलने वालों पर अत्याचार

पवित्रता की प्रबल शिक्षा देने वाले, धर्म के मार्ग पर चलने का प्रेरणादायक सन्देश देने वाले तथा दृढ़ मन्सा से उच्च आदर्शों की स्थापना करने वाले तथा किसी नवीन विचारधारा को प्रस्तुत करने वाले व्यक्तियों पर इस प्रकार के अत्याचार पहले भी होते आये हैं :—" इतिहास इस बात का साक्षी है। परन्तु लोग इतिहास के इस पाठ से लाभ नहीं उठाते और फिर ऐसी परिस्थिति सामने आने पर अपनी असहिष्णुता का, रूढ़िवादिता का तथा बर्बरता का पाठ फिर दुहराते हैं। अभी सौ वर्ष ही हुए हैं कि लोगों ने स्वामी दयानन्द की स्पष्टवादिता, अंधविश्वास के विरुद्ध किए गये प्रचार, तथा सदाचार- युक्त जीवन के लिए दी- गई शिक्षा के लिए उन पर जगह-जगह पत्थर बरसाये, उन्हें डराया-धमकाया और अन्त में एक व्यक्ति ने उन्हें विष देकर उनका जीवन भी ले लिया। हज़रत ईसा के पवित्र आदेशों-उपदेशों का स्वागत लोगों ने उन्हें शूली पर चढ़ाकर किया। हज़रत इब्राहीम ने जब लोगों को ये शिक्षा दी कि वे जड़ बुतों को देवता मानकर उनकी पूजा करने के बजाय एक परमात्मा को याद करें, तो उन्हें लोगों का कड़ा विरोध सहन करना पड़ा। जब महात्मा बुद्ध ने वर्ग-भेद और जाति - पाँति के भेद को मिटाने तथा सम्यक ज्ञान और सम्यक आचार इत्यादि का उपदेश किया तो उसके चचेरे भाई ने और कर्म-काण्डी पण्डितों ने उनका कड़ा विरोध किया। जब हज़रत मुहम्मद ने मूर्ति पूजा का विरोध किया और कुरीतियों से भरे समाज के सुधार का यत्न किया तो लोगों ने इतना झगड़ा किया कि आखिर उन्हें मक्का छोड़कर मदीना जाना पड़ा। जब मन्सूर ने 'अनलहक' का नारा लगाया तो सभी जानते हैं कि उसके साथ क्या बीती!

सिक्ख लोग अपने गुरुओं के साथ हुए अत्याचारों का वर्णन गुरुद्वारों में इन शब्दों में किया करते हैं :—

''आड़ियाँ नाल चिड़वाये गये, रेताँ विच तपाये गये, खलाँ नुचवाइयाँ गइयाँ, चर्खियाँ ते चढ़ाये गये, पर उन्होंने ''सी'' नई कीती...।'' इतिहास में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि मुगलों के जमाने में नानक देव जी को पकड़ कर उन्हें मजदूरी का काम करने पर लगा दिया गया था। तेग बहादुर जी का भी शीश काट दिया गया था। वीर वैरागी की भी खाल उतार दी गई। गोविन्द सिंह जी के बच्चों को दीवार में ज़िन्दा चिनवा दिया गया था। मीरा को भी गिरिधर के साथ प्रेम करने के कारण विष का प्याला पीना पड़ा था। पुराने जमाने की बात क्यों करें, अभी पचास वर्ष ही तो हुए हैं कि अहिंसा, सत्य और ब्रह्मचर्य के पुजारी तथा प्रचारक तथा स्वतन्त्रता के लिए देश का नेतृत्व करने वाले महात्मा गाँधी को भी गोली का निशाना बनाकर उनकी हत्या कर डाली गयी थी।

केवल धर्म की बलिवेदी पर ही लोगों को कष्ट सहन नहीं करने पड़े बल्कि वैसे भी जब-कभी किसी प्रतिभाशाली व्यक्ति ने समाज को कोई नया सिद्धान्त दिया, चाहे वह सिद्धान्त कितना सच क्यों न हो, लोगों ने उस व्यक्ति को भी आड़े हाथों लिया। उदाहरण के तौर जब गेलिल्लियो ने कहा कि —''पृथ्वी गोल आकार वाली है'', तो बाइबिल को मानने वाले पुराने-पंथी लोगों ने उन्हें नास्तिक अथवा काफ़िर बताकर उन पर बहुत सितम ढाये। ऐसे उदाहरणों से तो इतिहास भरा पड़ा है, कहाँ तक वर्णन करें!

वास्तव में बात यह है कि जनता का यह स्वभाव कि वह एक तो इस बात को भूल जाती है कि एक व्यक्ति डाकू से बदल कर वाल्मीकि बन सकता है, स्त्री की काया के मोह-जाल में फँसे तुलसी की तरह बदल कर रामायण-जैसा काव्य रच सकता है, कबीर की तरह जुलाहा अथवा निम्न जाति का होकर भी समाज को कोई अच्छा पाठ पढ़ा सकता है, भरतृहरि

की तरह राज्यभाग छोड़कर भी वैराग्य-वृत्ति को धारण कर सकता है, बाल्यावस्था में मन को कोई बात अच्छी लग जाने पर हकीकत राय की तरह और गोबिन्द सिंह जी के पुत्रों की तरह अत्याचार एवं कष्ट सहन करने के लिए भी दृढ़ संकल्प वाला हो सकता है।

दूसरी बात यह है कि जनता एक पिटे-पिटाये मार्ग पर ही सदा चलना चाहती है। यदि कोई दूसरा व्यक्ति परिश्रम से कोई अन्य छोटा और अच्छा मार्ग बनाकर, उन्हें अपने अनुभव के आधार पर उस मार्ग पर सुखपूर्वक यात्रा करने के लिए प्रेरित करे तो भी जनता को संकोच होता है। इसलिए, जनता की 'भेड़-चाल' प्रसिद्ध है। इसलिए ही समाज को मोड़ने के लिए सुधारकों को काफ़ी विरोध और कष्ट सहन करने ही पड़ते हैं और कड़ी आलोचना तथा आरोपों के लिए भी तैयार रहना पड़ता है।

तीसरी बात यह है कि जनता की स्मरण-शक्ति इतनी कमजोर है कि वह किसी द्वारा की गई भलाई को, उसके अच्छे कार्य को, उस द्वारा किये-गए उपकार को शीघ्र ही भूल जाया करती है और उसे दूसरे की पलकों में तिनका भी शहतीर की तरह दिखाई देने लगता है और वह वाक्-पटु, बुलियार, स्वार्थी, पुराने-पंथी तथा आतंक ढाने वाले लोगों का जल्दी साथ दे दिया करती है अथवा उन्हें अपना साथी बना लिया करती है।

बस, ठीक यही बात 'ओम् मण्डली' तथा बाबा के साथ हुई। लोगों ने यह जानने की कोशिश ही नहीं की कि दादा, जोकि स्वयं एक गृहस्थ और व्यापारी थे, उन्होंने स्वयं किससे पवित्रता अथवा सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य का यह पाठ पढ़ा और दादा जी को जो दिव्य साक्षात्कार हुए, वह साक्षात्कार कराने वाली शक्ति कौनसी थी? जो माताएँ पहले घर में घूँघट ओढ़े चार दीवारी में, पिंजरे के पंछी की तरह, कैद रहती थीं और बेजुबान थीं, उन्हें उच्च ज्ञान का कथन करना किसने सिखा दिया था और उनको इतना आत्मिक बल किसने दिया था। दादा को कलियुगी सृष्टि के महाविनाश और सतयुगी श्री कृष्ण-राज्य की सृष्टि के जो दिव्य साक्षात्कार हुए थे,

उनका सम्पूर्ण उल्लेख क्या था और उस पूर्व-दृष्टि (भविष्य-दर्शन) के अनुसार जब व्यक्ति का तथा समाज का क्या कर्त्तव्य था? लोगों को तो चर्म-चक्षुओं से साधारण-सा मनुष्य, दादा लेखराज ही दिखाई देता था। दादाजी के तन में प्रवेश करके ब्रह्मचर्य का पाठ पढ़ाने वाले परमपिता परमात्मा शिव को तो वे देख ही न सकते थे क्योंकि प्रभु का दिव्य अस्तित्व तो दिव्य दृष्टि से ही जाना जा सकता है जबकि उन लोगों में दिव्य दृष्टि का अभाव था। अत: वे अपने संस्कारों, मन्तव्यों तथा आदतों से मजबूर थे। दूसरी ओर स्वयं दादा ईश्वरीय शक्ति के सामने मज़बूर थे। ऐसी परिस्थिति में वह प्राय: सिन्धी में एक मुहावरा कहते थे –''वाट वेन्दे बाम्भण फाथो''। इसका भाव यह था कि जैसे अपनी राह जाते हुए किसी ब्राह्मण को खाहमखाह किसी कार्य में कोई बाँध ले, वैसे ही मेरे साथ हुआ है। (दादा तो अपने गृहस्थ तथा व्यापार में व्यस्त रहते थे परन्तु परमपिता परमात्मा शिव ने ही तो उनमें दिव्य प्रवेश अथवा सन्निवेश करके उनके मुख द्वारा पवित्र जीवन का पाठ पढ़ाया था।) अत: दादा उन लोगों को दोषी नहीं मानते थे बल्कि कहते थे कि –''इन्हें परमपिता परमात्मा की पहचान नहीं है, इसलिए ही ये लोग वैर विरोध करते हैं। ये लोग इस भ्रान्ति मे है कि मैं यह कार्य करा रहा हूँ, इन्हें यह तो मालूम ही नहीं है कि मैं स्वयं भी ईश्वरीय बन्धन में बँधा हुआ हूँ। परमात्मा का अपना तो कोई तन है नहीं, इसलिए जब वह मेरे तन में आ कर इन्हीं के कल्याण के लिए इन्हें ब्रह्मचर्य व्रत की शिक्षा देते हैं तो यह अपने सामने मुझे देखकर मुझ पर ही गाली रूप फूल चढ़ाते हैं। इनका दोष नहीं है क्योंकि इन्हें ऐसे ग्रंथ और शास्त्र पढ़ाये गए हैं जिनमें लिखा है कि 'ब्रह्मा सरस्वती पर मोहित हो गया', 'शंकर मोहिनी को देखकर कामातुर हो गया', 'श्रीकृष्ण ने गोपिकाओं के चीर हरण किये', आदि-आदि, और ऐसे-ऐसे आख्यान अथवा कथानक सुन संसार में यह काम विकार की रीति-रस्म तो सदा से चली आई है। काम महाशत्रु है –''यह पाठ अब वे बिल्कुल भूल चुके हैं।

अत: कोई बात नहीं है।'' बाबा यह भी कहा करते थे कि —''निन्दा हमारी जो करे मित्र हमारा सो। ये लोग जानते ही नहीं कि मेरे द्वारा कौन इनको और मुझे भी शिक्षा दे रहा है।''

'ओम् मण्डली' में आने वाले नर-नारी भी अपने अनुभव के आधार पर यह गीत गाते थे :—

शाहे-जहाँ[१] शुद्ध सेवा करने,
'दादा' को क्षेत्र बनाया।
अपने को है छिपाया।
अज्ञान अंधेरे में सोते थे सब,
पाँच विकारों में रोते थे सब,
देह-अभिमान में खोये थे सब,
मोह-माया के मतमातों को,
उस प्रभु ने आज जगाया।
ज्ञान से आन जगाया।
अपने-आप सभी-कुछ करके,
अपने-आप छिपाया।
हरा-भरा गुल्ज़ार खिला है,
विराट्-सृष्टि का खेल खिला है,
देख-देख अतीन्द्रिय सुख होवत,
अखियन ज्योति जगाया।
शाहे-जहान शुद्ध सेवा करने,
दादा को क्षेत्र बनाया।
अपने-आप को है छिपाया।

परन्तु दूसरी ओर 'ऐन्टी ओम् मण्डली' के दबाव के कारण दिनोंदिन लोगों में जोश बढ़ता जाता था और वे कन्याओं और माताओं पर

१. यहाँ 'शाहों के शाह' शिव परमात्मा को 'शाहे जहान' कहा गया है।

अधिकाधिक अत्याचार करने लगे थे। मारने-पीटने के अतिरिक्त वे जबर-दस्ती उनको सूअर आदि-२ का माँस खिला कर उन्हें धर्म-भ्रष्ट करने की कोशिश करते थे। वे जादूगरों को बुलाकर कहते कि —"इस कन्या या माता पर शायद जादू हो गया है, इस पर हुआ जादू उतार दो।" वे उनको चारपाइयों से बाँध कर उनके हाथों को पायों के नीचे दबाकर, स्वयं चारपाई पर चढ़ बैठते थे और कई दिन तक उन्हें कमरे में बन्द कर देते थे। कुछेक कन्याओं के हाथों पर उनके सम्बन्धियों ने बहुत निर्दयता से हावन वाले दस्ते भी मारे थे।

ओह! हरेक बन्द की-गई कन्या-माता की एक ऐसी दर्दनाक कहानी है जिसका यदि उल्लेख किया जाय तो सुनने-पढ़ने वालों की आँखों से आँसुओं की अटूट धारा बह निकलेगी। वे सोचेंगे कि क्या ब्रह्मचर्य व्रत के पालन के लिए इन्हें इतना सहन करना पड़ा!! पुरुष लोग यदि पवित्रता अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहते हैं तब वे तो घर-बार छोड़कर, संन्यास कर के स्त्री को विधवा और बच्चों को यतीम बनाकर चले जाते हैं, परन्तु कन्याएँ-माताएँ यदि घरों में रहते हुए, सेवा करते हुए भी ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहें तो क्या उन देवियों-शक्तियों पर ऐसा जुल्म व सितम! हाँ, अब तक तो संसार की ऐसी ही चाल रही है! लोग एक ओर तो हर वर्ष नवरात्री के पर्व में पवित्र कन्याओं को 'जगदम्बा' मानकर पूजते है और उनके चरण धोते है और जब प्रेक्टीकल रीति कन्याएँ इस उत्तम व्रत का मनसा, वाचा, कर्मणा पालन करके उस पवित्र पद को प्राप्त करने का पुरुषार्थ करती हैं तो वे उनके हाथों पर हथोड़े मारते और उन्हें एक पशु की तरह मोटी-मोटी जंजीरों से बाँध देते हैं!! वाह रे इन्सान, तू अपनी दौलत और जवानी के नशे में चूर होकर इतने अत्याचार करता है कि तुझे 'नेकी' और 'बदी', अच्छाई और बुराई का भी भेद भूल जाता है! तुझे यह भी ख्याल नहीं रहता कि आखिर एक दिन यह सब मिट्टी में मिल जाना है। गरीब और अबला माताओं पर तू इतना अत्याचार करता है!! कवि के

इन वचनों पर ध्यान नहीं देता :—

दौलत के झूठे नशे में हो चूर,
गरीबों की दुनिया से रहते हो दूर
अजी एक दिन ऐसा आयेगा
जब माटी में सब मिल जायेगा।
माटी ही घर और सब माटी
माटी का तन बन जायेगा
हाँ, माटी में सब मिल जायेगा!
ऊँचे आसमान से भी ऊँची तेरी आस है
पर कभी सोचा नहीं गिनती के तेरे श्वास हैं
इसका तू हिसाब कर, अँगूठा अँगुलियों पे रख,
कितने खर्च कर रहा है भलाई में
कितना तू लगा रहा बुराई में।
भलाई का फल रह जायेगा
बाकी माटी में सब मिल जायेगा!

उन अत्याचारों के विषय में ब्रह्माकुमारी गंगा जी, जोकि वर्तमान समय कानपुर में ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की इंचार्ज हैं, लिखती हैं :—

मैं जब से 'ओम् मण्डली' में जाने लगी थी तब से मेरी खुशी दिनोंदिन बढ़ती ही जाती थी। वहाँ का वातावरण ही ऐसा शुद्ध होता था कि आत्मा को शान्ति का अनुभव होता था। अन्तर आत्मा में ऐसा महसूस होता था कि जन्म-जन्मान्तर की प्यास बुझ रही है। 'ओम् मण्डली' में जो ज्ञान दिया जाता था, उसमें मन विषय-विकारों से हट जाता था और नेकी और पवित्रता के मार्ग पर लग जाता था। वहाँ ज्ञानामृत का प्याला पीने वाले स्वयं को देह रूपी मिट्टी का पुतला नहीं मानते थे बल्कि अविनाशी आत्मा मानते थे। वहाँ इस प्रकार के गीत गाये जाते थे :—

बन्दे देह का अभिमान तोड़,
देह का अभिमान तोड़ ।
देही से नाता जोड़, बन्दे .....।
अब आयु तेरी क्षण-भंगुर यहाँ,
देह से नाता तोड़ ।
देही से नाता जोड़, बन्दे .....
आयु तेरी क्षण-पल- घड़ियाँ,
माया से नाता तोड़ ।
बन्दे, प्रभु से नाता जोड़, बन्दे .....
न कोई तेरा संगी-साथी,
फिर पर-तन चोरी क्यों हो जाती
मिलना है तो प्रभु से मिल ले,
मिलना है तो अहम् से मिल ले ।
देही से नाता जोड़, बन्दे .....
'अहम्' ने निज का घर बनवाया,
इसमें अपने आप बिठाया।
बन्दे, देह का भान अब तोड़, बन्दे ....
'अहम्' ने अपने 'मम्' को बनाया,
मम् में अपने को है बिठाया।
'मम्' से विलग होकर बन्दे,
अहम् से नाता जोड़।
बन्दे, प्रभु से नाता जोड़, बन्दे .....।

अत: हम देह-अभिमान को छोड़ कर देही-निश्चय बनने का अभ्यास करती थीं। इसके फलस्वरूप हमारी उपराम-वृत्ति और ईश्वरीय लगन को देखकर हमारे लौकिक सम्बन्धी घबराने लगे। वे सोचने लगे कि –"यदि ये इन्हीं बातों में रमण करती रहेंगी तो न मालूम आगे चलकर क्या होगा?

इसलिए, इस मार्ग से इसे हटाना चाहिए । उन्हें ओम् मण्डली में जाने वाली अन्य कन्याओं-माताओं तथा पुरुषों के सम्बन्धियों से भी यही मालूम हुआ था कि 'ओम मण्डली' में जाने वाले नर-नारी विषय- विकारों को छोड़ देते हैं और पवित्र जीवन व्यतीत करते हैं। अब हमारी माता जी को तथा हमारे भाई- बान्धवों को आसुरी स्वभाव के लोगों ने भड़काया और उन पर दबाव डाला कि इन्हें 'ओम् मण्डली' में जाने से रोको। वे कहते थे —''ये लोग विषय-भोग नहीं करेंगी तो सृष्टि कैसे बढ़ेगी? यह तो कोई निराला ही सत्संग है जहाँ जाने वाले लोग ब्रह्मचर्य का पालन करने लग जाते हैं, अत: इन्हें सत्संग में नहीं जाने देना चाहिए। ये लोग पागल हैं जो सत्संग मे पवित्रता की चर्चा सुनकर ब्रह्मचर्य का पूर्णतया पालन करने लग जाते हैं।'' इस प्रकार, कई गन्दे संस्कारों के लोग हमें पागल समझते थे परन्तु हम अपने मन में उन्हें 'पागल' समझती थीं क्योंकि वे प्रतिदिन 'ओम जय जगदीश हरे....' इस प्रकार आरती करते हुए —**'विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा ....' गाते तो थे और 'मैं मूरख, खल कामी....' भी स्वयं को मानते थे परन्तु प्रेक्टीकल जीवन में 'काम महाशत्रु' को छोड़ते नहीं थे।** वे भगवान् की मूर्ति के सामने तो स्वयं ही को 'मूर्ख, खल, कामी', मानते थे परन्तु घर में आकर, हमें, जोकि 'काम विकार को नरक का द्वार मानती थीं', पागल कहते थे। उस समय हमारे मन में यह आवाज उठती थी :—

बन्दे कहते मुझको पागल,
मैं कहती हूँ बन्दे पागल
अहम् आत्म निश्चय मुझको,
माया इन्हें भरमाती है।
कौड़ी-बिना मैं बादशाह,
वे माया के पीछे मरते है।
वे काम-क्रोध को छोड़ न सकते,

अब हमसे भी झगड़ते हैं।
देही-अभिमानी जीवन-धन मोरा,
'ओम्' का ताज है मेरे सिर पर।
देह-अभिमानी गुलाम बने हैं,
माया की टोपी उनके सिर पर।
ज्ञान-सरोवर नहाती मैं,
वे विषय-गर्त में गिरते हैं।
दैवी जन्म है मुझको हासिल,
वे दु:खी हो भटकते हैं।

अत: हम उनको कहती थीं –''आप हमें सत्संग में जाने से क्यों रोकते हैं? अगर हमारे जीवन में कोई बुराई आई हो तो आप बताइये! हम घर का सारा काम-काज करती हैं, फैशन नहीं करती हैं, सिनेमा नहीं जाती है, माँस-मदिरा का प्रयोग नहीं करती है, किसी से लड़ती-झगड़ती या फालतू घूमती भी नहीं है। आपने हममें क्या बुराई देखी है कि आप सत्संग में जाने से हमें रोकते हैं? वे हममे कोई बुराई तो बता न पाते। उनके मन में तो बस यही था कि यह निर्विकार बनने का पुरुषार्थ कर रही है और हमें इसका विवाह (विकारी विवाह) अवश्य कराना है। अत: उन्होंने मुझे अब सत्संग में जाने से रोकना शुरू किया। उन्होंने कई बार कोठरी में बन्द करके ताला लगाया और कई बार खाना नहीं दिया। कई बार मारा भी। परन्तु हमें जो अविनाशी सुख का आधार मिला था, हम उसे छोड़ कैसे सकती थीं? हम फिर-फिर 'ओम् मण्डली' के सत्संग में जाती थीं । हमारे मन में तो ये शब्द गूँजते थे :–

'ओम् मण्डली' की गत न्यारी बहनो,
मण्डली की गत न्यारी।
'ओम् मण्डली' जब से निकली
गीता-ज्ञान की सुगंधि फैली।

विराट् गुलशन बना है भारी, री बहनों ....
तीव्र-वेगी अर्जुन-सम होकर,
ब्रह्म-ज्ञान, से मोह नष्ट कर ।
बनो ज्ञान-भण्डारी, री बहनों ....
ब्रह्म-ज्ञान की शंख-ध्वनि कर,
'ओम्' के अर्थ के रथ पर चढ़ कर।
मन-वश करो महतारी, री बहनों....

अत: हम अपने माता-पिता को स्पष्ट शब्दों में कहती थीं कि भोजन न खाने के बिना तो हम रह सकती है परन्तु हम ज्ञानामृत पिये बिना नहीं रह सकतीं, इसलिए, आप हमें सत्संग में जाने दिया करो। उन्होंने देखा कि यह टलती नहीं है। अत: उन्होंने एक जादू-टोने वाले को बुलाकर कहा कि इस पर जादू हो गया है, इस पर से जादू उतारो। उसने जादू निकालने की कोशिश की। कई मन्त्र पढ़े और घोलकर मुझे जबरदस्ती पिलाये। परन्तु ईश्वरीय जादू के आगे मनुष्य का जादू कहाँ काम कर सकता था? आखिर उसने अपने मन में हार मान ली क्योंकि वह समझ गया कि इसकी तो प्रभु से सच्ची प्रीति लगी है।

अब हमारे लौकिक सम्बन्धियों को हम पर बहुत गुस्सा (क्रोध) था । हम 'ओम् मण्डली' से ईश्वरीय ज्ञान के जो लिखित पन्ने ले आती थीं जिन्हें कि हम वाणी या मुरली कहती थीं, मुझे न पढ़ने देते। मैं शान्त-समाधि में बैठती थी तो भी वे विघ्न डालते थे और नहीं बैठने देते थे। वे मुझ पर बहुत सितम ढाते थे। परन्तु वे हम पर जितना-जितना अत्याचार करते थे, उतना-उतना हमें ऐसा महसूस होता था कि ये सब स्वार्थ के सम्बन्ध है। हम सोचते थे कि पता नहीं ये किस प्रकार के लोग हैं? यह कैसा जमाना है? यह कैसा संसार है? क्या इनको ज्ञानामृत अच्छा ही नहीं लगता, इन्हें विषय-विकारों की मोहिनी-माया ने इतना मोहित कर लिया है? तब हमारे मन में यह पद मुखरित हो उठते :–

अहो माया पुरुषों को क्यों नचाती हो?
पिलाकर विषय-रस बोतल,
विकारी क्यों बनाती हो?
अज़ब इसरार तेरी फाँसी,
भुलाया सबने है निज देश।
फँसा कर मोह अपने में,
दु:ख की चक्की में पिसाती हो।

तब हमें श्रीमद्भागवत् में गोपियों के चरित्र याद आते जो कि हम बचपन से ही सुनती चली आ रही थीं। उसमें हमने पढ़ा था कि भगवान् की मुरलियाँ सुनकर गोपियाँ मस्त हो जाती थीं और वे भाग कर वहाँ पहुँच जाती थीं। परन्तु उनके लौकिक सम्बन्धी, पुरुष आदि उन्हें रोकते थे। तब हम ये वृत्तान्त पढ़कर सोचा करती थीं –''क्या गोपियों को भगवान् की बँसरी सुनाई देती थी, उनके सम्बन्धियों, पुरुषों आदि को सुनाई नहीं देती थी या रसीली नहीं मालूम होती थी?'' अब हमने अपने प्रेक्टीकल अनुभव से जाना कि हम तो ज्ञान- मुरली को सुनकर अतीन्द्रिय सुख से फूली नहीं समाती हैं परन्तु हमारे लौकिक सम्बन्धी, भाई-बान्धव आदि हमें मुरली सुनने के लिए जाने से रोकते हैं। अत: हम स्वयं को बहुत ही भाग्यशालिनी समझती थीं कि हम वही 'ज्ञान-गोपिकाएँ' हैं। अत: स्वयं ज्ञानामृत न पीने के कारण हमारे लौकिक सम्बन्धी हम पर जो अत्याचार करते थे उसे हम खुशी-खुशी सहन करती थीं। उन अत्याचारों की कहानी तो बहुत लम्बी है।

एक दिन मेरी लौकिक माता जी को विचार आया कि –''इस कन्या का विवाह कर दिया जाय ताकि इसका मन सत्संग से हट कर संसार की बातों की ओर, खाने-पीने, पहनने और भोगने की ओर लग जाये।'' परन्तु मैं तो विकारी शादी को बर्बादी मानती थी। अत: मैंने उन्हें कहा –''माता जी, मैं तो ज्ञान- मीरा हूँ, मेरा तो एक 'गिरिधर गोपाल' ही है, दूसरा कोई

नहीं है। मैं तो उसी की हो चुकी हूँ, मेरे मन की सगाई प्रभु से हो चुकी है, अब दूसरे किसी से कैसे होगी? मैंने तो मन में मोहन को बसा लिया है, अब दूसरे किसी के लिए स्थान ही कहाँ रहा है?

मेरी ये बातें सुनकर मेरे लौकिक सम्बन्धियों को बहुत क्रोध आया। उन्होंने एक बार तो ऐसा मारा कि क्या कहूँ? वे बोले —"जब तक तुम शादी के लिए हाँ नहीं करोगी तब तक तुम्हें मारेंगे और मार-मार कर तुम्हें खत्म कर देंगे! बोलो अपने मुख से कि —'मैं शादी करूँगी।'"

मैंने कहा —"मैंने तो आपको अपने मन की सच्ची बात स्पष्ट रीति से बतला दी है कि मैं 'मीरा' बन चुकी हूँ, मैं गिरिधर गोपाल की हो चुकी हूँ। अब मैं विकारी शादी नहीं करूँगी।" 'ओम् मण्डली' में जाने वाली हम कन्याएँ तो वासना के मतवाले पुरुष से शादी करने के विरुद्ध थीं और कहा करती थीं :—

खबरदार होकर सुनो प्यारी बहनो,
अज्ञानी नरों से सगाई न करना।
हैं आज कल के विकारी बने नर,
क्षणिक प्रेम में फंस-तबाह न करना।
खाते माँस-मदिरा, बने सर्व-भोगी,
ऐसे विकारी का दर्शन न करना।
खोया चाल-चलन है बुरी संगतों में,
भला ऐसे नर का भरोसा क्या करना
करो देख ज्ञानी पति प्यारी बहनों,
केवल रूप-धन पर कच्चाई न करना
स्वधर्म न भूले घड़ी एक भी जो,
ऐसे पति का पल्ला तुम पकड़ना
स्वयंवर लिए खूब सोचो-विचारो,
सीता सती-सम गले फूल धरना

फलेगा फूलेगा, गुल जो खिलेगा,
जगत् का उद्धार वह निश्चय समझना।

परन्तु हमारी पवित्रता की बातें उन्हें समझ नहीं आती थीं । अत: एक दिन उन्होंने मुझे अंधेरी कोठी में बन्द कर दिया, जंजीरों में बाँध दिया और मेरे हाथों पर दस्ते (हावन वाले) मारे। परन्तु मेरे लिए वह अन्धेरी कोठरी भी रोशन थी। उन्होंने मुझे भोजन देना भी बन्द कर दिया। दो-तीन दिन के बाद मुझे भूख तो अवश्य लगी, परन्तु उतनी ही प्रभु से मेरी लगन तीव्र तर हुई। अन्दर ही अन्दर मैं प्रभु से कहने लगी –"प्रभु, आप तो कन्हैया लाल हैं? हम कन्याओं की रक्षा करने में आपने देर क्यों लगाई? देखो तो, हम पर ये लोग कितना सितम ढाते हैं? प्रभु मेरी लाज बचा लो। प्रभु, हमें इन विकारी सम्बन्धियों की जंजीरों से छुड़ाओ :–

प्रभु जी, प्रभु जी, तुम राखो लाज हमारी
मन की बात छिपी नहीं तुमसे गोवर्धन गिरिधारी
राखो लाज हमारी....
माया ने था जाल बिछाया और पिंजरा था लोहे का
मन पंछी उसमें फँसा था किस्मत में था रोने का
अब इनके बन्धन से तुम्हीं छुड़ाओ, सुनो दया के भण्डारी
राखो लाज हमारी ....

इसी बन्धन में मैं एक विचित्र अनुभव करने लगी। विरह-वेदना में डूबी, मैं देह की सुध-बुध भूल गयी थी। मुझे अपने सामने श्री कृष्ण बन्सरी बजाते हुए दिखाई दिये। बस, उस सुन्दर-मूर्त को देखते ही मैं तड़पती हुई आत्मा तृप्त हो गयी। मुझे मन में बहुत हर्ष हुआ। मुझे सूक्ष्म आवाज में वह कहते हुए मालूम हुए कि – "अब तुम्हारे बन्धन जल्दी कट जायेंगे। घबराओ नहीं । अब मैं साकार हो चुका हूँ।" इस अनुभव के साथ-साथ मुझे अन्दर ऐसा भी अनुभव हुआ कि मुझे भूख-प्यास बिल्कुल नहीं है,

मुझे तो सब कुछ मिला ही हुआ है। मेरा शरीर पहले भी कमजोर था और निर्बल- सा था, अब कई दिन भूख-प्यास के कारण और भी क्षीण हो चुका था, परन्तु इस साक्षात्कार के बाद अब मुझे आत्मिक शक्ति का विशेष अनुभव हो रहा था और देह की दुर्बलताएँ नहीं भास रहीं थीं।

तीन दिनों के बाद द्वार खोलकर लौकिक सम्बन्धियों ने फिर मुझसे पूछा — ''अब बताओ, क्या सोचा है? (विकारी) शादी करोगी न? देखो, अपना हठ छोड़ो। एक बार अपने मुँह से कह दो कि —''मैं 'ओम् मण्डली' में नहीं जाया करूँगी और शादी भी करूँगी।''

मैंने कहा – ''आप यह क्या कह रहे हैं? आपने अभी तक हमें नहीं पहचाना। देखो, मेरी बात सुन लो! इस लगन की अग्नि बुझने वाली नहीं है। यह दबाने से दबने वाली भी नहीं है। हाँ, अगर मैं इस लगन में शरीर छोड़ दू तो मैं आत्मा तो प्रभु की स्मृति में स्थित होकर स्वर्ग के द्वारे आऊँगी ही परन्तु आप एक बात कर लेना। मेरी लाश को एक बार 'ओम् मण्डली' के सत्संग के द्वार के सामने से ज़रूर ले जाना।''

वे आश्चर्यान्वित होकर तथा कुछ निराश, कुछ रुष्ट और कुछ क्रुद्ध होकर कहते —''तुम अभी तक भी नहीं बदली! क्या तुम नहीं मानोगी?''

मैं कहती —''देखो, मैं इतनी कायर नहीं हूँ जितना आपने मुझे समझा है। हम सितम सहन करने वाली कन्याएँ-माताएँ हैं। हम वही कन्याएँ माताएँ हैं जिनके लिए किसी कवि ने कहा है कि :—

हर दु:ख सहने वाली, मुँह से कुछ न कहने वाली
त्याग और सेवा में जो दुनियाँ से न्यारी है
धरती के धीरज वाली यह भारत की नारी है
भारत की नारी है, भारत की नारी है
गंगा-जैसी नर्मल है, जमना-जैसी काया
ऐसी देवी अपने सिर पर ले ले दोष पराया
ये कुर्बानी करने वाली, और मरजीवा बनने वाली

जिसके बलिदानों के आगे दुनिया हारी है
धरती के धीरज वाली यह भारत की नारी है।
यह भारत की नारी है।

अत: आप अत्याचार कर लो, हमें उसकी कोई चिन्ता नहीं है। हमने इस ज्ञान के बल पर, प्रभु के प्रेम के लिए धीरज करना तथा अत्याचार सहना खूब सीख लिया है। परन्तु, देखो, कहीं इन अत्याचारों का परिणाम आपको न भोगना पड़े क्योंकि हमारे रक्षक स्वयं भगवान् हैं! हमें आप पर इसलिए दया आती है कि आप प्रभु को नहीं पहचानते और हमें भी नहीं समझते और यों ही हमें मार-मार कर पाप अपने सिर पर मोल लेते हो।''

उन्होंने मुझे फिर जंज़ीरों में बाँध दिया। लगभग दो मास मेरी ऐसी हालत रही। आखिर मेरी बड़ी बहन विलायत से आई। उन्होंने मेरे लौकिक सम्बन्धियों को कहकर मुझे जंज़ीरों से छुड़ाया। परन्तु उसके बाद भी काफी समय तक वे मुझ पर अत्याचार करते रहे। मैं अपने लौकिक सम्बन्धियों को कहा करती थी कि आप हमारे शरीर के मालिक हैं परन्तु आत्मा का मालिक तो एक परमात्मा ही है। अत: आप जब तक चाहें हमारे शरीरों को बाँध दीजिये परन्तु आत्मायें तो ईश्वर की पुत्रियाँ हैं और उनके पास बिक चुकी हैं।

परन्तु वे लोग ये सब बातें कहाँ सुनते थे? एक ओर तो भारतवासी देवियों की मूर्तियाँ बनाकर उन्हें पूजते हैं और दूसरी ओर उन्हें पूजकर डुबो देते हैं। यही हाल उनका अब हमने प्रेक्टीकल देखा कि ये लोग पवित्र कन्याओं और देवियों के चित्र तो पूजते हैं और जब हम स्वयं वैसा बनने का पुरुषार्थ करती हैं तो ये हम पर अत्याचार करते हैं। तभी तो हमारा मन बोल उठा :—

तन मानुष का निज मन्दिर
जहाँ आत्मा बिराजे अति सुन्दर
'अहम्' रथ पर हो सवार

आये हम विराट् संसार
एक कौतक देखा यहाँ आकर
क्या कौतक देखा यहाँ आकर?
देवी की सजाय मूर्ति
देवता की सजाय मूर्ति
तोड़-फोड़ एक पत्थर
हाँ, तोड़-फोड़ एक पत्थर
हाँ, तोड़-फोड़ एक पत्थर!
भेंट-भोग सब डाल सामने
देवी को दिखलाकर कहते,
प्रेम भाव से पूज देवी को
प्रेम भाव से पूज देवता को
फेंकते समुद्र में और कहते
डूब जा, डूब जा, डूब जा!

देवियों की पूजा करके उनकी मूर्तियों को जल-निमग्न करने के अतिरिक्त एक और भी कौतुक हमने देखा। वह यह कि ये लोग संन्यासियों के चरण छूते हैं। उनके आगे नतमस्तक होते हैं। क्यों? इसी कारण ही कि वे ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। कन्याओं के आगे माथा टेकते हैं परन्तु जब वही कन्या विवाह कर लेती है तब वह जो पहले पूज्य कन्या थी, अब लज्जा के मारे घूँघट में मुँह छिपाकर सबके आगे झुकती और माथा टेकती है। अन्तर क्या पड़ा उस कन्या में और इस माता में? यही न कि उसने कुमारी व्रत को छोड़कर 'काम' को मन में बसाया है। तो आज जब हम पवित्र बनना चाहती हैं, कुमारी व्रत का पालन करना चाहती हैं तो वे हमें मारते-पीटते हैं! जैसे नाक-कटे पंथ वाले दूसरों को भी नाक-कटे बनाना चाहते है, अर्थात् पवित्रता, जो मनुष्य का स्वमान है, उसे नष्ट करना चाहते हैं। तभी तो हम विकारी शादी द्वारा जीवन बर्बाद करने वाली नारियों से

कहती हैं :—

''विकारी शादी की जंजीर बँधी
बर्बादी की राह गन्दी है।
तुम राह रूहानी भूली हो,
यह विषय-पान एक सूली है।
जब ज्ञान हिन्डौले झूलेंगीं,
जब प्रेम हिन्डोले झूलेंगी।
जब प्रेम हिन्डोले झूलेंगीं,
जब प्रेम हिन्डोले झूलेंगीं।
जब शान्ति-समाधि झूलेंगीं,
तब सुधबुध सारी भूलेंगीं।
मेरे दिल में होता दीदार नया,
स्वयंवर का श्रृंगार नया।
तब पहनूँगी ताज नया,
खुल जावेंगी नयना, हाँ नयना।
अम्मी तुम पिंजरे की मैना,
तुम पिजरें की मैना।
तुम रोती रिड़ती सब दिन में
हम हँसती फिरती गुरुकुल में
हम हँसती फिरती गुरुकुल में
तुम निभाग की नथ पहनी हैं,
हम सदा सुहागिन होती हैं .....।''

परन्तु कोटि-कोटि मनुष्यों में से कोई विरला ही इन बातों को सुनता है। जिन माताओं ने अब ज्ञानामृत पिया था, उन्होंने तो अब पवित्रता अथवा ब्रह्मचर्य व्रत को पालन करने का प्रण किया क्योंकि अब उन्होंने ज्ञान-रस चख लिया था। अत: वे भी अब मानव को ललकार कर कहती थीं :—

मत पी ओ बेहोश विकारी,
मत पी ओ बेहोश विकारी।
तुम ज्ञानामृत पीते रहना,
तुम विषय-जहर कभी न पीना।
ज्ञान-अमृत है रूहानी प्याला,
पीने से है आनन्द निराला।
बन पड़ता है सम नन्दलाला,
मुकुट और कमण्डल वाला।
पीकर अमृत जीते रहना,
मानसरोवर का झरना।
हाँ, मत करना संग-दोष ,
विषय से दूर हटना तीन कोस।''

इस प्रकार सम्बन्धियों द्वारा अत्याचार सहन करने की हरेक माता-कन्या की अलग-अलग कहानी है। परन्तु लोगों की आँखों में माया ने ऐसी धूल डाल रखी थी कि वे इन कन्याओं-माताओं की ऐसी ज्ञान-निष्ठ अवस्था देखकर स्वयं को सौभाग्यशाली मानने की बजाय वे इन पर अत्याचार करते थे।

इस प्रकार विकारी लोगों के अत्याचार दिनोंदिन बढ़ते जाते थे। परन्तु क्या किसी के शरीर पर बन्धन डालने से उसके मन को कोई बाँध सकता है? नहीं-नहीं। अत: माताओं-कन्याओं के मन को काई भी नहीं बाँध सका। बुद्ध के पिता ने बुद्ध अथवा गौतम को राजमहलों में बाँधने की कोशिश की तो उसका क्या परिणाम हुआ? गौतम घर से ही भाग निकला। दयानन्द जी अथवा मूलशंकर को घर की सीमा में ही रखने की कोशिश उसके पिताजी ने की, परन्तु क्या दयानन्द, जिन्हें ज्ञान की प्यास थी, उसे बुझाये बिना रुक सके? शंकराचार्य की माता ने उन्हें कई बार घर में रहने के लिए तथा विवाहित जीवन के लिए तैयार करने की कोशिश की परन्तु वह तो

नदी में मगरमच्छ द्वारा पकड़े जाने का बहाना बनाकर आखिर छुट्टी पाकर ही रहे। गोविन्द सिंह जी के बच्चों को दीवार में जीवित अवस्था में चिने जाने की धमकी देकर भी धर्म बदलने के लिए कहा गया, परन्तु क्या वे अपने धर्म-मार्ग से टले? नहीं, अत्याचार को सहन करके तो उन-उनकी धर्म-निष्ठा और भी बढ़ी!

इसी तरह, अब इन कन्याओं-माताओं पर जो अत्याचार हुए उसका परिणाम तो यह हुआ कि उन कन्याओं-माताओं का अपने सम्बन्धियों से मोह टूट गया और उन्होंने उनके प्यार के खोखलेपन की तथा उनकी स्वार्थपरता को अच्छी तरह जान लिया। पति से मिली असह्य पीड़ाओं से पत्नी के मन में यह विचार आया कि –''ओह। जिस पति को हम 'परमेश्वर' और गुरु मानती रहीं उसका भी बस केवल काम-वासना का ही हमारे साथ सम्बन्ध था। सच्चा प्यार उनके मन में भी नहीं था। उन्होंने हमें विषय-भोग की एक गुड़िया समझकर ही घर में लाया था, तभी तो आज वासना-भोग की अतृप्ति में वे हम पर सितम ढाते हैं। अरे, सचमुच ये सभी झूठे नाते हैं। हम सिनेमा जायें, इनकी वासना की भूख, इनकी पशु-वृत्ति पूर्ण करें, इनकी बात मानकर माँस खायें और शराब पीयें तो हम इनके घर पर रह सकती हैं, परन्तु यदि हम अच्छे मार्ग पर चलें और प्रभु की आज्ञा को मानें तो ये हमारे शत्रु हो जाते हैं। हमें वे ज्ञानामृत पीने के लिए सत्संग में जाने भी नहीं देते क्योंकि इसमें भी वह लोग अपनी स्वार्थ की सिद्धि में रुकावट देखते हैं। हाय, हमारे माता-पिता भी लोक-लाज की जंजीरों में जकड़े हुए से, हमारे लिए कुछ भी करने में असमर्थ हैं। अरे-रे, जिन्हें हम धर्म के ठेकेदार मानते थे, जो शास्त्रों और ग्रन्थों से मीरा,शीतला, सरस्वती आदि की कथाएँ सुनातें थे, और ब्रह्मचर्य के गुण गाते न थकते थे, आज सरमायादार भाई-बन्धों के सामने उन पंडितों की भी तूती नहीं बोलती, उन कथा-वाचकों की भी जिह्वा नहीं हिलती, बल्कि समाज में भ्रष्टाचार के पोषक तत्वों के वे भी साथी बन गये हैं!! ठीक है, आज हमारी आँखें खुल

गई है इस जुल्म व सितम से हमें सचमुच यह लाभ हुआ है कि हम सगे-सम्बन्धियों के वास्तविक रूप को आज अच्छी तरह जान सकी हैं। प्रभु, सचमुच आप ही हमारा एक मात्र सहारा है, इस जगह में हमारा दूसरा कोई नहीं है। हमारे प्राण भले ही जायें, परन्तु प्रभु, हम अपने पवित्रता रूपी धर्म को अब बिल्कुल नहीं छोड़ेंगी।''

तो अपने बर्बरता-पूर्ण व्यवहार से लोगों ने कन्याओं-माताओं को और भी दृढ़ प्रतिज्ञा वाला बना दिया। यदि वे उनसे स्नेह पूर्वक कुछ कहते अथवा उनकी बात सुनते तो बात न बढ़ती। परन्तु अब तो दोनों ओर से मन का नाता टूट चुका था। जब पति देखता कि जिस स्त्री को मैं (झूठे) विषय-सुख के लिए लाया था, अब वह मुझे नहीं मिलेगा, तो वह बहुत ही अशिष्ट रीति से अपनी पत्नी को घर से निकाल देता। जब माता-पिता देखते कि अमुक कन्या अथवा पुत्र-वधु अब विषय-विकार से घृणा करती है, तो पंचायत के दबाव से या लोकलाज और डर से वे भी अपना नाता तोड़ने पर तथा उन्हें घर से निकाल देने पर उतारू हो जाते । अत: कई-एक को घर से निकलना ही पड़ा। आखिर, परमपिता परमात्मा ही तो सभी के रक्षक और सहारा हैं, उसी समर्थ ने ही उनको सम्बल दिया, सान्त्वना भी दी और उन बे-सहारों को आश्रय तथा अभय दान दिया। कहावत भी है कि संसार में जिसका और कोई सहारा नहीं होता, उसका एक परमात्मा ही सहारा और साथी होता है। अत: उस समय उन कन्याओं-माताओं का मन यह गीत गा उठता था :—

सब पूछते हैं कहाँ चली यह घर-बार छोड़कर
यह धन, यह मान अपना, यह प्यार छोड़कर
दुनिया के इस सवाल को समझा रहे हैं हम
बच्चे हैं अपने प्रभु के, घर जा रहे हैं हम
इस चार दिन की दुनिया में, यह दिल लगेगा क्या?
टूटी-फूटी जिन्दगी में, आखिर मिलेगा क्या?

हँस-हँस के झूम-झूम के, यों गा रहे हैं हम
बच्चे हैं अपने प्रभु के घर जा रहे हैं हम
रास्ते में जो थे काँटे बिछे हुए
काँटों पे जब चले, तो वे फूल बन गये
बिछड़े हुए थे कल्प-भर, अब पा रहे हैं हम
बच्चे हैं अपने प्रभु के, प्रभु के घर जा रहे हैं हम।

लाखा भवन को आग

इतने अत्याचार करने पर भी लोगों ने छुट्टी न की। क्रोध एक ऐसी अग्नि है, जब यह धधकती है तो अपनी ही सुख देने वाली सम्पत्ति को और संस्थाओं को भी जलाने के लिए लपक पड़ती है । जब लोगों ने देखा कि यह कन्याएँ व माताएँ सत्संग में जाने से नहीं रुकतीं तो उन्होंने सोचा कि जिस भवन में जाकर ये ज्ञानामृत पीती हैं, क्यों न उसे ही धूली धूसरित कर दिया जाये? अत: एक दिन की बात है कि जब बाबा सत्संग भवन (जोकि 'लखीराज भवन' के नाम से भी जाना जाता था) में उपस्थित नहीं थे, तब उन लोगों ने अवसर जान कर, उस पर आक्रमण कर दिया। उस जमघट में बहुत ही शरारती लोग थे। उन्होंने उस लखीराज भवन को चारों ओर से घेर लिया और वे दरवाजे, खिड़कियाँ इत्यादि तोड़ने लगे। उन्होंने भीतर घुसने की भी कोशिश की, परन्तु शिव की शक्ति सेना खड़ी हो गयी और उसने किसी को भी अन्दर घुसने न दिया । उन लोगों ने मकान को आग[1] लगा दी। क्रोध के वश हुए उन लोगों की बुद्धि इतनी मारी गई थी कि उन्होंने यह भी न सोचा कि हमारी ही कन्याएँ-माताएँ, बहू-बेटियाँ आदि अन्दर हैं, और भवन को आग लगाने के परिणामस्वरूप वे भी अन्दर

---

१. यह घटना २१ जून, १९३८ को हुई। ओम् मण्डली के ११० सदस्यों ने हस्ताक्षर करके डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट को रिपोर्ट की परन्तु चूँकि वह मुखी मंघाराम का रिश्तेदार था, उसने उस रिपोर्ट पर विशेष कार्यवाही नहीं की।

ही जीते-जी जल जायेंगी! जिन मुखी लोगों ने जनता को भड़काया था, वे न तो उन उपद्रवियों पर कन्ट्रोल कर सके, न ही इसके परिणाम को सोच सके। परन्तु भावी ऐसी बनी कि किसी दर्शक ने पुलिस को फोन पर सूचना दे दी। पुलिस ने उस स्थान पर आकर सभी को भगा दिया और फ़ायर बिग्रेड ने आकर आग बुझा दी। ''जिसका राखा साइयाँ, मार न सके कोय, बाल न बाँका कर सके चाहे सौ जग बैरी होय।'' लोगों ने हज़ार कोशिशें की परन्तु वे कुछ भी बिगाड़ न सके। लखी भवन को जलाने का वृत्तान्त तो महाभारत में पहले भी ''कौरवों द्वारा लाखा भवन को आग'' के वृत्तान्त के रूप में वर्णित है। 'ऐन्टी ओम् मण्डली' तथा उपद्रवियों ने जो-कुछ किया उसके कारण यह गीत उन पर ठीक घटता है :–

आश्चर्य कैसी मुसीबतों में,
देह-अभिमानी पड़े हुए हैं।
स्वधर्म अपना भूल करके,
माया के चक्कर में फँसे हुए हैं।
मोह-माया कैसी है यह प्रबल,
मोह की जंज़ीरों में जकड़ पड़े हैं।
स्वधर्म-विस्मृति उलटी यह रीति,
जन्म अमोलक खोये रहे हैं।
प्रकृति के मालिक हो करके फिर,
गुलाम विषयों के बने हुए हैं।
अजब तमाशा; विचित्र लीला,
पुरुष को प्रकृति नचा रही है।
देही-अभिमान को विदा देकर,
देह-अभिमान में खेल रहे हैं।
विकारों के लेने व देने के धन्धे में,
आत्म-घाती मरे पड़े हैं।

बाहर- मुखता कैसी यह मूर्खता,
प्रभु हमें अब समझा रहे हैं।,

इतना सब होने पर भी बाबा सदा निश्चिन्त, अडोल और साक्षी अवस्था में रहते थे। वे कहा करते थे कि हम तो परमपिता परमात्मा के सेवक हैं, वही सब बात ठीक कर देगा। धर्म के मार्ग पर ये परीक्षाएँ तो आती हैं परन्तु हमें इस निश्चय में स्थित रहना चाहिए कि 'सच की बेड़ी डोलती है, डूबती नहीं है।' उनके इस शान्त और निश्चिन्त जीवन से प्रेरणा लेकर तथा सत्यता के आधार पर अडिग रह कर अन्य सभी माताएँ-बहनें तथा भाई भी ईश्वरीय मस्ती में मस्त रहते थे। वे साक्षी होकर इस नाटक को देखते। लोगों ने लखीराज भवन पर इतने पत्थर फैंके, शीशे भी तोड़ दिए, दरवाजे भी उखाड़ दिये और हंगामा भी खूब किया परन्तु वे माताएँ-बहनें भयभीत नहीं हुई बल्कि इन सब घटनाओं का फल यह हुआ कि संसार से उनका जो थोड़ा-बहुत भी अनुराग रहा था, वह भी टूटता गया और इस उच्छृंखलता को देखकर उन्हें यह भी हर्ष हुआ कि आज हम इन लोगों से, अपनी धारणाओं में काफी आगे निकल गई हैं और अब लोक -लाज तथा भय को जीतने के लिए प्रेक्टीकल शिक्षा हमें मिल रही है। इसके अतिरिक्त लोगों की अशान्त अवस्था को देखकर उनके मन में करुणा भी जागृत होती। उस करुणा से प्लावित उनका हृदय इन स्वरों में बोल उठता :—

सुनो-सुनो भारत के प्राणी,
करो अपेन ऊपर मेहरबानी।
परमपिता को पहचानों, वारिस हो सत्य मानो
छोड़ो गफ़लत और नादानी
मनुष्य है बोलता-चालता मन्दिर,
मुफ़्त बनते क्यों कामी बन्दर।
तुम करो न अपनी हानि

आत्म-घाती क्यों तुम बनते,
क्यों ब्रह्म-ज्ञान न लेते ।
बनो योगी जगत् है फानी
देह का अभिमान न रखना,
देही-अभिमानी नित्य बनना।
चलते-फिरते बनो तुम ध्यानी।

ॐ निवास के बाहर पिकेटिंग

अब इस भवन से स्थानान्तरित होकर सभी कन्यायें-मातायें तथा भाई 'ओम् निवास' नामक बिल्डिंग में चले गये। 'ओम् मण्डली' का सत्संग आदि सभी वहीं होने लगा। बच्चों-बच्चियों को भी लौकिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा वहीं मिलने लगीं।

अब 'ऐन्टी ओम्-मण्डली' ने 'ओम् निवास' के बाहर अपना आन्दोलन शुरू कर दिया। ब्रह्माकुमारी शान्तामणि जी, जो कि वर्तमान समय शान्तिवन, तलहटी, आबू रोड की इन्चार्ज हैं, लिखती हैं कि एक दिन प्रात: ५-३० बजे 'ओम् निवास' में रहने वाली छोटी-छोटी बच्चियाँ भी यूनिफ़ार्म पहने हुए अपनी शिक्षिकाओं के साथ बस में घूमने के लिए गयी थीं। तब सन्नाटा छाया हुआ था। उस समय से थोड़ा ही बाद पंचायत के मुखी लोगों ने अन्य उपद्रवी लोगों के साथ, जिनमें कुछ महिलाएँ भी थीं, लेकर पिकेटिंग[1] कर दी। उन्होंने 'ओम् निवास' को चारों ओर से घेर लिया और उसके मुख्य द्वार के आगे दस-पन्द्रह माताएँ और भाई ज्ञानामृत पीने के लिए आये तो उन्होंने देखा कि उपद्रवियों ने अन्दर जाने का रास्ता रोक रखा है। यह देख कर वे भी एक ओर पंक्ति बनाकर शान्तिपूर्वक खड़े हो गये।

इतने में 'ओम् निवास' से सैर पर गयी हुई छोटी-छोटी बच्चियाँ भी

१. यह पिकेटिंग ७ अगस्त १९३८ को हुई।

लौट आयीं। उन्होंने अचानक ही देखा कि 'ओम निवास' के बाहर पिकेटिंग हो रही है। वे भी ज्ञानामृत पीने के लिए अपने-अपने घरो से आये हुए भाइयों-बहनों के साथ उसी पंक्ति में खड़ी हो गयीं। अब एक ओर पंक्ति बाँन्धे खड़े थे, 'काम विकार' के लिए आग्रह करने वाले बाहूबल वाले उपद्रवी लोग जो इतना अन्याय कर रहे थे कि धर्म ज्ञान के लिए कन्याओं-माताओं तथा भाइयों को अन्दर नहीं जाने देते थे और,दूसरी ओर, उनके सामने ही पंक्ति बनाकर खड़ी थीं धर्म, पवित्रता और गीता-ज्ञान के आधार पर चलने वाली अहिंसक माताएँ अथवा भाई-बान्धव अथवा, आप यों भी कह सकते कि एक ओर खड़ी थी अन्यायकारी, धर्म-विमुख, ईश्वर-विमुख कौरव सेना या आसुरी सेना और दूसरी ओर खड़ी थीं 'पाण्डव सेना' अथवा शिव-शक्ति सेना। कौरव सेना ने चक्रव्यूह की रचना की हुई थी। वे संख्या में भी बहुत थे, परन्तु दूसरी ओर 'पाण्डव' उनकी तुलना में मानो पाँच थे, अथवा शक्ति-दल में गिनी-चुनी कन्याएँ-मातएँ थीं। 'ओम् निवास' में अन्दर बैठी कुछ कन्याएँ-माताएँ इस प्रकार के गीत गाती थी :–

कौन देश है जाना बाबू हुआ कहाँ से आना
कौन देश है जाना बाबू हुआ कहाँ से आना
बचपन जवानी वृद्ध आयु बाद, फिर होगा कहाँ रवाना
कौन देश है जाना बाबू हुआ कहाँ से आना
खड़े-खड़े क्या सोच रहा है, तनिक सत्य नहीं जाना
हुआ कहाँ से आना बाबू कौन देश है जाना
घमण्ड इतना मैं सेठ, स्वामी, 'ओम्' का अर्थ नहीं पहचाना
प्रभु-बिना कभी मार्ग न सूझे, समझ के पाँव उठाना
जाता है समय सुहाना, बाबू कौन देश है जाना
हमसो, सोऽहम बाजत हरदम यही अनादि गाना
समझे बिरला स्याना
शरीर छोड़ मिला न प्रभु, धक्का जन्म-मरण में खाना

कराची में 'ओम् निवास' में सर्व-स्नेही बाबा

हैदराबाद से स्थानान्तरित होने के बाद सभी इसी भवन में 'ॐ ' के अर्थस्वरूप में स्थित होने की शिक्षा लेते थे। यहाँ ही ॐ बाबा भी रहते थे। इसीलिए इसका नाम 'ॐ निवास' हुआ। यह काफ़ी बड़ा भवन था।

कराची का 'राधा भवन'

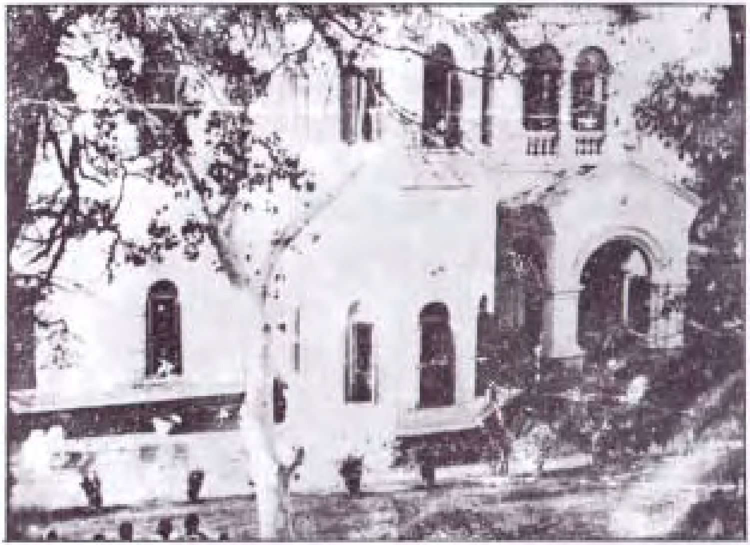

यह कराची का वह ऐतिहासिक भवन है जिसे 'राधा भवन' कहा जाता था और जहाँ ओम् राधे अथवा जगदम्बा सरस्वती जी ने उन दिनों ज्ञान-वीणा बजाकर कितने ही मानव-हृदयों को आत्मिक सुख दिया और उनका दिव्य विवेक भी जागृत किया। यहाँ ही छोटे बच्चों को भी आध्यात्मिक शिक्षा मिलती थी। यह काफ़ी बड़ा भवन था। यहाँ के शान्त, स्वच्छ एवं दिव्य वातावरण में प्रारम्भिक दिनों में ईश्वरीय ज्ञान का अध्ययन तथा अभ्यास बहुत ही श्रेयस्कर रहा।

वृत्था जन्म गँवाना
जीते-जी मरजीवा बनकर छोड़ दे सब बहाना
जाना है वैकुण्ठ ठिकाना, कौन देश है जाना
'अहम् आत्मा' निश्चय करके, प्रभु से योग लगाना
पाना अखुट खज़ाना
सोचो, सोचो ओ मन मूर्ख, छोड़ के सभी बहाना
रहा न अब है ज़माना!

अब सारे शहर में चर्चा थी कि देखें आज कौन जीतता है और क्या फैसला होता है? शहर में घर-घर में जब यही चर्चा हुई कि 'ओम् निवास' पर पिकेटिंग हो रही है तो जो-जो कन्याएँ-माताएँ अपने-अपने घर में दस-बारह तालों में बन्द थीं, वे भी इस घटना के बारे में सुनकर किसी- न-किसी युक्ति से निकल आईं। इन्हीं में से एक का नाम 'गोपी' था। वह शहर के एक प्रसिद्ध चौधरी की पुत्री थीं। वह चौधरी अथवा सेठ जी लोगों को तपाक से कहा करते थे कि वे अपने पुत्रियों तथा बहुओं को बाँध दें। उन सेठ जी को इस बात का गर्व था कि उन्होंने अपनी पौत्रियों को तेरह तालों के भीतर ऐसा बन्द कर रक्खा है कि वे लाख प्रयत्न करने पर भी निकल नहीं सकतीं। वह सेठ जी इस पिकेटिंग एवं प्रदर्शन के भी एक नेता बने हुए थे। अचानक ही उन्होंने क्या देखा कि उनकी पौत्री भी वहाँ आ पहुँची है। उन्हें इस घटना से बड़ा आश्चर्य भी हुआ और सन्ताप भी। यह सेठ 'ऐन्टी ओम् मण्डली' को बहुत धन देते थे। इस बात का उल्लेख पहले किया जा चुका है।

अब इधर उपद्रवी लोग कभी सोड़ा वाटर की बोतलें पीतें, कभी चाय लेते और कभी कुछ और ले लेते । वे कई बार सामने की पंक्ति में खड़ी छोटी-छोटी कन्याएँ, जिनमें बहुत-सी बारह वर्ष से भी छोटी थीं, उन विकारी लोगों के हाथ से कुछ भी लेने से इन्कार कर देंती। इस प्रकार खड़े-खड़े सारा दिन हो गया। वे हिलीं भी नहीं। पिकेटिंग करने वाले लोग उन

छोटी कन्याओं को कहते कि –''अच्छा, आप भले ही अन्दर चली जाओ।'' परन्तु वे कहती कि –''हम तब जायेंगी जब सभी बहनें हमारे साथ अन्दर चलेंगी वरना हम भी यहीं धूप में, भूखी-प्यासी खड़ी रहेंगी। हम धरती पर चाहे पड़ जायें परन्तु अपना धर्म नहीं छोड़ेंगी।'' आखिर धरना मारने वालों ने जब देखा कि इन लोगों पर इसका कुछ भी असर नहीं पड़ता और ये अपने मन्तव्य में अटल हैं, तो वे बेचारे कब तक वहाँ बैठे रहते,धीरे-धीरे उनकी संख्या कम तो होती ही गयी थी, आखिर वे अपने डेरे कूच कर गये । धर्म-परायण पाण्डव दल की विजय हुई क्योंकि जिधर श्रीहरि हैं अर्थात् पतित पावन परमात्मा है, विजय तो उस ओर निश्चित है ही।

दूसरे दिन उन लोगों ने फिर धरना दिया। उन्होंने मन में दृढ़ विचार कर रखा था कि अब तो चाहे कुछ भी हो जाय, हम इनको बिल्कुल ही अन्दर नहीं जाने देंगें। अत: आज शहर के हज़ारों लोग यह देखने के लिए वहाँ आ पहुँचे थे। एक और वे सब खड़े थे और दूसरी ओर श्वेत वस्त्रधारी पाण्डव थे तथा शिव शक्ति सेना थी। परन्तु उस दिन भी कुछ न हो सका। आखिर सायंकाल ७ बजे तक खड़े रहकर वह लोग वापिस लौट गये। तीसरे दिन वे फिर कई गुण्डे लोगों को भी साथ लाये। अब सिन्ध की सरकार ने (कलैक्टर साहब ने) बीच में पड़कर धरने को बन्द कराया। कई समझदार लोग भी अब कहने लगे कि इन मुखियों का यह कार्य ठीक नहीं है। वे छोटी-छोटी कन्याओं को यों ही परेशान करते हैं। कुछ नामी लोगों ने समाचार पत्रों में भी 'ऐन्टी ओम् मण्डली' के इन आन्दोलनों के विरुद्ध तथा सत्संग करने से रोकने के विरुद्ध लेख दिए।

ज़िला मजिस्ट्रेट ने सैक्शन ११२ तथा सैक्शन १०७ के अन्तर्गत उपद्रवियों के विरुद्ध कार्यवाही की परन्तु इन्हीं सैक्शन्स् के अन्तर्गत 'ओम् मण्डली' के पाँच व्यक्तियों के विरुद्ध भी नोटिस दिया। इन पाँच व्यक्तियों में 'दादा' भी थे। उन पाँच के विरुद्ध शान्ति भंग करने का आरोप

लगाया गया था। देखिये तो, कैसा अन्याय है! ऊधम तो 'ऐन्टी ओम्-मण्डली' वालों ने मचाया, मकान भी उन्होंने ही तोड़ा और जलूस निकाल कर पथराव भी उन्होंने ही किया, अत: उन्हें शान्ति भंग करने के अपराध के लिए दण्डनीय ठहराना एक न्याय-संगत बात थी परन्तु जिन लोगों के विरुद्ध ये सब किया गया और जिन्हें हानि पहुँचायी गयी उनके विरुद्ध ये कार्यवाही तो सरासर अन्याय ही था। अत: 'ओम् मण्डली' ने तुरन्त ही यह मामला उच्च न्यायालय में पेश किया। उच्च न्यायालय के ज्युडिशियल कमिश्नर तथा एक अन्य न्यायाधीश ने जिला मजिस्ट्रेट द्वारा की गयी कार्यवाही की कड़ी आलोचना और भर्त्सना की। उन्होंने कहा कि जिलाधीश ने इस कानून का गलत प्रयोग किया है, क्योंकि वास्तव में 'ओम् मण्डली' तो शान्तिपूर्वक अपने धार्मिक मन्तव्य के अनुसार कार्य कर रही थी, शान्ति तो भंग दूसरे लोगों ने की। माननीय न्यायाधीश महोदय ने अपने निर्णय[1] में यह भी लिखा कि जिला मजिस्ट्रेट ने जो कुछ किया है यदि वैसे ही किया जाने लगे तब तो कोई भी पुराने-पंथी और रूढ़िवादी लोग उठकर समाज-सुधारकों को रोक सकेंगे। अत: 'ओम् मण्डली' का कोई अपराध नहीं है, इनसे तो अनुचित और हानिकारक व्यवहार किया गया है।

---

१. उच्च न्यायालय के अन्तर्गत ज्युडिशियल कमिश्नर (गॉफ्र डेविक) तथा एक अन्य न्यायाधीश (ऐरिक वैब्स्टन) ने यह निर्णय २१ नवम्बर, १९३८ को सुनाया।

विघ्न-विनाशक प्रभु ने विघ्नों से कैसे पार किया?

अब शान्त वातावरण पैदा करने के लिए पिता- श्री अथवा बाबा तो प्राय: कराची में रहने लगे थे। 'ओम् मण्डली' ने सभी को यह स्पष्ट कह दिया था कि कराची में वही चल सकते हैं जिनके पास पिता या अभिभावक का स्वीकृति पत्र हो। अत: जिन माताओं-बहनों को अपने-अपने घर वालों से स्वीकृति पत्र मिले हुए थे, अब वे भी कराची में रहने लगीं।

अब कराची में ओम् बाबा ने सभी के आवास-निवास की व्यवस्था कर दी। वहाँ छावनी में शान्त वातावरण में पाँच अच्छे-अच्छे बंगले ले लिए गये थे। उनमें से एक 'ओम् निवास', दूसरा 'बेबी भवन', तीसरा 'ब्वाइज भवन', चौथा 'प्रेम भवन' और पाँचवा 'राधा भवन', के नाम से जाना जाता था। बहुत छोटी आयु वाले बच्चों को, अलग एक बंगले में लौकिक विद्या के साथ-साथ ईश्वरीय ज्ञान भी सरल रीति से दिया जाता था। पुरुषों और स्त्रियों, सभी के रहने के लिये अलग-अलग प्रबन्ध किया गया था।

कराची में ॐ मण्डली का प्रभाव

कराची में भी दिनचर्या पहले की तरह ही चलती थी। वैसे ही प्रात: ३-३० बजे उठना और वैसे ही शान्त समाधि, ज्ञान-मुरली आदि-आदि का सारा कार्यक्रम चलता था। एक दिन जब बहुत-सी कन्याएँ आदि बस में जा रही थीं तो रास्ते में दुर्घटना हो गयी। बस उलट गयी। कई-एक को चोट आयी। कुछेक के शरीर से थोड़ा रक्त भी निकला। कुछ लोगों ने यह देखा परन्तु उन्हें इस बात पर आश्चर्य था कि छोटी-छोटी कन्याएँ भी रो नहीं रही थीं। किसी के चेहरे पर भी दु:ख के चिन्ह दिखाई नहीं देते थे। यदि बस

में और कोई होते तो रोने-चिल्लाने का वातावरण होता, परन्तु यहाँ तो सभी कह रहे थे –"मैं तो आत्मा हूँ, मैं तो शान्तिस्वरूप हूँ।"

सभी को हस्पताल ले जाया गया। वहाँ उनकी मरहम-पट्टी हुई। जिन्हें अधिक चोट आई थी उन्हें दाखिल किया गया । परन्तु हस्पताल की नर्सें तथा डाक्टर आदि सभी कन्याओं की मानसिक स्थिति देखकर बहुत आश्चर्यान्वित हुए कि इन्हें जरा भी दु:ख नहीं है।

एक कन्या बाबा को सूचना देने के लिए गयी । बाबा ने जब यह सुना तो उनके चेहरे पर चिन्ता या दु:ख के चिन्ह नहीं आये। उन्होंने कहा –"अच्छा बच्ची, जो भावी थी सो हुई। चलो, मैं हस्पताल चलता हूँ।" पहले तो बाबा वहाँ गये जहाँ दुर्घटना हुई थी। फिर वे हस्पताल पहुँचे। अपनी मुस्कराहट से, मधुर दृष्टि से, मीठे वचनों से उन्होंने सभी को हर्षित किया। बाबा ने देखा कि सभी शान्तिपूर्वक, सहनशील और आत्मा-निश्चय हैं। यह समाचार दैनिक पत्रों में भी प्रकाशित हुआ और लोगों में भी इसकी चर्चा थी कि यहाँ छोटे-छोटे बच्चे भी आत्मा-निश्चय में स्थित हैं और सहनशील हैं तथा इनकी धारणा बड़ी उच्च है।

अब हैदराबाद-निवासी, ज्ञान की प्यासी माताओ-कन्याओं से बाबा की अनुपस्थिति सहन न हो सकी। वे ज्ञान और ज्ञान-दाता को याद करके विलाप करती रहतीं। घर वालों के बन्धन में पड़ी हुई वे श्रीमदभागवत्-प्रसिद्ध गोपिकाएँ जब आपस में मिलती थीं तो परमपिता परमात्मा के लिए और ज्ञानामृत के लिए और उनकी विरह-वेदना का दृश्य बड़ा मर्मस्पर्शी होता था। वे रो-रोकर एक-दूसरे से पूछतीं –"ओ जमना, ओ जशोदा, ओ राधे बता दे, कहाँ गयो मेरो घनश्याम? सखी मैं हित देखूँ, मैं हुत देखूं, मेरो कहाँ गयो घनश्याम रे! ओ माता, ओम् राधे कहाँ गयो पिता जान।" एक दिन कोई पन्द्रह कन्याएँ मिलकर अपने बन्धनों को तोड़कर वहाँ कराची में जा पहुँची। उस समय उनके मन में पवित्रता का यह पाठ चलता होगा :–

नवल नवेली न्यारी, हम कँवारी ब्रह्मचारी
बचपन अलबेली न्यारी, हम कँवारी ब्रह्मचारी
काम नहीं, कोई क्रोध नहीं, हम सरल-सहज मतवारी
लोभ नहीं, कोई मोह नहीं, हम सो, सो हम गतवारी
ब्रह्म-ज्ञान की नित्य ही बोली बोलें
विज्ञानी बन, ज्ञान अविनाशी खोलें
हम गोकुल की अनुसुइया, अम्मी तुम पिंजरे की मैना
हम मधुबन की गोपियाँ....फँसी तुम भूषण और गहना
गहना, गहना, गहना!
तुम पिंजरे की मैना!!

वहाँ से 'ओम् मण्डली' ने उनके सम्बन्धियों को सूचित कर दिया कि कुशलपूर्वक यहाँ पहुँच गयी हैं। आप उनकी चिन्ता न करना।

अब 'ऐन्टी ओम् मण्डली' के सदस्यों ने तथा अन्य लोगों ने देखा कि इतना प्रयत्न करने पर भी ज्ञानाभिलाषी कन्याएँ-माताएँ हमारे बन्धन को तोड़कर मुक्त हो गयी हैं। एक के बाद दूसरी रीति से हंगामा करने के बाद भी कुछ नहीं हो पा रहा था। अत: मुखियों ने सिन्ध के मन्त्रिमण्डल पर जोर डालना शुरू किया और तत्कालीन अल्लाह बख्श मन्त्रिमण्डल के हिन्दू मन्त्रियों को इस बात पर बाध्य कर दिया कि वे मुख्यमन्त्री को धमकी दें कि यदि उन्होंने ओम् मण्डली पर प्रतिबन्ध न लगाया तो वे त्यागपत्र दे देंगे। जिससे कि उनका मन्त्रीमण्डल टूट जायेगा। वे मुख्यमन्त्री तथा विधिमन्त्री पर जोर डालकर कुछ बालिग माताओं और सभी नाबालिग कन्यायों को भी ले गये और उन पर उन्होंने चौगुना अधिक अत्याचार करना शुरू किया। यहाँ तक कि एक कन्या का तो अन्दर वियोग में रहते- रहते और सितम सहन करते-करते देहान्त भी हो गया। दूसरी ओर, उन्होंने समाचार पत्रों के सम्पादकों को भड़काया और उन पर अपने पैसे तथा पद का दबाव डालकर उनसे मुख्य लेख लिखवाये। तीसरी ओर उन्होंने शरारती लोगों को उकसा

दिया कि उन्हें 'ओम् मण्डली' की कन्याएँ-माताएँ जहाँ-कहीं मिलें, वे उन्हें अपमानित करें तथा उनके विरुद्ध हल्ला-गुल्ला करें। चौथी ओर उन्होंने कुछ लोगों से कहकर न्यायालयों में 'सहवास-अधिकार' (Conjugal Right) के लिए मुकद्दमें चालू करा दिये।

एक बार एक अभियोग के सिलसिले में 'ओम् मण्डली' की व्यवस्थापक समिति की प्रधान 'ओम् राधे जी' को न्यायालय में साक्षी के तौर पर बुलाया गया था क्योंकि माताओं-कन्याओं के इस ईश्वरीय ज्ञान-यज्ञ की संभाल करने के लिए नये दिव्य गुणों की मूर्ति 'ओम् राधे' ही निमित्त थीं। लोगों ने सोचा था कि कोर्ट में 'ओम् राधे' जी से उल्टे-सुल्टे प्रश्न किये जायेंगे और उससे हम इस संस्था को बदनाम करेंगे परन्तु हुआ इसके विपरीत ही। उस समय न्यायालय के विचित्र दृश्य और उसमें मेजिस्ट्रेट से हुए प्रश्न-उत्तर का उल्लेख ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणि जी जोकि वर्तमान समय ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की मुख्य प्रशासिका बहन है, ने इस प्रकार किया है:–

कोर्ट में कौतुक

'ओम् राधे' जी के साथ हम अन्य पाँच बहनों को भी न्यायालय में जाने के लिए प्रवेश-पत्र मिला था। हम कराची से हैदराबाद उस न्यायालय में आई थीं। कोर्ट का कमरा लोगों से भरा हुआ था। उनमें काफी संख्या में मुसलमान लोग भी थे। वहाँ पुलिस के इन्सपेक्टर आदि भी मौजूद थे। जब हमारी कार कोर्ट के बाहर आकर रुकी थी तो वहाँ भी भीड़ को काबू में रखने के लिए काफी पुलिस का प्रबन्ध था। 'ओम् राधे' जी के साथ हम पाँचों ईश्वरीय बहनों ने कोर्ट के कमरे में जब प्रवेश किया था तो सभी लोग उत्साहपूर्वक हमारी ओर देख रहे थे। ऐसा लगता था जैसे कि आज सारा शहर यहाँ इकट्ठा हो गया है। हम लोग बिल्कुल निर्भय अवस्था में थीं क्योंकि हमें यह ज्ञान मिला हुआ था कि 'संसार जीत-हार का खेल है', इसमें एक की जीत दूसरे की हार तो है ही । अत: हमारी स्थिति ऐसी थी

जैसे कि हम खेल देखने आई हों। बाबा के द्वारा हमें जो इतना उच्च ज्ञान मिला था, उसके होते हुए हम डरती क्यों? फिर हमारे मन में कोई बुराई भी न थी तो हमें किस से संकोच अथवा डर होता? कोर्ट में सन्नाटा-सा छा गया था। जज साहिब कुर्सी पर बैठे थे। हम पाँच बहनों को भी बैठने के लिए उन्होंने कुर्सियाँ दिलायीं। फिर 'ओम् राधे' जी को गवाही के कटघरे में आने के लिए कहा गया। 'ओम् राधे' जी का व्यक्तित्व उस समय एक शक्ति जैसा दीख रहा था। श्वेत वस्त्रों में सौम्य स्वभाव वाली वह एक देवी-सी प्रतीत हो रही थीं, जैसे कहीं आकाश से वहाँ उतरी हों। 'ओम् राधे' जी के वहाँ ठहरने पर जज साहब ने कहा :—

जज – ''पहले गीता हाथ में उठाकर कसम (शपथ) लीजिये कि आप सच बोलेंगी।''

ओम् राधे – ''क्या कसम उठाना है, क्या बोलना है?''

जज – ''आप गीता को हाथ में उठाकर यह कहिए कि मैं भगवान् को हाज़िर-नाज़िर देखकर जो कुछ कहूँगी सच कहूँगी।''

ओम् राधे – ''जज साहिब, मैं इन आँखों से तो आपको ही हाज़िर-नाज़िर देख रही हूँ । भगवान् को तो इन नेत्रों से नहीं देख सकती हूँ'', तब भला मैं यह झूठी कसम कैसे लूं कि मैं भगवान् को हाज़िर- नाज़िर देखती हूँ । मैं तो आप आत्मा को ही जज के रूप में देखती हूँ । इसलिए अगर आप कहें तो मैं यह कसम उठा सकती हूँ कि मैं आप आत्मा को जज साहिब के रूप में हाज़िर-नाज़िर देखकर जो कुछ बोलूँगी, सच बोलूँगी।''

यह विचित्र उत्तर सुनकर कोर्ट में बैठे हुए लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ और कई तो हँसने भी लगे । किसी -किसी ने तो ताली भी बजाई । कोई-कोई बोल उठा कि ओम् राधे ने बिल्कुल ठीक कहा है। जज साहिब थोड़ा नाराज़ हुए और उन्होंने —''आर्डर, आर्डर'' - इस प्रकार के शब्द बोलकर सबको चुप कराया।

जज साहिब –''(ओम् राधे जी की ओर देखते हुए बोले) —''मैं

कोई भगवान् थोड़े ही हूँ कि आप मेरी कसम उठायेंगी, भगवान् के नाम पर कसम उठाना — यह इस कोर्ट का लॉ (नियम) अथवा विधान है। हम इस विधान को तोड़ नहीं सकते।''

ओम् राधे ने नम्रतापूर्वक कहा –''जज साहिब, आप स्वयं ही कहते हैं कि सच बोलो। तब भला विचार कीजिए कि जब मैं यहाँ ईश्वर को हाज़िर-नाज़िर नहीं देखती बल्कि यही देखती हूँ कि आज हरेक के मन में काम-क्रोधादि विकार ही भरे हुए हैं, तो फिर मैं झूठी कसम कैसे लूँ?''

जज साहिब थोड़ा आवेग से बोले –''यह कोर्ट है, सत्संग नहीं, जहाँ आप मुझे ज्ञान देने लगी हैं! यहाँ तो कानून चलता है। यदि आप यहाँ इस कानून को तोड़ेंगी तो आपको अदालत की हतक (अपमान) के अपराध में गिरफ्तार किया जावेगा।''

ओम् राधे – ('शक्ति' के रूप में निर्भय होकर बोली) —''जैसे आप इस कोर्ट की हतक नहीं कराना चाहते, वैसे ही मैं ईश्वर जो कि आपका और हम सबका परमपिता है, उसका अपमान, अथवा उसकी हतक कैसे कर सकती हूँ? गीता में भी भगवान् के महावाक्य हैं कि जब धर्म की ग्लानि होती है, तब मैं आता हूँ, तो फिर भगवान् इस संसार में हाज़िर कैसे हुए? परमात्मा तो ज्ञानस्वरूप, आनन्द स्वरूप, प्रेम स्वरूप और निर्विकार हैं परन्तु आज हरेक के मन में काम, क्रोधादि विकार हैं और अशान्ति भी है, तब भला परम पवित्र परमात्मा सबमें हाज़िर-नाज़िर कैसे हुए?''

उस समय 'ओम् राधे' जी की आयु लगभग इक्कीस वर्ष थीं। निर्भीक अवस्था में उनके मुख से ऐसे विवेक-संगत उत्तर सुनकर लोग दाँतों-तले अंगुलियाँ दबाने लगे। 'ऐन्टी ओम् मण्डली' के जो लोग वहाँ उपस्थित थे, स्वयं उनके मन को भी यह सच्ची बातें स्पर्श करती मालूम होती थीं। यह किसी ने नहीं सोचा कि आज ऐसा कौतुक होगा ।

कानून से बंधे हुए जज साहिब को तो अपनी ड्यूटी ही निभानी थी।

अत: यद्यपि उनके मन्तव्य को 'ओम् राधे' जी के उत्तर झंझोरते हुए - से मालूम होते थे, तो भी वे कमज़ोर-सी आवाज़ में बोले –''कुछ भी हो, कोर्ट के कायदे (नियम) का तो पालन करना ही होगा।''

तब शक्ति रूपा 'ओम् राधे' जी बोलीं –''जज साहिब, मैं किसी भी हालत में झूठी कसम नहीं उठा सकतीं।''

जज साहब ने एक बार फिर कहा –''अभी भी अवसर देता हूँ, सोच लीजिये। अभी भी कसम उठा लीजिये। तभी मैं गवाही के लिए प्रश्न पूछूँगा।''

'ओम् राधे' जी ने फिर कहा –''जज साहिब, मैंने अच्छी तरह सोच लिया है।''

अब जज साहिब इस सोच में पड़ गए कि अब क्या किया जाय? 'ओम् राधे' जी को डराने के विचार से उन्होंने उपस्थित पुलिस आफ़ीसर को आज्ञा की कि वह उनके हाथों में हथकड़ी डाल दे। पुलिस कर्मचारी हथकड़ी लेकर आगे बढ़ने लगे परन्तु 'ओम् राधे' जी मुस्कराती हुई-सी निर्भय अवस्था में खड़ी रहीं।''

सभी लोग बहुत ही उत्सुकता से देख रहे थे कि अब क्या होगा। अब तो शायद हथकड़ी लग जायेगी।

इतने में जज साहिब ने पुलिस कर्मचारियों को आज्ञा दी –''ठहरो, ठहरो!'' पुलिस कर्मचारी ज़ंजीर लेकर पीछे हट गए। उपस्थित जनता में से कई लोगों ने फिर ताली बजाई।

आखिर जज साहिब ने इस तरह की कसम उठाने का आग्रह छोड़ दिया। परमपिता परमात्मा ने कौरवों की सभा में द्रोपदी की लाज बचा ली!

अब जज साहिब ने दूसरे प्रश्न पूछने शुरू किए :–

जज साहिब –''अब यह बताइये कि आप सभी इतना रोकने पर भी घर-बार छोड़कर दादा के पास क्यों चली गईं।''

ओम् राधे –''जज साहिब, क्या आपने कभी श्रीमद् भागवत् पढ़ा है

जब भगवान् मुरली बजाते थे तो गोपियाँ उस मुरली के पीछे क्यों भाग जाती थीं? तब उन पर मुकद्दमा क्यों नहीं चला? वह यही ज्ञान -मुरली ही तो थी। अब भी हम उसी ज्ञान-मुरली की सदा अभिलाषी रहती हैं। जज साहिब, जब कई पुरुष लोग संन्यास ले लेते है और घर-बार छोड़ जाते है तो उन पर मुकद्दमा क्यों नहीं होता? उनसे यह प्रश्न क्यों नहीं पूछा जाता? भगवान् के लिए तो नर और नारी एक-समान है, अब उसने हम माताओं को ज्ञान-कलश दिया है। अत: अब जब हम माताओं को पवित्रता और ईश्वरीय ज्ञान का चान्स मिला है, जब हम माताएँ ज्ञान और पवित्रता का जीवन प्राप्त करने के लिए ईश्वरीय सत्संग में जाती हैं तो हमसे यह प्रश्न क्यों पूछा जाता है? जज साहिब, ज्ञानामृत पीने के कार्य में सम्बन्धियों की ओर से जो हमारे मार्ग में रुकावटें पड़ती हैं तथा वे माताओं पर जो अत्याचार करते हैं, उसी के परिणामस्वरूप ही ऐसा हुआ है।''

इस प्रकार जज ने और भी कई प्रश्न किये । उदाहरण के तौर पर एक प्रश्न यह था :—

जज – ''भला, दादा आप सब की आँखों में डालने के लिए कौन-सा सुरमा या अंजन देते हैं?''

ओम् राधे – ''जज साहिब, क्या आपने शास्त्र पढ़े हैं?''

जज – ''जी हाँ, कुछ पढ़े तो हैं।''

ओम् राधे –''तो आपने पढ़ा होगा कि ईश्वरीय ज्ञान को 'अंजन' भी कहा गया है। एक पद भी है —''ज्ञान अंजन सद्‌गुरु दिया, अज्ञान-अंधेर विनाश।' '' अब सद्‌गुरु परमपिता परमात्मा ज्ञान देते हैं तो आत्माओं का अज्ञान-अंधेर मिट जाता है। तो वही 'ज्ञान-अंजन' अब हमें परमपिता परमात्मा देते हैं जो कि हम औरों को भी देते हैं।''

जज –''दादा जी के कितने बच्चे हैं?''

ओम् राधे –''जज साहिब, हम दादा जी के शरीर को नहीं देखती हैं। हमें तो दिव्य चक्षु द्वारा उनके तन में प्रविष्ट हुए परमपिता परमात्मा का

अनुभव अथवा दिव्य साक्षात्कार होता है। अब आप ही बताइये कि भगवान् के कितने बच्चे हैं क्या कोई मनुष्य पूरी गिनती कर सकता है भगवान् तो त्रिलोकीनाथ हैं, सभी उनके बच्चे हैं? केवल हम उनकी बच्चियाँ या बच्चे नहीं, बल्कि आप भी उनके बच्चे हैं।''

जज साहिब, ये सभी उत्तर शान्त होकर सुनते रहे और लिखते रहे। ओम् राधे जी भी कटघरे से नीचे उतरकर हमारी ओर आई । जनता ने एक बार फिर तालियाँ बजाईं। विभिन्न समाचार पत्रों के रिपोर्टर या संवाददाता भी कोर्ट में बैठे ये प्रश्न-उत्तर लिख रहे थे। हम जज से विदाई लेकर चली आईं ।

दूसरे दिन प्रात: हमने कराची में लौटकर बाबा को सारा समाचार सुनाया परन्तु बाबा को समाचार पत्रों द्वारा पहले ही सब मालूम हो गया था। वह शान्त, साक्षी और निश्चिन्त अवस्था में थे।

अब कराची में कन्याएँ-माताएँ और परिवार ज्ञानामृत द्वारा अपना जीवन उच्च बना रहे थे परन्तु वहाँ जाने पर भी लोगों ने विरोध न छोड़ा। उन्होंने वहाँ के साधु टी० एल० वासवानी को भी भड़काकर साथ मिलाया। इस वृत्तान्त के बारे में ब्रह्माकुमारी चन्द्रमणि जी लिखती हैं :—

एक और परीक्षा

''कराची में साधु टी० एल० वासवानी ने कन्याओं के लिए 'मीराँ स्कूल' खोल रखा था और वे सत्संग भी करते थे। एक दिन बाबा ने हम बच्चों को कहा कि आप जाकर साधु वासवानी जी को ईश्वरीय सन्देश भी दे आओ और ज्ञान-वार्तालाप भी कर आओ। उन दिनों यह मालूम हुआ था कि साधु वासवानी जी 'ओम् मण्डली' के विरुद्ध पिकेटिंग करने की बात सोच रहे हैं। अत: बाबा ने हमें कहा कि वासवानी जी को कहना कि पहले आप स्वयं 'ओम् मण्डली' को अच्छी तरह देखिये, वहाँ आने वाले सत्संगियों के अनुभव पूछिये और यों ही सुनी-सुनाई बात पर कोई निर्णय न कीजिये और बिना जाने आन्दोलन करने की भूल न कीजिये । अत: हम

कुछेक बहनें इकट्ठी होकर उनके पास गयीं और ईश्वरीय सन्देश का एक ग्रामोफोन रेकार्ड भी साथ ले गयीं। हम लोगों से उनका ज्ञान-वार्तालाप हुआ। हमने उन्हें अपना अनुभव भी सुनाया और यह भी बताया कि अब परमपिता परमात्मा हमें क्या ज्ञान दे रहे हैं, उसका लक्ष्य क्या है, उससे हमें प्राप्ति क्या हुई है और उससे हमारे जीवन में परिवर्तन क्या आया है। यह सब सुनकर वासवानी जी बहुत खुश हुए। हमने बाबा की ओर से और 'ओम् मण्डली' की ओर से, 'ओम् निवास' में आने का निमन्त्रण भी दिया।

वह कहने लगे —''अच्छा, मैं आपके साथ ही चलता हूँ।'' चुनाचे, वे हम सभी के साथ ही कार में बैठकर चलने लगे। ज्यों ही वे कार में बैठे त्यों ही कार के चारों ओर उनके सत्संग में आने वाले तथा प्रशंसक नर-नारी घेरा डालकर खड़े हो गये। उन्होंने कहा कि हम नहीं जाने देंगे। साधू वासवानी ने कहा कि डरिये नहीं, मैं एक घण्टे में वापस लौट आऊँगा। परन्तु उन लोगों को यह झूठा डर था कि यदि वे भी वहाँ चले गए और इन पर भी 'ओम् मण्डली' का ऐसा प्रभाव पड़ गया कि यह वहीं के हो गए तो हम सब का क्या बनेगा? अत: उन्होंने वासवानी जी को नहीं जाने दिया। आखिर वासवानी जी कार से उतर आये और बोले कि दादा से मिलने का बहुत ही मन था परन्तु अभी नहीं चल सकूँगा, फिर कभी आऊँगा।

अब साधु वासवानी जी के शिष्यों ने तथा मुखी लोगों ने उन्हें खूब भड़काया। एक दिन आया कि साधु वासवानी जी ने उन सभी के साथ मिलकर 'ओम् निवास' के बाहर पिकेटिंग की। हज़ारों लोग वहाँ इकट्ठे हो गए। सभी ने बहुत ज़ोर से आक्रमण किया। वे दीवार तोड़कर अन्दर भी घुस आये। लेकिन शीघ्र ही पुलिस ने पहुँचकर सभी को भगा दिया। वासवानी जी को पुलिस वाले ले गए।

साधु वासवानी जी श्रीकृष्ण के भक्त थे और गीता में उनकी बहुत

श्रद्धा थी। यदि लोग उन्हें न भड़काते और वे एक बार दादा से सम्मुख ज्ञान-वार्तालाप करते तो वे पिकेटिंग न करते बल्कि बहुत ही खुश होते। परन्तु, अब पिकेटिंग से वातावरण और भी बिगड़ गया। मुखी लोगों ने साधु वासवानी जी को भी साथ मिलाकर सिन्ध सरकार पर दबाव डालना शुरू किया कि वह 'ओम् मण्डली' पर प्रतिबन्ध लगाये। चुनाचे, हिन्दू सदस्यों तथा मन्त्रियों ने मुख्यमन्त्री तथा विधिमन्त्री पर दबाव डाला और उन्हें धमकियाँ भी दीं।

इस सिलसिले में मुख्यमंत्री तथा विधिमंत्री ने सिन्ध की विधान सभा में जो भाषण दिये, वह बहुत ही तथ्यपूर्ण है।[1] उन्होंने स्पष्ट कहा कि मन्त्रीमंडल के हिन्दू सदस्यों ने हमें त्यागपत्र की धमकी दी है। परन्तु हम किसी की धमकियों से डरने वाले नहीं हैं। हरेक को अपने धार्मिक मन्तव्य के अनुसार सत्संग या साधना करने का कानूनी अधिकार है। 'ओम् मण्डली' पर प्रतिबन्ध किस धारा के अन्तर्गत लगाया जाये? उन्होंने हज़रत मुहम्मद का उदाहरण देते हुए तथा अन्य सुधारकों का हवाला देते हुए यह भी कहा कि शुरू में वे लोग भी संख्या में थोड़े होते थे और उन पर भी लोगों ने अत्याचार किये थे। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि दादा जी से जो भी जायज़ माँग की गयी थी वह उन्होंने पूरी की। उन्होंने यह भी कहा कि वास्तव में ज़्यादती तो 'ऐन्टी ओम् मण्डली' की ही है।

परन्तु अन्त में जब उन्होंने अपना मन्त्रीमण्डल इसी कारण से टूटते देखा तो वे थोड़े-से झुक गए। सरकार ने एक ट्रिब्यूनल नियुक्त किया। परन्तु उस ट्रिब्यूनल में भी सिन्धी भाई-बन्धों तथा मुखियों के रिश्तेदार व्यक्ति ही नियुक्त किये गये थे। इस पर 'ओम् मण्डली' की ओर से सरकार को स्पष्ट बताया गया कि ट्रिब्यूनल के एक सदस्य तो सिन्ध ऑब्ज़र्वर (समाचार-पत्र) की बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स के चेयरमेन हैं और वह

पत्र तो 'ऐन्टी ओम् मण्डली' का ही पक्ष शुरु से लेता आ रहा है और ट्रिब्यूनल के इस सदस्य का 'ऐन्टी ओम् मण्डली' के कुछेक सदस्यों से रिश्ता-नाता भी है। इसलिए, यह सदस्य निष्पक्ष नहीं हो सकते। इसी प्रकार, अन्य सदस्यों के बारे में भी बताया गया कि वे भी 'ऐन्टी ओम् मण्डली' के पक्षपाती हैं। अत: सरकार को यह आवेदन पत्र दिया गया कि ट्रिब्यूनल में कोई निष्पक्ष व्यक्ति होने चाहिएँ। या तो उनमें कोई अंग्रेज़ आदि हों और या निष्पक्ष हिन्दू हों । इसके अतिरिक्त यह भी कहा कि पिकेटिंग के परिणामस्वरूप जो वातावरण बिगड़ गया है, उसे शान्त किया जाय और जो सैक्शन १४४ लागू है, उसे हटाया जाये ताकि 'ओम् मण्डली' के प्रतिनिधि आपस में मिल-जुल सकें, और वे अपने वकील से राय-सलाह भी कर सकें। पुनश्च, यह भी माँग की गई कि ट्रिब्यूनल के सामने वकील को लाने की भी स्वीकृति दी जाये क्योंकि 'ओम् मण्डली' की प्रबन्ध कमेटी की सदस्याएँ कानूनी बातों को पेश करने की विधि से अपरिचित हैं। इसके अलावा सरकार से यह भी कहा गया कि ट्रिब्यूनल को यह अधिकार होना चाहिए कि वह साक्षी के लिए जिन व्यक्तियों को चाहे बुला सके। ट्रिब्यूनल की कार्य-पद्धति का भी पता लगना चाहिए तथा जिन बातों पर उसे जाँच करनी है, उनकी भी सूची प्रकाशित होनी चाहिए। परन्तु 'ओम् मण्डली' की ओर से सरकार को लिखी गई इन बातों की कोई सुनवाई न हुई, न ही उनके प्रतिनिधियों को वकील पेश करने की इजाजत दी गई, न उनके आपस में खुली तरह मिलने-जुलने के लिए उचित वातावरण पैदा किया गया। अत: 'ओम् मण्डली' ने ट्रिब्यूनल की बैठकों में सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया। 'ओम् मण्डली' के बहुत-से सदस्यों ने व्यक्तिगत रूप से ट्रिब्यूनल को लिखा था कि हम भी ट्रिब्यूनल के सामने 'ओम् मण्डली' के मन्तव्यों तथा कार्यों को स्पष्ट करना चाहते हैं। यद्यपि वे प्रतिष्ठित कुलों के नर-नारी थे परन्तु उनमें से किसी को भी साक्षी के लिए नहीं बुलाया गया था। आखिर ट्रिब्यूनल ने 'ओम् मण्डली'

के प्रतिनिधियों की सुनवाई किए बिना एक तरफा (ex-parte) निर्णय दे दिया। जिसमें उसने ये सिफारिश की कि 'ओम् मण्डली' के सदस्य अलग-अलग रहें। यह बड़ा विचित्र निर्णय था क्योंकि ओम् मण्डली के सदस्य तो प्राय: परिवार ही थे। क्या पति अपनी पत्नी से, पिता अपने पुत्रों से अलग रहे? ट्रिब्यूनल का इस बात पर तो ध्यान ही नहीं गया था कि बहुत से पूरे कुटुम्ब ही 'ओम् मण्डली' में थे। अत: इस फैसले की कई समाचार पत्रों, जैसे कि 'सिन्ध गजट' में कड़ी आलोचना हुई। बहुत-से शिक्षित लोगों ने यह आवाज़ उठाई कि यह अन्याय है। हर-एक को अपने धार्मिक सिद्धान्तों पर चलने की पूरी वैधानिक स्वतन्त्रता है और होनी चाहिए। ओम् मण्डली की ओर से भी गवर्नर साहिब को पत्र लिखा गया। समाचार पत्रों में इस बात पर काफी चर्चा हुई कि जिस कानून के अन्तर्गत ओम् मण्डली के सदस्यों को अलग रहने के लिए कहा गया है वह कानून तो इस मामले में लागू ही नहीं होता। वह तो किसी ऐसी संस्था पर लगाया जा सकता है जो उपद्रव करती हो परन्तु 'ओम् मण्डली' के बारे में तो हाई कोर्ट पहले भी एक बार निर्णय दे चुकी है कि ये लोग शान्ति-प्रिय हैं और समाज-सुधारक हैं। किन्तु कितना अन्याय है इस संसार में! हाई कोर्ट के इस निर्णय की ओर भी ध्यान न देते हुए, मन्त्रिमण्डल को बचाने के लिए न्याय का खून कर दिया गया और अन्त तक 'ओम् मण्डली' को यह भी न बताया गया कि 'ओम् मण्डली' के विरुद्ध ट्रिब्यूनल में किस-किसने गवाही दी और उसने क्या-क्या कहा और कि 'ओम् मण्डली' के विरुद्ध आरोप क्या है और उसका आधार तथा प्रमाण क्या है?

आखिर सिन्ध के मुख्यमन्त्री तथा विधिमन्त्री ने अनौपचारिक रूप से सुझाव दिया कि 'ओम् मण्डली' के लिये पाँच-छ: बंगले पास-पास ले लिए जाएँ, जहाँ पर कि वे कुछ समय के लिए अलग-अलग रहें। उन्होंने मौखिक आश्वासन दिया कि कुछ समय इस प्रकार करने से लोगों के अत्याचार और आन्दोलन बन्द हो जाएँगे और सरकार ओम् मण्डली के

विरुद्ध कोई कदम नहीं उठायेगी। बाप अपने बच्चों के मन को खुश करने की कोशिश तो करता ही है। अत: ऐसा ही किया गया। एक बंगले में बाबा और उसके साथ कुछ परिवार जोकि उनके लौकिक रिश्तेदार भी थे, साथ रहते थे। एक बँगले में छोटे बच्चे रहते थे जोकि लौकिक शिक्षा के अतिरिक्त ईश्वरीय ज्ञान भी लेते थे। एक बँगले में ओम् राधे जी के साथ मातएँ और बालिग कन्याएँ रहती थीं। एक अन्य बँगले में भाई लोग रहते थे। इस प्रकार, ईश्वरीय यज्ञ का कार्य तो पहले की तरह ही चलता रहा। विद्यार्थी जीवन और ईश्वरीय पढ़ाई का कार्य भी ठीक वैसे ही चलता रहा। अपनी बसों में सवार होकर वैसे ही प्रतिदिन 'क्लिफ्टन' पर सागर के किनारे सैर करने जाते थे। कुछ समय ही लोगों ने झंझट और झगड़ा करने की कोशिश की होगी। आखिर जब उन्होंने देखा कि ये लोग टलने वाले नहीं हैं, इन्हें तो पक्की ईश्वरीय लग्न लग गई है, वे थक कर वापस हैदराबाद चले गए। उन लोगों को परमपिता परमात्मा से बैर करने तथा अपना ही धन और समय व्यर्थ गँवाने के सिवा तो कुछ मिला ही नहीं। उन्होंने सोचा कि एक दिन दादा का पैसा भी खर्च होते-होते समाप्त हो जायेगा और तब ये सभी माताएँ-बहनें और भाई वापस लौट जायेंगे। उन्हें यह क्या मालूम था कि यह सर्वशक्तिवान् परमपिता परमात्मा द्वारा स्थापित किया हुआ ईश्वरीय विश्व-विद्यालय है, यह किसी मनुष्य द्वारा स्थापित किया हुआ साधारण ज्ञान-यज्ञ या विद्यालय नहीं है। उन लोगों ने समाचार पत्रों में यह प्रस्ताव छपवा दिया कि कोई भी व्यक्ति 'ओम् मण्डली' को पैसा न देवे ताकि इसका धन समाप्त हो जाय और इस संस्था का अन्त हो जाय। परन्तु जिस 'ओम् मण्डली' का आधार 'त्याग, तपस्या और ईश्वरीय निष्ठा' था, उसका लोग कैसे अन्त कर सकते थे? उसका कार्य अब शान्तिपूर्वक और सुचारू रूप से चलने लगा।

जिन कन्याओं को नाबालिग़ होने के कारण कोर्ट (न्यायालय) द्वारा उनके सम्बन्धी ले गए थे, वे भी अब वापस आने लगीं क्योंकि उनके माता-

पिता ने देखा कि इनकी लग्न तो अटूट तौर पर ईश्वर से लगी हुई है और ये सिनेमा, फ़ैशन, मांसाहार, विकारी विवाह आदि के लिए तो हमारा प्रस्ताव मानती नहीं हैं, तो क्यों न इन्हें जाने दिया जाय और जीवन को उच्च बनाने की शिक्षा लेने दी जाये।

बालिग़ और बुज़ुर्ग माताएँ तो पहले से ही वहाँ थीं हीं। उन्हें तो कोई भी वापस जाने की आज्ञा नहीं दे सकता था क्योंकि वास्तव में तो पहले से ही सबके पति या ससुर ने उन्हें यह स्वीकृति पत्र लिख कर दिया हुआ था कि वह 'ओम् मण्डली' में 'ओम् राधे' के पास जाकर ज्ञानामृत पी और पिला सकती हैं।

नाबालिग़ कन्याओं के सामने एक और परीक्षा

कुछ बालिग़ कन्याओं को भी उनके माता-पिता किसी मान्य व्यक्ति द्वारा दबांव डलवाकर और बीच-बचाव कराके वापस घर ले गए थे। अब वे भी वापस लौट आईं क्योंकि उनकी लग्न, निष्ठा, त्याग तथा सच्चाई से तो मध्यस्थता अथवा बिचौही करने वाले व्यक्ति तथा उनके माता-पिता भी अब प्रभावित हो गए थे। इस विषय में ब्रह्माकुमारी मनोहर इन्द्रा जी ने जो आप-बीती लिखी है, वह यहाँ उल्लेखनीय है। ब्रह्माकुमारी मनोहर इन्द्रा जी लिखती हैं :—

एक दिन की बात है कि दो-तीन कुमारियों की माताओं को 'ऐन्टी ओम् मण्डली' के लोगों ने बहकाया और कहा कि आप 'ओम् मण्डली' से अपनी बच्चियों को वापस लाओ। परन्तु उन्होंने कहा कि हमने तो उन्हें स्वीकृति पत्र लिखकर दिया हुआ है, अत: न्यायालय में तो वे उस पत्र को पेश कर देंगी। यह सुनकर 'ऐन्टी ओम् मण्डली' वालों ने उनसे कहा कि —''अच्छा, हम आपको दूसरा उपाय बताते हैं। यदि आप हमारे उस सुझाव पर नहीं चलेंगी तो हम आपको अपनी बिरादरी से निकाल देंगे और आपको क्षति पहुँचायेंगे। इस प्रकार उन्हें डराकर वे उन माताओं को कराची में ले आये और वहाँ उन्हें सारी बात समझाकर वहाँ के एक धनाढ्य एवं

प्रसिद्ध व्यक्ति 'शिव रत्न मोहत्ता' जी के दरवाज़े पर बिठा दिया और भूख-हड़ताल करने को कहा। जब शिव रत्न मोहत्ता जी को यह बात मालूम हुई तो उसने उन माताओं को भीतर बुलाकर भूख-हड़ताल का कारण पूछा। उन माताओं ने बहुत ही अनुनय-विनय करते हुए कहा कि दादा से कहकर हमारी कन्याओं को वापस भिजवा दो। शिव रत्न जी ने दादाजी से बात करके हमें अपने यहाँ बुलवाया। हमने देखा कि उनका मकान एक बड़े महल की तरह था। क्रोध से उनके नेत्र लाल हो रहे थे। उनका व्यक्तित्व बड़ा भयंकर था। उन्होंने हमसे न कुछ पूछा, न हमसे कुछ कहा, बल्कि आज्ञा की कि हम कन्याओं को हमारी माता के हवाले कर दिया जाय! वे बोले –''इन कुमारियों ने अपनी माताओं को बहुत तंग किया हुआ है।'' हमें ऐसा लग रहा था जैसे कि कंस हम कन्याओं को शिला पर पटक कर मार रहा हो। उसके आतंक के कारण हम बाहर उन माताओं के साथ कार में बैठ गयीं। परन्तु उस समय हमारी अन्तरात्मा में आवाज हुई कि –''हे शक्तियों, तुम इनसे डरो मत। इनको ईश्वरीय सन्देश देती जाओ, आप ही तो इनके उद्धार के लिए निमित्त हैं।'' अत: हम कार से उतरकर फिर अन्दर गयीं। हमने कहा –''हमें आपसे एक बात करनी है।'' वह तिलमिला कर बोले –''क्या बात करनी है?''

हमने कहा –''बाबू जी, आप हमको कहाँ भेज रहे हैं हम आपको बताती हैं कि हम यहाँ पर कैसा जीवन बना रही हैं और हम इन माताओं के यहाँ क्यों नहीं जाना चाहतीं? हम आपसे केवल एक ही बात माँगती हैं, आपको हमारी वह माँग पूरी करनी होगी। हम कोई सोना-चाँदी नहीं माँगती हैं, न ही संसार का कोई अन्य वैभव या सुविधा-सुख माँगती हैं। ये लोग हमें ज्ञानामृत पीने के लिए 'ओम् मण्डली' में जाने की आज्ञा नहीं देती हैं, न ही हमें पवित्र अर्थात् ब्रह्मचर्य व्रत वाला उत्तम जीवन व्यतीत करने की स्वीकृति देती हैं। बाबू जी, हमारी इस प्रार्थना को स्वीकार करने की बजाय ये हमें बहुत ही बुरी तरह मारती-पीटती हैं। अब भी हमको यहाँ

से ले जाकर यह हमें खूब मार देंगी और दिलायेंगी। तब क्या आप सहन कर सकेंगे कि आपने अपने हाथों से जिन कन्याओं को इन्हें सौंपा हैं, उनकी ऐसी हालत हो? देखिये, यह हम पर सितम ढाकर हमारे मुख में अशुद्ध अर्थात् तामसिक भोजन डालने का हेय कर्म भी करतीं हैं! हमें पकड़कर सिनेमा ले जाती हैं। हम शान्तिपूर्वक प्रभु की याद में जब कुछ समय घर में बैठती हैं तब यह लोग हमें पीछे से धक्का देती हैं, हमारे सम्बन्धी हमारे बाल खींचते हैं....'' हमारा यह सब दर्दनाक जीवन-वृत्त सुनकर मोहत्ता जी के मन में दया की भावना जागृत हुई।

कुछ नर्म स्वर में मोहत्ता जी बोले –''अच्छा, मैं आप लोगों से एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ। मैंने सुना है कि तुम लोग शादी करने से इन्कार करती हो।''

मैंने कहा – ''बाबू जी, ऐसा नहीं है। हम शादी से इन्कार नहीं करतीं। शादी तो श्री राम ने भी की, श्रीकृष्ण ने भी की, सभी ने की। बाबूजी, बात केवल यह है कि हम विकारी मनुष्य से शादी नहीं करना चाहतीं। हम में से हरेक की इच्छा है कि हम उस पुरुष से शादी करें जिसने आत्म-साक्षात्कार रूपी धनुष को तोड़ा हो और मनोविकारों पर विजय प्राप्त की हो।''

मोहत्ता जी बोले – ''क्या कहा, आत्म-साक्षात्कार रूपी धनुष।''

हमने कहा – ''जी हाँ!''

यह बात सुनकर मोहत्ता जी को बहुत खुशी हुई। उनका चेहरा जो पहले तना हुआ-सा लगता था, बदलते-बदलते खुशी से खिल उठा।

मोहत्ता जी बोले – ''आप छोटी-छोटी कन्याओं की यह बातें सुनकर और आपकी लग्न और उत्साह को देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। आप साक्षात् देवियाँ हैं। आपके संस्कार मंझे हुए हैं। आपका मन निर्मल है। बस, मैंने समझ लिया है। अरे, आप पर इतना अत्याचार! बेटी, तुम निशिचन्त रहो।

फिर वे माताओं की ओर देखकर कहने लगे –''आप तो सौभाग्यशालिनी हैं कि आपके घरों में ऐसी तपस्विनी कन्याएँ-बालाएँ हैं! अरे, आप इनको मारती हो? इनको इनकी इच्छा के विरुद्ध, बलात् अशुद्ध भोजन खिलाती हो? ये तो पावन पुत्रियाँ हैं, साक्षात् देवियाँ हैं। खबरदार! अब इन पर कोई अत्याचार नहीं होना चाहिए...। अब आप भले ही इन्हें अपने साथ ले जाइये परन्तु जब भी जाने के लिए इनका मन करे, इन्हें खुशी-खुशी छुट्टी दे देना।'' ऐसा कहकर उन्होंने हमें छुट्टी दी।

हमारी वह माताएँ मन ही मन में डर रही थीं कि हमारी असत्यता की कहीं और पोल न खुल जाये । उन्होंने मोहत्ता जी को कहा था कि हमारी कन्याएँ घर से भाग गयी हैं। परन्तु वास्तव में तो ऐसा था ही नहीं। हम तो उनसे स्वीकृति पत्र लेकर ही गयीं थीं। उन माताओं ने तो लोगों के आतंक और उनकी धमकियों से भयभीत होकर ही मोहत्ता साहिब के घर पर भूख-हड़ताल की थी।

अस्तु, जो हुआ, उसमें भी हमारा कल्याण ही समाया हुआ था। हम जब कराची से अपनी इन माताओं के साथ हैदराबाद में लौटी तो हमने सोचा कि हमें जो ईश्वरीय ज्ञान बाबा ने दिया, क्यों न हम उस द्वारा अब इन माताओं का भी कल्याण करें? सेवा का यह अच्छा अवसर है। यह शुभ संकल्प करके हम जितने दिन वहाँ रहीं, हम उन्हें कुछ-न-कुछ ज्ञान सुनाती रहीं, घर में अन्य कार्यों में तो हम उन्हें पूरा सहयोग देती थीं ही। आखिर वह माताएँ हमारे प्रैक्टीकल जीवन से इतनी प्रभावित हुई कि उन्होंने हमें खुशी से छुट्टी दी और कहा –'बेटी, आप भले ही ब्रह्मा-विद्या अथवा अविनाशी ज्ञान प्राप्त करके अपना भविष्य उज्वल बनाओ।'' हम उनका शुभ-आशीष लेकर कराची में वापस ज्ञान-यज्ञ अर्थात् ईश्वरीय विश्व-विद्यालय में लौट आई और वहाँ बोर्डिंग में रहने लगीं । अब हम लोग निश्चिन्त होकर ईश्वरीय विद्या पढ़ने लगीं। अब लोगों की ओर से हमें कोई झंझट नहीं था। हम लोक-लाज, निन्दा, भय, और आसुरी मर्यादा की

परीक्षा को काफी हद तक पार कर चुकी थीं।''

अब काफी संख्या में हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में ईश्वरीय साहित्य को छपवा कर लोगों को दिया जाता था। देश-भर के हज़ारों विशिष्ट व्यक्तियों को भी भेजा जाता रहा और 'इज दिस जस्टिस' (Is this Justice) नाम से भी एक पुस्तक छपवा कर सभी विशिष्ट व्यक्तियों के पास भेजी गयीं ताकि उन्हें मालूम रहे कि कैसे दबाव, धमकी तथा पक्षपात के वश 'ओम् मण्डली' से अन्याय किया गया। आज संसार में अन्याय है, तभी तो किसी ने कहा है:—

छोड़ भी दे आकाश सिंहासन....इस धरती पर आ-जा रे
काँप रही है धरती थर-थर, आग के बादल बरसें घर-घर ।
बढ़ती जाये पाप की गरमी, पिघल रहा है पत्थर-पत्थर।
अंधकार ही अंधकार है, आकर जोत जगा जा रे।
छोड़ भी दे आकाश सिंहासन....इस धरती पर आ-जा रे।
निर्दोषों का लहू है बहता, इक माँ का दिल रो-रो कहता
पापी बैठे मौज मनाये, धर्म का बन्दा जुल्म है सहता।
जग में फिर से दया धर्म की, आ कर बेल लगा जा रे।
छोड़ भी दे आकाश सिंहासन ....इस धरती पर आ-जा रे।
—आ जा रे।

ऐसे ही समय के बारे में भगवान् ने कहा है :

''यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवतिभारत
अभ्युत्थानम् अधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्''

परन्तु आज लोग तो जानते नहीं कि भगवान् ही अवतिरत होकर धर्म की पुनर्स्थापना करा रहे हैं।

अलौकिक माता-पिता द्वारा सुख घनेरे, परमशिक्षक और परमसद्‌गुरु परमात्मा द्वारा श्रेष्ठ शिक्षाएँ

अब सभी ज्ञानाभिलाषी, पवित्रता-प्रेमी माताएँ-कन्याएं और भाई शान्त वातावरण में पूरी तरह ईश्वरीय ज्ञान के अध्ययन में लग गये। उन्हें अपने जीवन में अपार आत्मिक सुख का अनुभव हुआ। अब उनका मनुआ यह गीत गाता होगा :–

आज हमें सब बेहद भाता
आज हमारा है मन हर्षाता
ज्ञान से त्रिलोकी देखी अति सुन्दर
ज्ञान से देखी लीला अति सुन्दर
क्या आनन्द है आता, अहा, क्या आनन्द है आता
अहा, आज मुझे है बेहद भाता!

इस प्रकार, अब पहले से भी अधिक शान्तिपूर्वक अलौकिक कार्य चलने लगा। लोक-लाज की परीक्षा को पार करने तथा कठिनाईयों को सहन करने के बाद अब आध्यात्मिकता के दूसरे विषयों में खूब शिक्षा मिलने लगी। यों तो इस पढ़ाई का वर्णन करने बैठें तो बहुत विस्तार होने पर भी इसका उल्लेख करना कठिन होगा। परन्तु सार रूप में यह कहा जा सकता है कि स्वयं सम्बन्धियों ही के अत्याचार के परिणामस्वरूप हमारे देह के सम्बन्धों का संन्यास हो जाने के बाद, अब बाबा ने हमें अन्यान्य प्रकार के उच्च त्याग के लिए तैयार किया और हमारे मन-वचन-कर्म को पूर्णत: निर्विकार बनाने के लिए नित्य ज्ञान के अनमोल रहस्य समझाये ।

गहन पढ़ाई शुरू

बाबा ने हमें पहला पाठ यह पढ़ाया कि —''आप सभी ने मरजीवा जन्म लिया है। आपके लौकिक सम्बन्धियों ने आपसे नाता तोड़ दिया है। गोया उनके घर से आप मर चुके हो। अब जैसे कोई मनुष्य मरने के बाद दूसरा जन्म लेता है तो उसे पिछले जन्म के मित्रों-सम्बन्धियों तथा जीवन-वृत्तान्तों की याद नहीं रहती, वैसे ही अब जबकि आप लौकिक सम्बन्धियों के यहाँ से जीते-जी मर चुके हैं और अब आपने यहाँ नया अर्थात् मरजीवा जन्म लिया है, तो आपको भी अब पुराने सम्बन्धों तथा अपने पुराने जीवन की याद नहीं आनी चाहिए। अब आपने परमपिता परमात्मा की गोद ली है, अर्थात् अब आप उसके बच्चे बने हैं। आप 'द्विज' अर्थात् 'ब्राह्मण' बने हैं। आप अब ब्रह्मा- मुख वंशावली हैं। अत: अब आप बच्चों का बुद्धियोग एक परमपिता परमात्मा ही से होना चाहिए। अगर आपकी बुद्धि में दैहिक सम्बन्धों की याद आती रहेगी और मन में ईश्वरीय नाते की विस्मृति होती रहेगी तो आप ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार प्राप्त नहीं कर सकोगे अर्थात्,आप स्वर्ग का स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकोगे।''

भले ही कई-एक पूरे परिवारों ने भी इस ईश्वरीय यज्ञ में आत्म-समर्पण किया था। परन्तु बाबा ने समझाया कि अब आप आत्मिक नाते से व्यवहार करो। अब आप सभी 'प्रभु-वत्स' अथवा 'यज्ञ-वत्स' हैं। अत: यहाँ जो माता-पिता हैं, उन्हें अपने लौकिक बच्चों की यह चिन्ता नहीं करनी चाहिए कि उन्हें खाना और वस्त्र आदि ठीक मिल रहे है या नहीं? सब की संभाल करना यज्ञ-माता और यज्ञ पिता का कर्त्तव्य है और सभी का सम्बन्ध उन ही से होना चाहिए। इस प्रकार की शिक्षा मिलने से और इस नियम के अनुसार चलने से यज्ञ-वत्सों का रहा-सहा मोह, बची-खुची ममता अथवा दैहिक सम्बन्धियों से यथा-शेष लगाव भी जाता रहा। अब सभी का परस्पर आत्मा-आत्मा, भाई-भाई का अथवा भाई-बहन का ही पवित्र और शुद्ध स्नेह- युक्त नाता रहा, बाकी सभी नाते परमपिता परमात्मा ही से जुट गये

और वे यज्ञ-माता तथा यज्ञ-पिता ही के आदेश, निर्देश और ईश्वरीय नियम के अनुसार ही चलने लगे।

दूसरी ओर बाबा ने हमें कर्मेन्द्रियों के विषयों के चिन्तन और उनमें आसक्ति के त्याग की शिक्षा दी। बाबा ने कहा —"बच्चे, अब आप वत्सों को कर्मेन्द्रियों पर भी काबू पाना है। पुराने संस्कारों के कारण आपके मन में तो कई बार अशुद्ध संकल्प उत्पन्न होंगें, उन्हें तो आप योग-बल तथा ज्ञान-बल द्वारा शुद्ध करते ही जायेंगें परन्तु अब से लेकर आप की कर्मेन्द्रियों द्वारा कोई भी विकर्म नहीं होना चाहिए। यदि कर्मेन्द्रियों द्वारा आपने कोई ज्ञान-विरुद्ध कर्म किया तो आपको अब उसका सौ गुणा दण्ड मिलेगा क्योंकि पहले तो आप अज्ञानी थे और अज्ञान-वश ही वह कर्म कर बैठते थे जबकि अब आपको स्वरूप का, स्वधर्म का, लक्ष्य का और पुरुषार्थ का स्पष्ट ज्ञान मिला है । स्वयं को ईश्वर की सन्तान निश्चय करने के बाद तथा ज्ञान अर्थात् समझ मिल जाने के बाद यदि कोई मनुष्य विकर्म करता है, तो उसे कई गुणा दण्ड मिलना निश्चित है। इस प्रकार आँखों द्वारा बुरी दृष्टि से न देखना, मुख द्वारा बुरे बोल न बोलना, कान द्वारा बुरे वचन न सुनना, परमपिता परमात्मा की स्मृति में स्थित होकर अनासक्त भाव से, शुद्ध ही भोजन खाना, सदा हर्षित-मुख और प्रसन्नवदन रहना — यह सब शिक्षा भी बाबा ने हमें प्रैक्टिकल जीवन का आदर्श सामने देकर स्पष्ट रूप से दी। बाबा ने राज-कुलोचित व्यवहार एवं शिष्ट चलन के लिए भी बहुत ही मधुर एवं प्रेरणादायक रीति से शिक्षा दी।

निद्रा अवस्था को सतोगुणी बनाने पर ध्यान

यहाँ तक कि बाबा ने निद्रा अवस्था को भी सतोगुणी बनाने की युक्तियाँ समझायीं । उन्होंने यह नियम निर्धारित कर दिया कि सभी वत्स कुछ समय ईश्वरीय याद में बैठने के पश्चात् ही सोयें। कई बार तो बाबा दो बजे रात गए वहाँ आते जहाँ यज्ञ-वत्स सोये पड़े होते और अपने साथ आये वत्सों को सोये हुए वत्सों के चेहरे की ओर संकेत करके कहते कि

—'देखो, उनके चेहरे से ही ऐसा लगता है कि वे ईश्वरीय याद का अभ्यास करते सतोगुणी नींद सोये हैं मानों कि सुख-पूर्वक विश्राम कर रहे हैं, परन्तु इन दूसरे वत्सों को देखो, वे तमोगुणी निद्रा में अचेत-सी अवस्था में सोये पड़े हैं।

इस प्रकार कर्मेन्द्रियों के विषयों और पदार्थों में आसक्ति के त्याग तथा कर्मेन्द्रियों द्वारा विकर्मों के त्याग का पाठ प्रैक्टीकल जीवन में पक्का कराते-कराते कुछ ही वर्षों में बाबा ने मानसिक शुद्धि के लिए बहुत ही शिक्षा दी। बाबा कहते — ''बच्चे, यदि संकल्प शुद्ध नहीं होगा तो कर्मेन्द्रियों से भी बुरे कर्म हो ही जायेंगे। इसलिए अब मनसा को पूर्णत: शुद्ध करो और यह शुद्धि उतनी- उतनी प्राप्त होगी जितना-जितना कि आप आत्म-स्मृति में तथा ईश्वरीय याद और खुशी में रहेंगे। यदि आने वाले महाविनाश से पहले आपने मानसिक शुद्धि प्राप्त नहीं की तो आपको सतयुगी सृष्टि में जीवन-मुक्ति देव पद नहीं मिलेगा बल्कि आपको त्रेतायुगी क्षत्रिय कुल में जन्म लेना पड़ेगा। अत: सावधान हो जाओ वरना आपका बहुत घाटा हो जायेगा। अब इस पुरुषोत्तम संगम युग में ज्ञान रूपी स्वदर्शन चक्र धारण करने से आपके मन के आसुरी संकल्प निर्मूल होते जायेंगे ....।''

दिव्य गुणों की धारणा पर ध्यान

बाबा ने अन्तर्मुखता, गम्भीरता, सहनशीलता, नम्रता आदि-आदि दिव्य गुणों की धारणा के लिए भी ज्ञान के बहुत गुह्य रहस्य समझाये। उससे यज्ञ-वत्सों के जीवन में दिव्यता और हर्ष दिनों दिन बढ़ते गए।

यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता द्वारा अलौकिक शिक्षा और पालन

बाबा ने तथा ओम् राधे जी ने, जिन्हें कि हम 'यज्ञ माता' और 'यज्ञ-पिता' के अलौकिक नाम से भी याद करते थे, यज्ञ-वत्सों को खान-पान आदि-आदि की पूरी सुविधाएँ दी। यज्ञ-सत्सों ने ऐसा सुख अनुभव किया और उन्हें यज्ञ-माता, यज्ञ-पिता से वह स्नेह मिला कि उन्हें स्वर्ग का सुख

भी हेय लगा और उन्हें इस संसार की तथा दैहिक सम्बन्धों की भी सुध-बुध भूल गयी। अहा! इस पुरुषोत्तम संगम युग में यह जो धर्म के माता-पिता से सभी को निष्काम, शुद्ध और आत्मिक प्यार मिला उसका वर्णन करना असम्भव है। ये करोड़ों रुपये खर्च करने पर भी नहीं मिल सकता। इस पृथ्वी पर ईश्वर द्वारा पालना लेने का यही एक सुनहरी अवसर सारे कल्प में आत्माओं को मिलता है। जिन्होंने उसका अनुभव किया है, वे गोप-गोपियाँ ही इसे जानती हैं, और नहीं जानता कोई! इस राज-ऋषि कुल में बाबा ने न केवल पिता का,शिक्षक का और धर्म-ज्ञान दाता का पार्ट बजाया बल्कि वे वत्सों को अति प्रेम से सागर के तट पर घूमने भी ले जाते, उन्हें पिकनिक भी कराते, उनके लिए खेल-कूद की सब व्यवस्था का खयाल रखते, उनमें से किसी का स्वास्थ्य बिगड़ता तो उसकी चिकित्सा तथा सेवा के लिए सब तरह का समुचित प्रबन्ध बनाये रखते। किसी भी वस्तु की कमी न थी। कितने ही अच्छे किसी के लौकिक माता- पिता हों, ऐसा सुख, ऐसा लाड़-प्यार, ऐसा लालन-पालन कोई भी कभी नहीं दे सकता। बाबा ने ही माता का भी पार्ट बजाया और भक्ति-मार्ग में यह जो शुभेच्छा भगवान् के प्रति व्यक्त की जाती है कि –''हे प्रभु,तुम्हीं माता और तुम्हीं पिता हो, और तुम्हारी कृपा से सुख घनेरे हैं।'' इसका प्रैक्टीकल अनुभव यज्ञ-वत्सों ने इस ज्ञान-मार्ग में किया जबकि परमपिता परमात्मा शिव ने प्रजापिता ब्रह्मा के तन में दिव्य प्रवेश करके माता-पिता के रूप में अत्माओं को ऐसा लाड़-प्यार दिया जिसका यज्ञ-वत्सों के मन-चित्त में कभी संकल्प ही न था। अत: हर्ष से उनका मन कह उठा :–

सुख की आई घड़ी, जब से मैं 'ओम् मण्डली' गई
प्रभु से रीति जुटी, सखी री मेरे सुख की आई घड़ी
मन-वश करने मन्त्र मिला मुझे, लगी न एक घड़ी
दिव्य दृष्टि मिली मोहे क्षण में, वैकुण्ठ आन खड़ी
मैंने कृष्ण से रास करी, सखी री .....

हर्ष-शोक की आग उफाणी, सुख-पद समाधि चढ़ी
सुख की आई घड़ी, मुझे लगी न एक घड़ी, सखी री.........
ज्ञान-अमृत बिन जिया घबराय, बिछड़ूँ न एक घड़ी
मैं तो अब प्रभु के हाथ विकाणी रे,
तन, मन सुध बिसरी
सुख की आई घड़ी, मैं तो जीते-जी मरी,
जब से ओम् मण्डली गई।

राजसूय अश्वमेध अविनाशी ज्ञान-यज्ञ

अब इस ज्ञान-यज्ञ में, जिसे कि ''राजसूय अश्वमेध अविनाशी ज्ञान-यज्ञ '' भी कहा जाता था, मुख्य रूप से ओम् राधे जी ही सम्भाल करती थीं। यों थीं तो वह एक बाल ब्रह्मचारिणी अथवा एक कन्या ही, परन्तु यज्ञ-पिता अथवा पिता-श्री ने उन्हें ही विशेष तौर पर उत्तरदायी ठहराया हुआ था, क्योंकि वह ईश्वरीय ज्ञान एवं दिव्य गुणों की धारणा में अन्य सभी से आगे थी। उनका जीवन और पुरुषार्थ सभी यज्ञ-वत्सों में से सर्वाधिक उच्च था। उन्हें देखने से ही ऐसा लगता था कि सभी दिव्य-गुण इकट्ठे होकर उनके ही सजीव रूप में साकार अथवा मूर्त रूप हुए हैं। ज्ञान-वीणा-वादन में वह सर्वोपरि थीं और उनकी कोई उपमा नहीं थी। इसलिए उन्हें 'यज्ञ-माता' के रूप में सभी यज्ञ-वत्स, चाहे वे शारीरिक आयु में कितने ही बड़े क्यों न हों, सम्मान देते थे। यहाँ तक कि उनकी अपनी लौकिक माँ भी उन्हें 'ममा' शब्द से सम्बोधित करती थीं क्योंकि अब तो वह जगत् की अम्बा थीं और अब तो सभी का उनसे आत्मिक नाता अथवा ज्ञान का नाता था। बाबा के लिए थीं तो वह भी एक वत्स अथवा पुत्री ही, परन्तु बाबा भी उन्हें 'ममा या माँ' के मधुर शब्द से बुलाते थे और 'बेटी' कहकर भी बुलाते थे। वह इस शिव-शक्ति दल की कुशल सैनानी थीं जो कि शक्तियों को ज्ञान रूपी अस्त्रों-शस्त्रों से और दिव्य गुणों से सजाती रहती थीं। जैसे

'ओम् राधे' जी को सभी वत्स ममा, 'माँ मातेश्वरी या यज्ञ-माता' कहकर बुलाते थे, वैसे ही 'ओम् बाबा' को वे सभी 'बाबा, पिता-श्री अथवा यज्ञ-पिता' कहकर बुलाते थे यहाँ तक कि उनकी लौकिक पत्नी और बहन भी उन्हें अब आत्मिक नाते से 'बाबा' ही कहती थीं और बाबा भी उन्हें 'बेटी अथवा बच्ची' कह कर बुलाते थे। यज्ञ-माता भी उन्हें सदा 'बाबा अथवा पिता-श्री' के मधुर नाम से सम्बोधित करती थीं।

'प्रजापिता ब्रह्मा' और 'जगदम्बा सरस्वती' नाम की सार्थकता

उन्हीं दिनों परमपिता परमात्मा शिव ने बाबा के तन का आधार लेकर यह भी परिचय दिया कि दादा अथवा बाबा ही वास्तव में 'प्रजापिता ब्रह्मा' हैं क्योंकि उनके मुख द्वारा वे (परमपिता शिव) शूद्रों अर्थात् विकारी नर - नारियों को 'मरजीवा' जन्म देकर सच्चे ब्राह्मण (पावन अथवा 'द्विज') बना रहे हैं और सतयुगी पावन सृष्टि की स्थापना कर रहे हैं। उन्होंने यह भी समझाया कि 'ओम् राधे अथवा ममा ही यज्ञ-माता सरस्वती है' जिनका कि ब्रह्मा की सर्वोत्तम ज्ञान-निष्ठ पुत्री के रूप में गायन है।

इसका नाम राजसूय अश्वमेध अविनशी ज्ञान-यज्ञ क्यों?

इस ईश्वरीय यज्ञ को ५००० वर्ष पहले वाला 'राजसूय अश्वमेध अविनाशी ज्ञान-यज्ञ' भी कहा जाता रहा क्योंकि यहाँ मन रूपी अश्व को ज्ञानाग्नि में 'स्वाहा' करके सतयुगी विश्व का स्वराज्य प्राप्त करने के लिए ही ज्ञान की धारणा अपने जीवन में की जाती है। ५००० वर्ष पहले भी 'गीता-युग' में भगवान् ने पाण्डवों से यह यज्ञ कराया था, अब फिर उन्होंने ही इसकी स्थापना की है। यही यज्ञ 'प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय' के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ। क्योंकि परमपिता परमात्मा शिव ने सहज ज्ञान और सहज राजयोग द्वारा मनुष्य को देवता अथवा नर को श्री नारायण और नारी को श्री लक्ष्मी पद के योग्य बनाने के लिए प्रजापिता ब्रह्मा के साकार माध्यम द्वारा इसकी स्थापना की थी। ज्योतिस्वरूप परम-

पिता परमात्मा शिव ही प्रतिदिन परमधाम से ब्रह्मा-तन में आ-आकर उनके मुख का आधार अथवा उधार लेकर मनुष्यात्माओं को पतित से पावन बनाने के लिए सहज गीता-ज्ञान देते और सहज राजयोग सिखाते रहे। परन्तु उस अति प्रसिद्ध परमपिता के उस गुप्त, साधारण वेश (तन) में होने के कारण लोग भ्रान्ति-वश पिता-श्री अर्थात् ब्रह्मा बाबा को ही इस यज्ञ का स्थापक तथा ब्रह्माकुमारी बहनों और ब्रह्माकुमार भाइयों का गुरु मानते रहे हैं और अज्ञानता-वश उन पर गाली रूपी आक के फूल चढ़ाते रहे हैं। परन्तु परमपिता शिव, प्रजापिता ब्रह्मा और मातेश्वरी सरस्वती जी पतितों को पावन करने का कर्त्तव्य यथा-पूर्व अथक रीति से करते रहे।

यज्ञ-वत्सों को आत्म-कल्याण और विश्व-सेवा के लिए शिक्षा

इस प्रकार शिव बाबा, ब्रह्मा बाबा और जगदम्बा सरस्वती, सभी ज्ञान-वत्सों को ज्ञान के श्रृंगार से खूब श्रृंगारते रहते थे। वे उन्हें योग-तपस्या का अधिकाधिक अभ्यास कराके विश्व की आध्यात्मिक सेवा के लिए तैयार कर रहे थे। वकीलों, डाक्टरों, व्यापारियों, अध्यापकों, गृहस्थियों, साधुओं, हरेक को यह सर्वोत्तम ईश्वरीय ज्ञान किस रीति समझा कर उनका कल्याण करना है, उसके लिए वह यज्ञ-वत्सों को शिक्षा देते रहे हैं। दुनिया की निगाहों और आवाजों से दूर होकर सभी अपनी योग-ज्वाला में आत्म-शुद्धि कर रहे थे तथा स्वयं में शक्ति भी भर रहे थे।

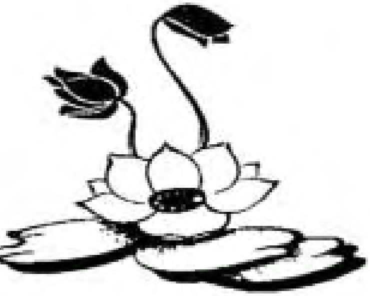

अपकार करने वालों पर भी उपकार
सेवा-कार्य के लिए नियम

पाँच-छः वर्षों के बाद एक दिन शिव बाबा ने ब्रह्मा बाबा के माध्यम द्वारा कुछेक ज्ञान-निष्ठ कन्याओं को कहा कि अब आपकी अवस्था परिपक्व हो गई है। अब आप लोगों को अपने लौकिक माता-पिता और परिवार के यहाँ, घर जाना है और जिन्होंने आप से अपकार किया था, उनका भी उपकार करना है। उन्होंने उस समय आपको न पहचान कर आप पर अत्याचार किए थे, परन्तु अब आप उनके यहाँ जाकर उनका भी कल्याण करो। कहावत भी है कि पहले तो घर वालों का भला करना चाहिए। (Charity begins at home) जिन यज्ञ-वत्सों अथवा ब्रह्माकुमारियों को अपनी लौकिक माता के घर में, ज्ञान देने के लिए भेजा गया था, उनमें से एक ब्रह्माकुमारी मनोहर इन्द्रा जी भी थीं। इस विषय में उनका निम्नलिखित उल्लेख पढ़ने के योग्य है :—

सेवा-कार्य करने के लिए बाबा द्वारा बताये हुए नियम

''जब हमें बाबा ने अपने लौकिक घर में जाकर ज्ञान-सेवा करने की आज्ञा दी तो साथ ही साथ उन्होंने हमें छः विशेष बातों के लिए सतर्क रहने की शिक्षा दी। बाबा ने कहा —''बच्ची, जब आप लौकिक सम्बन्धियों के पास जाकर खड़ी हों तब एक तो आपकी स्थिति ऐसी आत्म-निष्ठ हो कि उन्हें आपसे दैहिक सम्बन्ध की रंचक भी भासना न आए। आपको देखते ही उनको यह संकल्प न आए कि यह हमारी बेटी है, बहन है आदि, और उनके मन में मोह जागृत न हो, बल्कि आपको देखकर उन्हें आप एक शक्ति के रूप में ही दिखाई दे। दूसरे, उन पर आपका इतना आत्मिक प्रभाव होना चाहिए कि वह आपको मोह के वशीभूत होकर गले न लगायें।

तीसरे, आप उनके यहाँ फल, दूध आदि शुद्ध ही भोजन ले सकती हैं, और कोई चीज नहीं ले सकतीं। चौथे, आप उनका एक भी पैसा अपने लिए खर्च नहीं कर सकतीं क्योंकि अभी आप ईश्वरीय कुल की है और, ऐसा समझिये, कि आप योग की भट्ठी में हैं। बच्ची, दूसरे के धन और अन्न का भी मन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इसलिए आप उनके धन से या उनके हाथों से बना भोजन नहीं ले सकतीं क्योंकि वे मनोविकारों पर विजय प्राप्त करने का पुरुषार्थ नहीं करते हैं। पाँचवें, ईश्वरीय ज्ञान देकर अब उनका दृष्टिकोण बदलना है और आपने इस ज्ञान द्वारा अपना जीवन जैसा उच्च बनाया है, उसका उन्हें परिचय देकर उन्हें भी जीवन दिव्य बनाने की सबल प्रेरणा देनी है। छहवीं बात यह है कि आप उन्हें ईश्वरीय ज्ञान देने में इतनी लग्न, इतनी निष्ठा, इतनी मेहनत से कार्य करना कि वे भी उससे प्रभावित और लाभान्वित होकर उत्सुकता एवं जिज्ञासा को लेकर अलौकिक अनुभव करने के लिए आपके साथ ही इस सत्संग में आ जाएँ।''

कई वर्ष 'यज्ञ' में रहने के बाद लौकिक घर की ओर यात्रा

इस प्रकार से ईश्वरीय आदेश और सन्देश लेकर पाँच-छः वर्ष निरन्तर यज्ञ में तपस्या में रहने के बाद हम कराची से हैदराबाद गयीं । यात्रा करते समय हमने खूब अन्तर्मुखता धारण की और हम ईश्वरीय ज्ञान के अलौकिक मनन-चिन्तन और रसास्वादन का ही आनन्द लेती रहीं । आखिर मैं अपने लौकिक घर जा पहुँची। दूसरी बहनें भी अपने-अपने लौकिक घर की ओर चली गयीं।

पिछले पाँच-छः वर्ष से लौकिक सम्बन्धियों से हम नहीं मिली थीं। हाँ, यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता के निर्देश के अनुसार हम उन्हें कभी-कभी पत्र लिख दिया करती थीं जिसमें ईश्वरीय ज्ञान ही का वर्णन होता था। इन पत्रों का आशय भी यही होता था कि ईश्वरीय ज्ञान द्वारा उनका भी कल्याण हो जाय। अब जब हम घर की ओर रवाना हुई थीं तो हमने घर वालों को पत्र या तार द्वारा अपने आने के बारे में कोई अग्रिम सूचना नहीं दी थी। हमारे

सम्बन्धी शायद सोच भी नहीं सकते थे कि हम कभी लौट कर अपने-आप उनके घर आयेंगी। अत: अचानक ही मुझे आता देखकर उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। घर तक पहुँचने से पहले ही, मुहल्ले में, मेरी लौकिक भतीजी ने मुझे आते देखकर, भाग कर घर में जाकर कहा कि –''वह एक जो पहले हमारे घर में थी और 'ओम् मण्डली' में जाया करती थी और बाद में यहाँ से चली गई थी, वह आ रही है।'' उसे मेरा नाम याद न था क्योंकि जब मैंने हैदराबाद छोड़ा था तब वह बहुत छोटी थीं। उस कन्या ने जब मेरे आगमन की सूचना दी तो घर वाले बहुत हैरान हो गए थे। उन्हें उसके कथन पर विश्वास भी न हुआ था। उसकी बात को सुनकर घर में हलचल मच गई थी और सभी मुझे देखने के लिए उत्सुक हो गए थे। मेरी लौकिक माँ को भण्डारे (पाकशाला) में जाकर जब किसी ने सूचना दी तो वे सब कार्य छोड़कर ऐसे भाग उठी थीं कि जैसे अनायास ही कोई लाटरी मिल गई हो।

मेरी लौकिक माता के इस कमरे तक पहुँचने के लिए एक जीने पर चढ़कर जाना पड़ता था। मैं सभी सीढ़ियाँ चढ़कर अभी मकान के दरवाजे पर पहुँची ही थी कि मेरी लौकिक माता भागती हुई भण्डारे से आकर उस दरवाजे तक पहुँची थीं। बस, उस दरवाजे के बाहर मैं खड़ी थीं और अन्दर वह खड़ी थीं। माँ के हृदय में सुषुप्त ममता शायद जाग उठी होगी। आँखे अधिक खुली हुई थीं और वह बहुत ही खुश और चकित हुई-सी लपक कर मुझे अपनी भुजाओं में लेकर अपने गले से लगाना चाहती थीं,'' ऐसा उनका हाव-भाव मालूम होता था। परन्तु....

मैं उस जीने की अन्तिम पौड़ी पर एक टिक खड़ी हो गई और अनायास ही मेरा हाथ वरद मुद्रा में खड़ा हो गया। मेरी लौकिक माता की आँखों से कुछ अश्रु टपके थे। मैं पहले तो आत्मिक दृष्टि से उनकी ओर देखते हुए मौन-मूर्ति की तरह खड़ी हुई निहारती रही। वह भी थम गई थीं। एक मिनट ही शायद गुजरा होगा कि मेरे मुख से स्वत: अव्यक्त शब्दों

में, आकाशवाणी की तरह ज्ञान के कुछ बोल निकल पड़े।

एक अनोखा वार्तालाप और अनोखा मिलन

मैंने कहा – ''देखो, आपके द्वार पर कौन खड़ी है? पहचानती हो कि हम कौन हैं? हम 'शिवमयी शक्तिमयी' शक्तियाँ हैं। हम दूर देश से आई हैं! और आपके लिए ईश्वरीय सन्देश लाई है। हम अब आपकी बच्ची नहीं हैं। हम अब प्रभु-पुत्री है। प्रभु-पिता ने ही अन्य आत्माओं के लिए यह सन्देश दिया है कि कुछ वर्षों के बाद अब कलियुगी मृत्युलोक का विनाश होने वाला है, और बाद में इसी पृथ्वी पर स्वर्ग स्थापित होने वाला है,अर्थात् सतयुग आने वाला है। इस दु:खधाम में रहने वाले मनुष्य अपने विकर्मों और अपवित्र संस्कारों के कारण अनेक प्रकार के दु:ख भोग रहे हैं। अब आप सुखधाम में चलने का पुरुषार्थ करो। वहाँ आपको सम्पूर्ण सुख मिलेगा। बोलो, आप चलोगी वैकुण्ठ में? क्या आप इस दु:खधाम से मुख मोड़ेगीं? ज्ञानामृत पियेगीं? अमर पद प्राप्त करने का पुरुषार्थ करेंगी.......?''

लौकिक माता जी दत्तचित्त होकर यह सब सुनतीं रहीं । अन्य सभी भी वहाँ खड़े थे। उन्होंने मुझे गले नहीं लगाया बल्कि ज्ञानालाप के फलस्वरूप उन्हें मैं एक ज्ञान-गंगा, प्रभु-पुत्री, योगिन अथवा शक्ति के रूप में दिखाई दीं। मेरी बात को सुनकर उनके मुख पर खुशी के चिन्ह्न दिखाई दे रहे थे और मुझे ऐसा लग रहा था जैसे सोई हुई आत्मा ने अँगड़ाई ली हो।

वह बोलीं – ''हाँ, मैं स्वर्ग ज़रूर चलूँगी। तुम हमको छोड़ कर अकेली क्यों चली गई हो?- हमें भी अपने साथ ले जाओ।''

यह कहकर उनके नेत्रों से प्रेम के आँसू टपक पड़े। वह खुशी में फूली नहीं समा रही थीं। वह मुझे धीरे-धीरे अन्दर ले चल रहीं थीं। आगे-आगे वह, पीछे-पीछे मैं। वह मुड़-मुड़ कर मेरी चाल को देखतीं और उन्हें अचम्भा-सा होता था। वे मेरे बैठने के लिए उचित स्थान ढूँढती रही। कभी चारपाई पर चादर बिछाकर कहतीं कि यहाँ बैठो, कभी कुर्सी पर गद्दी

रखकर कहती कि यहाँ बैठो। परन्तु स्वयं उन्हें ही वह स्थान पसन्द न आता। मैंने नीचे फर्श पर ही अपना आसन जमा दिया।

कुछ ही मिनटों में उन्होंने गली- मुहल्ले के लोगों को तथा परिवार के लोगों को इकट्ठा कर लिया था। मैंने घण्टा-भर ज्ञान-वर्षा की । अब ज्ञान सुनकर सभी की भावना बदल गई । सभी मुझसे ईश्वरीय ज्ञान सुनने के इच्छुक हो गए थे। सभी को यह अनुभव हुआ कि मेरा जीवन काफी बदल चुका है।

मैं सात दिन उनके पास रही। बहुत-से लौकिक सम्बन्धी तथा अड़ोसी-पड़ोसी ज्ञान सुनने के लिए आया करते थे। सत्संग की तरह वातावरण बना रहता था। उससे श्रोताओं का मनोपरिवर्तन हुआ। उन्हें ईश्वरीय यज्ञ के प्रति भी जो भ्रान्तियाँ थीं, उनका निवारण हुआ। कई लोग व्यक्तिगत रूप में भी मिलने आते और अच्छा ही अनुभव करके जाते थे। मैंने तो स्वयं को ज्ञान और योग की ही स्थिति में स्थित किया हुआ था। इस प्रकार दूसरी जो शर्त थी कि मैं उन्हें ज्ञान से प्रभावित,लाभान्वित और प्रेरित करूँ,वह भी मैं पूरी कर सकी।

मैं फलाहार ही किया करती थी और यज्ञ के पैसे से ही सारा शरीर-निर्वाह करती थीं।

लौकिक माता का सत्संग के लिए चलना

आखिर जब सात दिन पूरे हुए तो लौकिक माता जी ने स्वत: ही मुझे कहा कि – ''मैं भी यज्ञ में आपके साथ चलकर कराची में आपका आश्रम देखना चाहती हूँ और ज्ञान सुनकर अलौकिक अनुभव प्राप्त करना चाहती हूँ।'' मुझे उनके ये शब्द सुनकर आश्चर्य भी हुआ और खुशी भी हुई। आश्चर्य इसलिए हुआ कि जो किसी समय मेरा कड़ा विरोध किया करती थीं, आज उनकी अवस्था में इतना परिवर्तन आया था कि वह मेरे साथ वही ज्ञान सुनने के लिए चलना चाहती थीं। मुझे खुशी, इसलिए हुई कि मैं अपना कर्त्तव्य पूरा करने में सफल हुई थी और मुझे जो ईश्वरीय आदेश-

निर्देश मिला था, वह मैं पूरा कर सकी थी।

क्या मुझे परमपिता परमात्मा का साक्षात्कार होगा

रास्ते में माता जी ने मेरे सामने एक इच्छा प्रकट की। वह बोली –''मैंने बहुत भक्ति की है, परन्तु मुझे साक्षात्कार नहीं हुआ। आप मुझे भगवान् के दर्शन करा दो। आप जिस संस्था में हो वह तो भगवान् का बहुत ही शीघ्र साक्षात्कार करा देती है, ऐसा मैंने सुना है। परन्तु मुझे तो तभी विश्वास होगा जब मुझे स्वयं दिव्य साक्षात्कार होगा।''

मैंने कहा – ''किसी आत्मा को परमपिता परमात्मा का साक्षात्कार कराने की सामर्थ्य नहीं है। यह शक्ति स्वयं एक परमात्मा के पास है। वही दिव्य दृष्टि का दाता और दिव्य चक्षु विधाता है। वह हरेक की कर्म - कहानी को जानता भी है। आपके भाग्य में ऐसा कुछ होना होगा तो हो जायेगा। आपने पूर्व जन्मों में यदि उच्च भक्ति की होगी, कोई ऐसे कर्म किए होंगें अथवा अब यदि आपका स्वभाव इसके अनुकूल होगा तो आपको साक्षात्कार हो जायेगा!''

मैं परीक्षाओं को पार कर, लौकिक माताजी के साथ वापस अपने यज्ञ में पहुँच गई। हमारी लौकिक माता को वहाँ ज्ञान का और अधिक स्पष्टी-करण दिया गया। अभी उन्हें दो दिन ही आए हुए थे कि एक अनुभव के कारण उन्हें अत्यन्त हर्ष हुआ। बात यह थी कि यज्ञ में एक माता थीं जिन्हें हम ध्यानेश्वरी अथवा ध्यानी कहते थे (आजकल वह अम्बाला - स्थित ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की इन्चार्ज है) वह एक बहुत ही योगयुक्त माता थीं। उन्होंने हमारी लौकिक माता को सामने बिठा कर ईश्वरीय ज्ञान सुनाया। वह पहला ही पाठ पढ़ा रही थीं और इस प्रकार कह रही थीं कि – ''तुम एक अनादि-अविनाशी आत्मा हो। तुम शरीर नहीं हो। भूल जाओ अपनी इस देह को। देह में आने के कारण ही तुम्हें मनोविकारों ने घेर लिया है। अब तुम विकारों को छोड़कर निर्विकार बनोगी तो सतयुगी सुखधाम में चल सकोगी ...।'' इस प्रकार समझाते-समझाते

उन्होंने लौकिक माता से पूछा कि आपके शरीर का नाम क्या है?

वह बोलीं – ''मेरे शरीर का नाम लक्ष्मी है।''

ध्यानी जीं बोलीं – ''है! तुम्हारा नाम लक्ष्मी है? पहले तुम साक्षात् लक्ष्मी थीं परन्तु अब तुम अपने स्वरूप को भूल गई हो। क्या अपने नाम को सुनकर भी तुम्हें अपनी वह स्थिति याद नहीं आती? तुम लक्ष्मी से कुलक्ष्मी क्यों बनी हो? अब सच्ची-सच्ची लक्ष्मी बनो। देखो, तुम पहले निर्विकारी थीं। अब तुम आत्मा विकारी बन गई हो। अब फिर लक्ष्मी बनो। जागो, जागो, अपने स्वरूप को पहचानो और फिर से लक्ष्मी बनो ....।''

विदेह अवस्था का अनुभव और लक्ष्मी-नारायण का साक्षात्कार

इन शब्दों को सुनते-सुनते लौकिक माताजी ने विदेह अवस्था का अनुभव किया और उस अशरीरी अवस्था में स्थित होते-होते झट से उनको दिव्य साक्षात्कार हो गया। यह उनके पूर्वजन्मों की भक्ति का फल समझ लीजिए। उन्होंने देखा कि क्षीर सागर के बीच सोने का एक राजमहल है। उसमें एक दरबार है। दरबार में सर्वांग सुन्दरी श्री लक्ष्मी और सर्वांग सुन्दर श्री नारायण विराजमान हैं।''

लौकिक माता जी ने हमें यह अनुभव सुनाया और कहा कि – ''मेरा मन करता था कि मैं उस दरबार के अन्दर चली जाऊँ। परन्तु मुझे ऐसा करने का साहस नहीं होता था क्योंकि यह संकल्प उठता था कि मैं अपावन और विकारी हूँ।''

इस साक्षात्कार के कारण उन्हें इस ईश्वरीय विश्वविद्यालय में विश्वास हो गया। अब उन्हें वहाँ ठहरे एक सप्ताह हो चुका था। उन्होंने आजीवन वहीं रहने की इच्छा प्रगट की। वे बोलीं – ''अब मैं यहीं रहूँगी। यहाँ का वातावरण बहुत ही सात्विक है, आत्मा को बहुत शान्ति मिलती है।'' परन्तु उन्हें वहाँ अधिक ठहरने की स्वीकृति नहीं मिली क्योंकि पिता-श्री ने हमें समझाया कि – ''आप लोगों पर तो अत्याचार करके आपको घर से निकाल दिया गया था, वरना घर छोड़ने की क्या ज़रूरत थीं। आप तो

छोटी होने के कारण इन्हीं लोगों पर आश्रित थीं और ये लोग आपको सहयोग नहीं देती थीं। तभी तो आपको यहाँ आना पड़ा। परन्तु यह तो घर में बड़ी हैं। इनकी बात तो घर में चल सकती है। अत: इन्हें चाहिए कि यह वहाँ जाकर दूसरों को भी ज्ञान दें तथा घर को आश्रम बनायें।'' यह सुनकर माता जी घर में अच्छा वातावरण बनाये रखने का लक्ष्य लेकर चली गयीं।

एक और अनुभव

इस विषय में ब्रह्माकुमारी हृदय पुष्पा जी ने भी अपना जो अनुभव व्यक्त किया है, उसका सार हम यहाँ प्रस्तुत करते हैं :–

''हमारे लौकिक माता-पिता अपने कर्म-बन्धन को पूरा करने के लिए कुछ समय के लिए हैदराबाद (सिन्ध) में रहे हुए थे। उनकी ज्ञान-सेवा के लिए हमें भेजा गया था।

जब हम हैदराबाद में पहुँची तो हम ऐसा अनुभव कर रही थीं जैसे कि हम शक्तियाँ परमपिता परमात्मा का सन्देश देने के लिए ऊपर से इस पराये देश में उतरी हों, अथवा आकाशवाणी करने के लिए आई हों...''

मैंने अपने लौकिक सम्बन्धियों को ललकार कर कहा –''अब हम वैकुण्ठ में जा रही हैं। हमारे लिए परमपिता परमात्मा ने विमान भेजा है। जब हम उस विमान में उड़ जायेंगे तो आप लोग हमको देखते ही रह जायेंगे! आप बहुत पछतायेंगे! फिर कुछ भी प्राप्त न कर सकेंगे!! इसलिए हम शक्तियाँ आकाशवाणी कर रही हैं कि कुछ वर्षों के बाद इस कलियुगी सृष्टि का महाविनाश होने वाला है। सभी की मौत सामने है। इसलिए, अब आप भी वैकुण्ठ चलने की तैयारी करो। हम आपको परमपिता परमात्मा का सन्देश दे रही हैं...।''

हमारी इन बातों को सुनकर लौकिक माता-पिता तथा अन्य लोग बहुत प्रभावित होते थे। उनमें से कई तो ध्यानावस्था में साक्षात्कार भी करते थे। वे हमें देवियाँ अथवा शक्तिरूपा मानकर बातों पर ध्यान देते थे ....।''

दिव्य दृष्टि के निराले अनुभव, योग की भट्ठी और दिनचर्या, ईश्वरीय कचहरी

इस प्रकार अपने-अपने लौकिक सम्बन्धियों को भी ईश्वरीय सन्देश देकर अब लगभग तीन सौ यज्ञ-वत्स कई वर्ष तक उन पाँच मकानों में व्यवस्थापूर्वक रहकर, नियमपूर्वक ईश्वरीय विद्या लेते रहे। अलग-अलग घरों, अलग-अलग संस्कारों और विचारों तथा अलग-अलग आयु वाले और आर्थिक दशा वाले इतने सारे व्यक्तियों का परस्पर स्नेह से रहना — यह कोई कम बात नहीं है। इस घोर कलियुग में घर में चार-छः बच्चे भी चिरकाल तक शान्तिपूर्वक और स्नेह से इकट्ठे नहीं रह सकते। परन्तु परमपिता शिव, जिन्होंने ही प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा यह ज्ञान-यज्ञ रचा था, की ही कमाल थी कि इतने वर्षों तक सैकड़ों व्यक्ति यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता से अलौकिक शिक्षाओं को धारण करते हुए परस्पर स्नेहपूर्वक इकट्ठे रह रहे थे, इकट्ठे पुरुषार्थ कर रहे थे और सभी अपने-अपने संस्कारों को शुद्ध करने का यत्न कर रहे थे। अनेकानेक बार भिन्न-भिन्न प्रकार के विघ्न आये। जैसे यात्रा पर जाते स्टीमर के आगे समुद्री तूफान, आंधियाँ, धुन्ध, हेल मछलियाँ, समुद्री चट्टानें आदि-आदि आती हैं, वैसे ही कई विघ्न इस ज्ञान- स्टीमर के सामने आये। व्यक्तिगत रीति से भी हरेक के सामने नित्य कई प्रकार की परीक्षाएँ आईं। परन्तु परमपिता परमात्मा सब प्रकार से मार्ग-प्रदर्शना, सहायता तथा बल देकर उन तूफ़ानों और परीक्षाओं से पार कराते रहे। बाबा (प्रजापिता ब्रह्मा) और मम्मा (जगदम्बा सरस्वती) के आदर्श जीवन से सभी को अजेय उत्साह, प्रबल प्रेरणा और मार्ग-दर्शन प्राप्त होता रहा।

सन्देश-पुत्रियों द्वारा दिव्य दृष्टि के पार्ट

जिन यज्ञ-वत्सों को दिव्य दृष्टि प्राप्त थी, अर्थात् जो वत्स ध्यानावस्था में दिव्य साक्षात्कार करते रहे, उनके द्वारा भी शिवबाबा बहुत अनमोल सन्देश सभी यज्ञ-निवासियों के लिए देते रहते थे। अत: ये कन्याएँ-माताएँ सन्देश पुत्रियों के नाम से जानी जाने लगीं। शिव बाबा ने उन्हें आने वाली सतयुगी पावन, दैवी सृष्टि की अलौकिक रीति-रस्म, उनके रहन-सहन, राज्य-भाग्य, रास-हास्य और विनोद आदि-आदि के दृश्य दिखाये और उन्हें निर्देश दिया कि वे सभी यज्ञ-वत्सों को वैसी ही वेश-भूषा पहन कर सब प्रैक्टीकल रीति में करके दिखायें। इस प्रकार यज्ञ-वत्सों के ज्ञान का भी विकास होता, उनका मनोरंजन भी होता रहता, उनके निश्चय की नींव भी अधिकाधिक पक्की होती रहती तथा यह देखकर उनकी खुशी भी बढ़ती जाती कि अब हम ऐसी पावन और सुखमय सृष्टि में राज्य-भाग्य प्राप्त करेंगे।

इन 'सन्देश-पुत्रियों' को त्रिकालदर्शी एवं दिव्य दृष्टि के दाता परम-पिता परमात्मा शिव कुछेक ऐसे यज्ञ- वत्सों के कर्मों का भी ध्यानावस्था में साक्षात्कार कराते थे जो वत्स अपने संस्कारों में परिवर्तन न होने के कारण कोई अकर्त्तव्य करते थे परन्तु यज्ञ-माता को बताते नहीं थे बल्कि छिपाते थे। वे समझते थे कि हमें कोई देख नहीं रहा है अथवा हमारे मन के संकल्पों-विकल्पों को कोई जानता नहीं है। जब वे सन्देश- पुत्रियाँ उनके भेदों को बताती थीं तो वे दंग रह जाते थे और भविष्य के लिए इस विचार से सावधान हो जाते थे कि शिव बाबा (परमपिता परमात्मा) हमारे सभी कर्मों को जानता है। सन्देश-पुत्रियाँ ध्यानावस्था में धर्मराजपुरी में विकर्मों के परिणामस्वरूप मिलने वाले कड़े दण्डों का भी साक्षात्कार करती थीं। अत: उन दृश्यों का भी वे यहाँ वर्णन करती थीं अथवा वे अभिनय करके दिखाती थीं कि धर्मराजपुरी में विकर्मों का दण्ड कैसे मिलता है। इसके परिणामस्वरूप यज्ञ-वत्स बुरे कर्मों से बचकर रहते थे ताकि वे ऐसे

भयानक दण्ड के भागी न बनें। इस प्रकार, अन्यान्य दिव्य साक्षात्कार भी होते रहते थे और उनसे बहुत ही शिक्षाएँ मिलती थीं। सन्देश पुत्रियों को परमपिता परमात्मा शिव ने पिता-श्री के अनेक जन्मों का साक्षात्कार भी कराया था और सूक्ष्म लोक के 'सम्पूर्ण ब्रह्मा' अथवा अव्यक्त ब्रह्मा का साक्षात्कार कराते हुए यह भी समझाया था कि यह 'बाबा' और 'ममा' ही 'प्रजापिता ब्रह्मा' और 'जगदम्बा सरस्वती' हैं जोकि सर्वस्व त्याग, अथक लोक-सेवा, दिव्य गुणों की पराकाष्ठा, निर्विकार जीवन तथा राजयोग के विशेष अभ्यास के फलस्वरूप इस अव्यक्त अवस्था को धारण करेंगे।

इस विषय में सन्देश पुत्री ब्रह्माकुमारी हृदयमोहिनी का निम्नलिखित अलौकिक अनुभव पढ़ने योग्य है :–

दिव्य दृष्टि के अनुभव

''एक दिन की बात है कि पिता-श्री (बाबा) ने हम सभी बच्चों के कल्याण के लिए अन्दर और बाहर से मौन धारण करने (अर्थात् अन्दर मन के व्यर्थ संकल्पों और बाहर, मुख की वाणी से परे जाने का अभ्यास करने) के लिए एक सप्ताह का प्रोग्राम दिया। यों तो हम लगभग ३०० यज्ञ-वत्स इकट्ठे रहते थे और यज्ञ का हरेक कार्य भी पहले की तरह चलता रहता था परन्तु मौन और अन्तर्मुखता के कारण वातावरण और दृश्य इतना अव्यक्त और आकर्षक था कि सभी के सभी वत्स चलते-फिरते सूक्ष्म फ़रिश्ते-से दिखाई देते। अभी अन्तर्मुखता की इस दिनचर्या को दो-तीन दिन ही हुए थे कि एक दिन संध्या समय जबकि मैं एक बहन के साथ बैठी थी और एकान्त में आत्म-स्थिति में स्थित होने का अभ्यास कर रही थी, अचानक ही प्यारे प्रभु पिता द्वारा मुझे दिव्य-दृष्टि का वरदान मिला। मैं इस दुनिया और देह की सुध-बुध से दूर हो गयी। मैंने दिव्य दृष्टि द्वारा देखा कि यही पिता-श्री ब्रह्मा अव्यक्त, सूक्ष्म, प्रकाशमय शरीरधारी के रूप में हैं। उनके नैन और आकृति बिल्कुल वैसी ही थी जैसे कि मैं इन चर्म-चक्षुओं से पिता-श्री के व्यक्त शरीर को देखती थी। बहुत ही मधुर मुस्कान

से वह अव्यक्त और आकर्षकमूर्ति मेरी ओर देख रहे थे। बस, इतना ही देखने के बाद मैं ध्यानावस्था से नीचे उतर आई। अब मुझे इस संसार का अनुभव हो रहा था। ब्रह्मा बाबा के इस नये, प्रकाशमय, अव्यक्त रूप को देखकर मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा था और हर्ष भी। मुझे आश्चर्य इसलिए हो रहा था कि अब तक बहनों अथवा भाइयों को जो साक्षात्कार होते आये थे, वह अनेक देवी-देवताओं, जैसे कि श्रीराधे-श्रीकृष्ण, श्रीलक्ष्मी-श्रीनारायण, श्रीसीता – श्रीराम आदि के होते। आज यह अनोखा साक्षात्कार होने के कारण मैं इस बात को समझ ही नहीं सकी कि जब प्रत्यक्ष एवं साकार रूप में पिता-श्री अथवा ब्रह्मा बाबा यज्ञ में विराजमान हैं तो फिर सूक्ष्म रूप में ब्रह्मा बाबा का यह रूप दिखाई देने का क्या रहस्य है? मेरी जितनी आयु थी और जितनी बुद्धि थी, उसके अनुसार मैंने स्वयं इस प्रश्न को हल करने की कोशिश की परन्तु मैं हल न कर सकी। अत: मैंने मातेश्वरी जी के सामने यह प्रश्न रखा।

मातेश्वरी (यज्ञ-माता) ने मेरे अनुभव को स्पष्ट रीति समझने तथा मेरे प्रश्न को हल करने के लिए मुझसे कुछ और प्रश्न किये। परन्तु अन्त में उन्होंने कहा कि पिता-श्री (ब्रह्मा बाबा) को अपना यह अनुभव बताना। जब मैंने पिता-श्री को यह अनुभव सुनाया तो वे भी इसे स्पष्ट करने के लिए मनन करने लगे। उनके हाव -भाव से ऐसा लगता था कि वे सोच रहे हैं कि – 'यह क्या कहती है?' आखिर उन्होंने यही कहा –''बच्ची, शिव बाबा (परमपिता शिव) को कोई रहस्य स्पष्ट करना होगा, इसी कारण उन्होंने यह साक्षात्कार कराया होगा। इसका रहस्य या तो शिव बाबा स्वयं ही आप बच्चों को ध्यानावस्था में बतायेंगे या वह मेरे तन में प्रवेश करके स्पष्ट करेंगे। अगर आप फिर ध्यानावस्था में जाओ और फिर उन्हें देखो तो आप ही उनसे परिचय पूछ लेना।''

अस्तु। वह दिन बीत गया। दूसरे दिन फिर सन्ध्या समय जब मैं आत्म -स्थिति का अभ्यास कर रही थी तो मुझे ऐसे लगा कि कोई मुझ आत्मा

को अव्यक्त रीति से आकर्षित कर रहा है। मैं फिर ध्यानावस्था में चली गयी और मुझे फिर साक्षात्कार हुआ। ठीक उसी समय लगातार सात दिन मुझे दिव्य साक्षात्कार होते रहे। पिता-श्री ने मुझे कह रखा था कि उनका परिचय पूछना, अत: मैंने पूछने का साहस किया। मुझे याद है कि मैंने उनसे पूछा था —''क्या आपका पूरा परिचय प्राप्त करने का सौभाग्य मुझे मिल सकता है?''

वह अव्यक्त रीति से बोले थे —''बच्ची, मैं उस ही साकार ब्रह्मा की सम्पूर्ण-मूर्ति, 'अव्यक्त ब्रह्मा' हूँ।''

इस प्रकार परिचय मिलने के बाद फिर तो प्राय: उनसे अव्यक्त मिलन होता रहा और वह अव्यक्त-मूर्ति ईश्वरीय ज्ञान के कई गहन रहस्य स्पष्ट करते रहे। उन्होंने मुझे सूक्ष्म लोक का, अर्थात् इस मनुष्य लोक के सूर्य और तारागण के भी पार जो लोक है, उसका भी साक्षात्कार कराया। मैंने दिव्य दृष्टि द्वारा ब्रह्मापुरी, विष्णुपुरी, और शंकरपुरी को देखा, ब्रह्म तत्व का भी साक्षात्कार किया और उसमें ज्योति-स्वरूप परमपिता परमात्मा शिव को भी देखा। उन्होंने मुझे कलियुगी सृष्टि के होने वाले महाविनाश का भी साक्षात्कार कराया और उसके बाद जो सतयुगी दैवी सृष्टि होगी, उसमें देवी-देवताओं की वेश-भूषा, साज-सज्जा, वहाँ की बोली, भाषा, दिनचर्या, वहाँ के राजदरबार और महल — इनका भी साक्षात्कार कराया। केवल मुझे ही नहीं बल्कि अन्य अनेक बहनों को भी ऐसे साक्षात्कार हुए।''

उन दिनों सन्देश-पुत्रियों द्वारा शिव परमात्मा ने एक नामावली भी दी थी जिसमें हरेक यज्ञ-वत्स को अब मरजीवा जन्म के बाद नया नाम दिया गया।

योग-तपस्या की भट्ठी का कार्यक्रम

कई बार ऐसा भी हुआ कि शिव बाबा ने सन्देश-पुत्रियों को विशेष प्रोग्राम दिए। उस प्रोग्राम के अनुसार वे सप्ताह-भर या अधिक समय तक मौन धारण करती थीं। इसे 'मूवी' अथवा 'अव्यक्त अवस्था' भी कहा जाता

था। इन दिनों वे केवल थोड़ा-सा फलाहार ही करती थीं, बस । उन्हें सारा दिन योग का ही अभ्यास करने का आदेश होता था। वे प्रात: बहुत जल्दी उठकर, योग का अभ्यास प्रारम्भ करती थीं और तब से लेकर दिनभर योग-तपस्या में ही रहती थीं। प्रात:अमृतवेले जब परमपिता परमात्मा शिव परमधाम से आकर प्रजापिता ब्रह्मा के मुख द्वारा ईश्वरीय ज्ञान देते थे, जिसे यहाँ 'ज्ञान-मुरली' भी कहा जाता था, तब वे भी ज्ञान सुनती थीं और, बस, दिन-भर में नित्य कर्म आदि के अतिरिक्त अन्य किसी कर्म की ओर बुद्धि न लगाकर वे योग-तपस्या में ही अचल रूप से रहती थीं। इसे 'भट्ठी' भी कहा जाता था क्योंकि जैसे भट्ठी में प्रज्वलित अग्नि में मिट्टी के कच्चे बर्तनों को या ईंटों को पक्का किया जाता है अथवा जैसे सुनार भट्ठी में सोने को तपाकर, उससे खाद निकाल कर, उसे शुद्ध करता है, अथवा जैसे लुहार भट्ठी में लोहे को खूब तपाकर फिर उसे कूटकर उसे कोई उपयोगी चीज बनाता है,वैसे ही वे भी योगाग्नि में निजात्मा को तपाकर उससे अशुद्ध संस्कारों की खाद निकाल कर, उसकी शुद्धि का पुरुषार्थ करती थीं। अथवा, वे भी परिपक्व आत्मिक स्थिति प्राप्त करने के लिए ये अभ्यास करती थीं। अथवा, वे स्वयं को प्रभु की लग्न रूपी अग्नि में तपाकर अपने तथा संसार के लिए उपयोगी अर्थात् कल्याणकारी बनने के लिए ये साधना करती थीं। इस अभ्यास से उन्हें देह-भान से न्यारापन अनुभव होता था। वे स्वयं को वायु के समान हल्की अथवा फ़रिश्तों के समान दिव्य, अलौकिक, हर्ष-युक्त, पवित्र, प्रकाश-युक्त एवं अव्यक्त महसूस करती थीं। इसे ही 'अव्यक्त स्थिति' अथवा 'विदेह-स्थिति' का अनुभव कहा जाता था।

योग की ड्रिल

परमपिता शिव द्वारा मिले प्रोग्राम के अनुसार इस प्रकार का अभ्यास करने के पश्चात् वे ब्रह्मा बाबा के निर्देश के अनुसार अन्य यज्ञ-वत्सों को भी योगाभ्यास कराती थीं। अपने प्रभाव-क्षेत्र में, अर्थात् अपने सामने बिठाकर, लक्ष्य समझाकर तथा योग-विधि स्पष्ट करके, उन्हें अपनी आत्मिक दृष्टि की

सहायता देकर, योगस्थ करती थीं। फिर वो वत्स, स्व-स्व स्थानों पर जाकर भी इसका अभ्यास करते रहते। यज्ञ-पिता इस सारे प्रोग्राम का निरीक्षण करते थे, इसके लिए आदेश-निर्देश देते थे, उचित व्यवस्था भी कराते थे तथा कई बार वे स्वयं भी पधारकर योग का अभ्यास कराते थे और अपनी सर्वोत्तम अवस्था से उनको योगस्थ करने के लिए सहायता करते थे। इस प्रकार के कार्यक्रमों से भी यज्ञ-वत्सों की अवस्था में काफ़ी उन्नति हुई। उन्हें योग की टेव पड़ी और आनन्द मिला।

यज्ञ-वत्सों की दिनचर्या

इस प्रकार सभी यज्ञ-वत्स खूब लग्न से ईश्वरीय याद में मग्न होने का तथा ईश्वरीय विद्या के अध्ययन का कार्य करते रहते। उन दिनों दिनचर्या इस प्रकार होती थी कि प्रात: एक रेकार्ड बजता था – ''जाग सजनिया जाग, नवयुग आया....।'' सभी इस रेकार्ड को सुनकर उठ बैठते थे। इसके आध्यात्मिक अर्थ का ही सबसे पहले उनके मन में स्मरण हो जाता था। वह दिनचर्या का प्रारम्भ इसी संकल्प से करते थे कि –अब सतयुग अथवा नवयुग आ रहा है और अब हमें अज्ञान-निद्रा को छोड़कर आत्मिक जागृति की अवस्था प्राप्त करनी है और अब, इस समय, यह निद्रा भी तो छोड़नी है। अपने बिस्तर पर ही बैठे-बैठे कुछ मिनट तक वे सभी आत्म-चिन्तन और परमपिता की याद का अभ्यास करते थे। बाद में कई बार ड्रिल भी होती।

उसके बाद वे नित्य कर्म और स्नान आदि से निवृत्त होकर प्रात: ५.३० बजे के लगभग क्लास में योगाभ्यास में बैठते तथा ज्ञान-मुरली सुनते थे। यह कार्यक्रम लगभग डेढ़ या दो घण्टे का होता था। फिर वे सभी नाश्ता आदि करके यज्ञ-सेवा में जुट जाते थे। हरेक बहन और भाई के ज़िम्मे कोई-न-कोई यज्ञ-सेवा का कार्य था। कुछेक तो मिलकर सभी के वस्त्रों की धुलाई करते थे। कुछेक मिलकर भोजन बनाते थे। यज्ञ की मोटरों, साइकिलों आदि की सफाई, मरम्मत आदि भी यज्ञ-वत्स स्वयं ही करते थे।

अन्न को साफ़ करना, सब्जी काटना, सिलाई करना, लिखना-पढ़ना आदि-आदि बहुत ही कार्य होते थे। प्रतिदिन काफ़ी संख्या में ईश्वरीय ज्ञान-साहित्य के बुक-पोस्ट भी सैकड़ों व्यक्तियों को भेजे जाते थे। अत: कुछ यज्ञ-वत्स साहित्य रचने के कार्य में और साइक्लोस्टाईल या छपाई के काम में भी व्यस्त रहते। यज्ञ के प्राय: सभी कार्य यज्ञ-निवासी ही बहुत खुशी और स्फूर्ति से किया करते थे। इतने में भोजन का समय हो जाता था।

फिर सभी वत्स पंक्तियों में बैठकर, सामूहिक रीति योग-युक्त अवस्था में भोजन करते थे। उसके पश्चात् थोड़ा समय विश्राम के लिए या व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मिलता था। विश्राम करके फिर सभी अपने-अपने कार्य में लग जाते थे। जब रात्रि होने लगती थी, फिर सभी हॉल में योगाभ्यास करते थे और सन्देश पुत्रियाँ भोग भी लगाती थीं। फिर सभी भोजन करते और फिर ज्ञान का क्लास तथा योगभ्यास होता था। यज्ञ-माता अथवा यज्ञ-पिता कुछ ज्ञान अथवा शिक्षायें भी देते थे और अन्त में योग-निष्ठा होती थी। फिर सभी उसी ईश्वरीय याद और आत्मिक स्मृति में ही क्लास से चुपचाप उठ जाते और अपने-अपने बिस्तर पर बैठकर अपनी दिनचर्या पर ध्यान देकर, आने वाले दिन के लिए स्वयं को सावधान करके, ईश्वरीय याद में सतोगुणी नींद में विश्रामी होते थे।

ईश्वरीय कचहरी

कई बार रात्रि को 'कचहरी' भी होती थी। अर्थात्, दिन भर में यदि किसी ने कोई ज्ञान-विरुद्ध कर्म किया हो, कोई भूल की हो तो सभी के सम्मुख वह यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता को बताया करते थे और आगे न करने का दृढ़ संकल्प लेते थे। किसी अन्य ने किसी को भूल करते देखा हो तो वह भी उस सभा में आकर कल्याण-भावना से उसकी वह भूल बताता था। यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता इन भूलों को मिटाने के लिए युक्तियाँ भी बताया करते थे और आगे के लिए सावधान रहने को भी कहते थे। किसी को व्यक्तिगत किसी स्थूल चीज़ की आवश्यकता हो या कोई

सुविधा चाहिए हो तो वह भी इस सभा में सभी के सामने ही यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता से माँगता था। वे उन्हें स्नेहपूर्वक सुविधा देते थे। सभी के सामने सुविधा माँगने या अपनी भूल मानने से सभी के मन से संकोच और देह-अभिमान मिट जाता था और घर-जैसा वातावरण बन जाता था। तब वह गीत मुखरित हो उठता :–

संगमयुग का समय सुहाना, परमधाम से तेरा आना,
ब्रह्मा-तन से काम कराना, योग सिखाकर पाप मिटाना।
जीवन नैया पार लगाई, बिगड़ी हुई तकदीर बनाई,
सतयुगी सृष्टि तूने रचाई, देवी-देवों से है सजाई।
भारत देश में आये शिव हैं,
जीवन बदल, बदलते विश्व हैं।

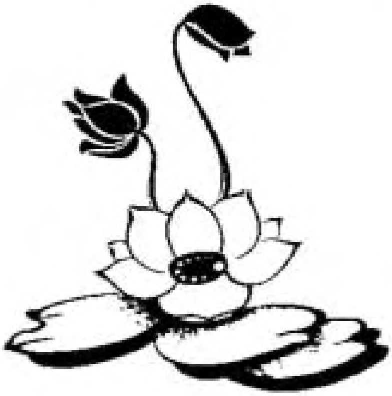

यज्ञ-वत्सों के लिए बाबा का श्रेष्ठ प्रेरणाप्रद, आदर्शमय जीवन

बाबा सभी प्रकार की सुविधाएँ और सुख देते हुए सभी को पुरुषार्थ के लिए प्रेरित करते तथा सभी में बल भरते रहते थे। उन्हें सदा हर्षितमुख, स्फूर्तिपूर्वक और अथक देखकर सभी में एक विशेष उत्साह भरा रहता था। इतनी ऊँची मंजिल होने पर तथा अनेक प्रकार के विघ्न सामने आने पर भी थकावट, उदासी, निराशा या कमज़ोरी का अनुभव नहीं होता था। बाबा सखा रूप में, मन का हाल लेकर, साथ में खेल-कूद कर, स्वयं को भी यज्ञ-वत्सों का एक सहपाठी बता कर, सभी के लिए सदा एक प्रेरणा का स्रोत बने रहते। यद्यपि वे शारीरिक दृष्टिकोण से वृद्ध थे परन्तु वे वृद्ध दिखाई नहीं देते थे। उनमें युवकों से भी अधिक कर्मशीलता तथा स्फूर्ति थी। वे स्वयं ही सबसे पहले हरेक यज्ञ-सेवा में हाथ डालते थे। मामूली से मामूली काम में भी वे सभी के साथ मिलकर हाथ बटाते थे। उनके इस सेवा-भाव, नम्र स्वभाव और सहकार्य-भाव को देखकर सभी के लिए एक आदर्श सामने रहता था। यज्ञ-वत्स नहीं चाहते थे कि उनके अति स्नेही बाबा अपने कोमल हाथों से कोई कठोर कार्य करें। परन्तु बाबा सभी को कर्त्तव्य-परायणता और यज्ञ-सेवा में रुचि तथा यज्ञ-स्नेह का प्रैक्टीकल पाठ स्वयं सेवा में तत्पर होकर पढ़ाते थे। वे लौकिक कार्यों में भी अलौकिकता भर देते थे। स्थूल कर्मों में तत्पर होते हुए भी बुद्धि ज्ञान-निष्ठ, ईश्वरीय स्मृति में स्थित तथा आत्मा-निश्चय में कैसे टिकी रहे — इसका वे क्रियात्मक पाठ पढ़ाते थे।

यज्ञ-सेवा अथवा कर्म करते हुए भी योग

बाबा कराची में सभी से कोई-न-कोई स्थूल कार्य भी कराते थे ताकि उन्हें अपने ऊँचे लौकिक कुल का अभिमान न रहे और उन्हें यज्ञ-सेवा की टेर पड़े। इस चित्र में उस ग्रुप की बहनें दिखाई दे रही हैं जोकि यज्ञ की बसों और मोटरगाड़ियों की मरम्मत और सफ़ाई का कार्य किया करती थीं। उन्होंने कार्य के समय का वेश पहन रखा है। बाबा उन्हें कहते थे कि यह शरीर भी एक मोटर है और आत्मा उसका ड्राईवर है। सभी को प्रारम्भ से ही अपने बर्तन मांजने तथा कपड़े धोने का भी नियम सिखाया गया।

बाबा के एक मित्र का विशाल भवन

वाराणसी में स्थित यह विशाल भवन बाबा के एक मित्र का निवास-स्थान था। बाबा व्यापार से समय निकालकर, प्रायः यहाँ आकर ही ईश्वरीय लगन में मगन होने का अभ्यास किया करते थे। बाबा कलकत्ते के व्यस्त जीवन से समय निकाल कर यहाँ ही एकान्त और शान्त वातावरण में आकर ठहरे हुए थे और खूब प्रभु-चिन्तन में लवलीन थे कि एक चाँदनी रात को उन्हें दिव्य साक्षात्कार हुए और ईश्वरीय लगन में ऐसा आनन्द आया कि उन्होंने सर्वस्व प्रभु-अर्पण करने का संकल्प किया।

कार्य करते हुए साकार बाबा कैसे शिक्षा देते थे

यदि कोई भण्डारे (पाकशाला) में भोजन बना रहा होता तो बाबा वहाँ पहुँचकर समाचार लेते, उसे योग-दृष्टि देते और वहीं ज्ञान के मधुर बोल बोलते हुए कहते –''बच्ची, शिव बाबा की याद में स्थित होकर भोजन बनाओगी तो इस भोजन में शक्ति भर जायेगी। मीठे बच्चों, सदैव यह याद रखना कि यह शिव बाबा का भण्डारा है, उसी को भोग लगाने के लिए ही हम भोजन बना रहे हैं। यह अविनाशी यज्ञ शिव बाबा का है, उसी के अर्थ ही, निमित्त बन कर सब कार्य करना।''

कोई मशीन पर कपड़ों की सिलाई का कार्य कर रही होतीं तो बाबा वहाँ भी पहुँच कर मधुर मुस्कान से बहुत खुशी बिखेर देते। सभी प्रसन्नचित्त होकर निहारते रहते। उन्हें भी बाबा ज्ञान के कुछ रत्न दे जाते । बाबा कहते –''लाड़ली बच्चियों! जब आप कर्मेन्द्रियों से कार्य करती है तो बुद्धि से अपनी अविनाशी कमाई भी साथ-साथ करती रहा करो। शिव बाबा को याद करते हुए भविष्य के लिए सतयुग में राजाई पोशाक के अधिकारी बनने का कार्य भी साथ-साथ करते रहना।''

कोई कपड़े धो रहे होते तो बाबा उनके साथ भी शामिल हो जाते । बाबा कहते –''बच्चे, आप तो हद के वस्त्र धो रहे हो। शिव बाबा तो बेहद का धोबी है। वह सभी आत्माओं को पतित से पावन बनाने का कार्य करता है। उसे भी याद रखना। बच्चे, आत्मा को भी साथ-साथ धोते रहना।''

यज्ञ-सेवा का माहात्म्य

इस प्रकार, बाबा सदा यही कहा करते कि –'' बच्चे, जब यज्ञ की किसी स्थूल सेवा में आप लगे हुए होते हैं तो साथ-साथ योग द्वारा अपनी तथा अन्य आत्माओं की सूक्ष्म सेवा का भी पुरुषार्थ किया करो। मीठे बच्चे, यज्ञ-सेवा ही सर्वोत्तम सेवा है, इस ईश्वरीय सेवा का अवसर किसी विरले

भाग्यशाली को ही मिलता है। आप बहुत ही खुशनसीब हो, आप लक्की स्टार (Lucky Stars) हो।''

बाबा अपने साथ सैर करने ले जाते, तो भी कहते –''देखो, इस स्थूल यात्रा के साथ सूक्ष्म यात्रा भी करते रहना अर्थात् परमधाम की याद भी बुद्धि में रखना। नूरे रत्नो, इस अव्यक्त यात्रा का केवल आपको ही पता है। संसार के अन्य लोग इस अव्यक्त यात्रा[1] को नहीं जानते।''

इस प्रकार, सभी अपने विद्यार्थी जीवन में सहर्ष आगे-आगे बढ़ते जा रहे थे। बाबा बहुत ही रमणीकता से इन सारे कर्त्तव्यों को निभाते रहे थे। तब बाबा ने एक नया आदेश दिया जो कि बहुत ही महत्वपूर्ण था।

ज्ञान, त्याग और योग द्वारा जीवन पवित्र बनाने के बाद शिव बाबा ने जनता की आध्यात्मिक सेवार्थ जो आदेश दिया, उसके बारे में आगे पढ़िये।

---

१. बुद्धि द्वारा परमधाम के वासी परमपिता शिव की याद को बाबा 'याद की यात्रा' अथवा 'अव्यक्त यात्रा' कहते हैं।

भारत की सेवा के लिए ईश्वरीय आदेश
–कराची से भारत में आना –

अगस्त, १९४७ की बात है कि देश के बटवारे की घोषणा हो चुकी थी और बहुत-से 'हिन्दुओं' ने पाकिस्तान छोड़ कर भारत में जाना शुरू कर दिया था। बाबा यज्ञ-वत्सों को काफ़ी समय पहले से ही बताते आ रहे थे कि बापू गाँधी जी और कांग्रेस 'स्वराज्य-प्राप्ति' का अथवा 'राम-राज्य' की स्थापना का पुरुषार्थ तो कर ही रहे हैं, परन्तु वास्तव में 'स्वराज्य अथवा राम-राज्य' तभी स्थापित हो सकता है जब सभी नर-नारी 'राम और सीता' के समान पवित्र हों, मर्यादा पुरुषोत्तम बनें और काम, क्रोधादि की गुलामी की जंजीरें तोड़ कर स्व (आत्मा) का राज्य स्थापित करें।

बाबा यह भी कहा करते थे कि काँगेस तथा राजनीतिक दल जो अपने संघर्ष के परिणामस्वरूप राज्य लेंगे, उसमें सुख नहीं मिलेगा क्योंकि श्रेष्ठाचार और पवित्रता की स्थापना तो हुई ही नहीं है। बाबा कहा करते थे कि हिन्दू और मुसलमान धार्मिक असहिष्णुता के कारण एक-दूसरे को बहुत ही मारेंगे क्योंकि आज सभी नर-नारी ईश्वर से विमुख होकर मनोविकारों की प्रबलता के कारण 'असुर' बन गये हैं। अत: अब देश का बटवारा होने पर जो मार-काट शुरू हुई, वह यज्ञ-वत्सों के लिए कोई नई बात नहीं थी, न ही उससे उन्हें कोई डर था। हिन्दुओं और मुसलमानों के झगड़े के बारे में बाबा ने न केवल यज्ञ-वत्सों को ही पहले से बताया था बल्कि उन्होंने इन पूर्व-कथनों को बहुत सुन्दर पुस्तकों के रूप में छपवाकर राजाओं-महाराजाओं को, देश-विदेश के विशिष्ट व्यक्तियों को, समाचार पत्रों आदि-आदि को भी उन पुस्तकों की भेंट भेजी थी और इस प्रकार, पहले

से ही सावधानी दे दी थी। परन्तु जैसे कि जनता का स्वभाव है, उस समय लोगों ने उन बातों पर विश्वास नहीं किया।

देश के बटवारे के बाद

बहुत-से लोग पाकिस्तान छोड़ कर भारत चले गये। परन्तु देश के बटवारे के बाद भी यह ईश्वरीय यज्ञ लगभग ३ वर्ष तक कराची में ही रहा। मुसलमान लोगों ने कभी भी इस ईश्वरीय यज्ञ को हानि पहुँचाने की कोशिश नहीं की। कुछ मुसलमान अफ़सर यदा-कदा पूछताछ करने आते थे परन्तु उनका उद्देश्य तंग करना नहीं था बल्कि औपचारिक रीति से वे जानकारी हासिल करने आते थे। उन्हें भी यहाँ परमात्मा अथवा अल्लाह का परिचय दिया जाता था। उन लोगों का प्राय: एक प्रश्न यह भी हुआ करता था कि यह संस्था क्या कार्य कर रही है? उन्हें इसके उत्तर में कहा जाता था कि –''यहाँ के सभी निवासी ईश्वरीय सेवक अथवा 'खुदाई खिदमत-गार' हैं। सभी एक परमपिता परमात्मा को याद करते तथा निर्विकार जीवन के लिए अध्ययन और पुरुषार्थ करते हैं। आप लोग खुदा को 'पाक', 'परवर्दिगार' तो कहते हैं परन्तु आप पाक नहीं बनते, केवल आपने देश का नाम 'पाकिस्तान' अपना लिया है। अब खुदा का सभी के लिए यह हुक्म है कि पाक बनो ....।''

इन बातों को सुनकर वह लोग बहुत खुश होते थे। वे कहते थे ''हमारे लिए कोई सेवा हो तो बताओ। आप लोग उच्च हो, आपकी सेवा करना हमारा फ़र्ज है क्योंकि आप ईश्वर की इबादत करने वाले और पाक है ....।''

पाकिस्तान से भारत आने की योजना

यज्ञ-वत्सों के लौकिक सम्बन्धियों को पाकिस्तान से हिन्दुस्तान आये दो-तीन वर्ष हो गये थे। उन्हें यह मालूम नहीं था कि ' ओम्-मण्डली' अथवा 'ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय' अब कहाँ है? उन्होंने

भ्रान्ति-वश जहाँ-तहाँ यही कहना शुरू कर दिया था कि शायद ओम्-मण्डली को मुसलमानों ने सिन्ध में ही समाप्त कर दिया है या वे लोग वहाँ से छोड़कर कहीं अलग-अलग हो गये हैं।

बाद में जब इन लोगों को मालूम हुआ कि 'ओम्-मण्डली' अथवा 'ब्रह्माकुमारी संस्था' अभी तक पाकिस्तान में है तो उन लोगों ने पत्र लिखे और आवेदन किया कि – यज्ञ को पाकिस्तान से हिन्दुस्तान में स्थानान्तरित कर दिया जाय। उन्हें यह डर था कि कहीं मुसलमान लोग कभी आक्रमण न कर दें। परन्तु वास्तव में तो मुसलमान लोग इसे बहुत ही पवित्र संस्था मानकर इसकी बहुत रक्षा करते थे। इधर यज्ञ-वत्सों के कुछेक सम्बन्धियों ने संस्था को भारत में आने के लिए आमन्त्रित किया, उधर शिव बाबा ने (परमपिता परमात्मा शिव ने) भी ब्रह्मा बाबा द्वारा तथा ध्यानावस्था वाली सन्देश-पुत्रियों द्वारा यही आदेश-निर्देश दिया कि अब यज्ञ को भारत में स्थानान्तरित किया जाय क्योंकि इस ईश्वरीय विद्या से उधर ही के लोग अधिक लाभ उठायेंगे। शिव बाबा ने कहा – ''अब भारत जाने में ही आप लोगों का कल्याण है और साथ-साथ सर्विस (सेवा-कार्य) तथा परीक्षा भी है।''

कराची से भारत के लिए विदाई

आखिर यज्ञ-वत्स सन् १९५० में कराची छोड़ कर भारत के लिए रवाना हुए। जब सिन्ध के मुसलामन लोगों को पता चला कि यज्ञ-निवासी सभी ब्रह्माकुमारियाँ ब्रहमाकुमार जा रहे हैं तो उन्होंने न जाने के लिए बहुत आग्रह और अनुरोध किए। उन्होंने कहा – ''आप लोगों को हम सब प्रकार की सुविधाएँ देंगे, आप लोगों को कोई कष्ट भी नहीं होगा, फिर भला आप क्यों जाते हैं? आप यहाँ रहेंगें तो इस देश में नापाक (अपवित्र) काम नहीं होंगे। हम आप लोगों की पूरी हिफ़ाजत करेंगे। आप तो खुदा के हैं, आपका तो हिन्दू-मुसलमानों की राजनीति या भेद-भाव से कोई सम्बन्ध नहीं हैं ....'' परन्तु यज्ञ-वत्सों को तो ईश्वरीय आदेश था कि अब भारत

में ही जाना है। इसलिए एक स्टीमर में कराची से भारत की एक बन्दरगाह 'ओखा' तक आने की व्यवस्था की गई। इससे पहले संस्था की सारी इमारतों आदि का हिसाब-किताब ले लिया गया था।

उन्हीं दिनों अल्लाह बख्श जी तथा गुलाम हुसैन जी (भूतपूर्व मुख्य-मन्त्री तथा विधिमन्त्री) और डॉक्टर चोपथ राम गिडवानी भी आये। उन्हें ज्ञान सुनकर बहुत खुशी हुई, उन्होंने यह भी कहा कि आप यहाँ रहें, हम सभी लोग आपकी मदद करेंगे। परन्तु उन्हें बताया गया कि ईश्वरीय आदेश के अनुसार अब भारत में सेवार्थ जाना ही है।

उन दिनों कोई ४०० के लगभग यज्ञ-वत्स थे। जब कराची बन्दरगाह पर सभी का सामान इकट्ठा हुआ, तो लोगों का एक हजूम इकट्ठा हो गया। मुसलमान और पठान लोग ४०० ब्रह्माकुमारियों और ब्रह्माकुमारों को सफ़ेद यूनीफ़ार्म में इकट्ठे जाते हुए ऐसे देखते रहे, जैसे किसी के घर से कोई स्नेही विदा लेता है। सभी के चेहरे कुछ उदास-से दिखाई देते थे। बहुत लोगों ने सामान उठा-उठा कर स्टीमर में रखने का कार्य अपने हाथों से किया। बहुत लोग विदा देने वहाँ आए थे। दूसरे जो हिन्दू लोग पाकिस्तान छोड़कर गए थे उनमें से बहुत-से अपने मकान आदि भी नहीं बेच सके थे और उनके जाते समय वहाँ के लोग उन्हें अधिक सामान आदि भी नहीं ले जाने देते थे, बल्कि कई-एक को तो लूट भी लिया जाता था। परन्तु वहाँ के लोगों ने यज्ञ के भवनों को भी उचित मूल्य पर देने के कार्य में सहयोग दिया था और स्टीमर में लाद कर यज्ञ की कारें भी साथ ले जाने दी थीं। यज्ञ-वत्स स्टीमर पर चढ़ रहे थे तो स्थानीय लोगों ने यज्ञ-वत्सों पर पुष्प-वर्षा भी की। यज्ञ-वत्सों ने स्टीमर चलते समय स्थानीय लोगों पर फूल बरसाये। विदाई का यह दृश्य भी उन लोगों के मन को घायल करने वाला था। तब यज्ञ-वत्सों ने भी ऐसा महसूस किया था जैसे कि हंस उड़कर दूसरे स्थान पर जा रहें हों अथवा ज्ञान-स्टीमर में बैठे योगी भव-सागर से पार जा रहे हों। स्टीमर में कप्तान तथा स्टॉफ के अन्य लोगों ने भी काफी सहयोग

कराची से भारत के लिये प्रस्थान

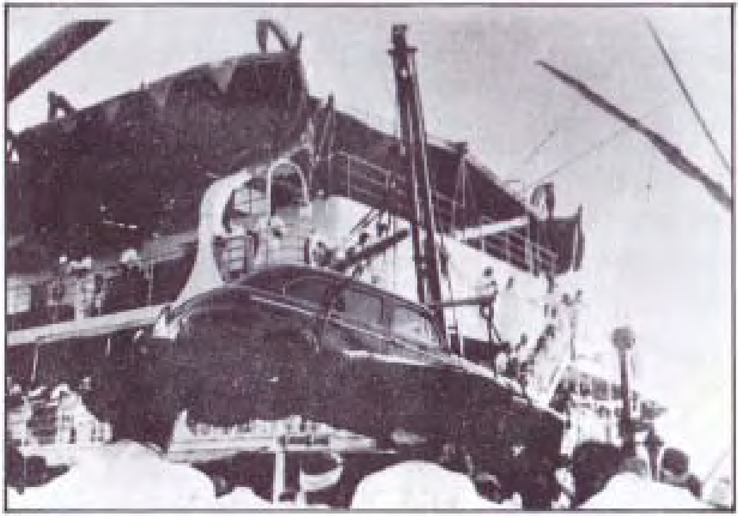

शक्तिदल कराची से विदा लेकर भारत की जनता की ज्ञान एवं योग सेवा के लिए समुद्री जहाज़ में रवाना हो रहा है। बन्दरगाह पर पाकिस्तान के बहुत-से लोग उनके प्रति स्नेह और सम्मान प्रदर्शित करने के लिये आये थे। चित्र में उनमें से कुछेक व्यक्ति दिखाई दे रहे हैं।

चले आबू की ओर!

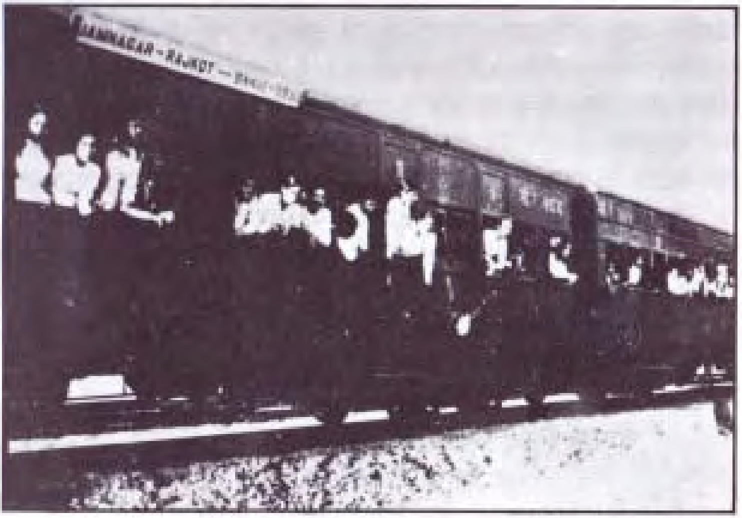

क्या आप जानते हैं कि यह गाड़ी प्रभु-पुत्रियों को कहाँ ले जा रही है? रेल के ये डिब्बे ओखा बन्दरगाह से रवाना हुए थे और अब ये आबू पहुँचने ही वाले हैं। वही आबू जहाँ ५००० वर्ष पहले भी आदि-देव ब्रह्मा और आदि-देवी सरस्वती ने भारत को पावन बनाने का दिव्य कर्त्तव्य किया था और ब्रह्मा-वत्सों ने योग-तपस्या की थी।

वे बार-बार कहते थे कि कोई सेवा हो तो बताओ। स्टीमर में भी प्रतिदिन नियमानुसार क्लास होती थी। ज्ञान मुरली सुनाई जाती थी। यह सुन्दर अवसर जानकर कप्तान आदि ने भी लाभ उठाया।

भारत में प्रवेश

आखिर यज्ञ-वत्स ओखा बन्दरगाह पर उतरे। वहाँ से गाड़ी में वे आबू आये। आबू पर्वत ऋषि-मुनियों की तो तपोभूमि रही ही है, परन्तु यहाँ प्रजापिता ब्रह्मा अथवा आदिनाथ की याद में एक दिलवाड़ा मन्दिर भी है जोकि एक बहुत ही सुन्दर और ज्ञानयुक्त यादगार है। इस स्थान पर एकान्त का वातावरण है और यह योग-तपस्या के लिए बहुत अच्छा है। शिव बाबा की अज्ञान के अनुसार जब 'राजसूय अश्वमेध अविनाशी ज्ञान यज्ञ का अथवा प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय' का कार्य यहीं आबू से शुरू हुआ — वही आबू जिसकी महिमा में कवि राम ऋषि शुक्ल जी ने इस प्रकार कहा है :—

आबू की महिमा विशाल है,
सचमुच यह आबू कमाल है।
जहाँ ज्ञान की वही मशाल है,
जिससे मिटता मोह जाल है।

आबू शिव अवतार भूमि है,
शालिग्राम दुलार भूमि है।
यह सत्धर्म प्रचार भूमि है,
सतयुग की आधार भूमि है।

कल्प-कल्प ब्रह्मा-तन में,
आबू में शिव अवतार हुआ है।
कल्प-कल्प आबू से सच्चा,
गीता-ज्ञान प्रचार हुआ है।

जिसने नहीं ज्ञान यह जाना,
शिव को अपना बाप न माना।
नहीं आत्मा को पहचाना,
सृष्टि-चक्र का मर्म न जाना।

उसका जीवन हुआ अकारथ,
यह अपने अनुभव का लेखा।
जो कुछ सुना सुनाता हूँ बस,
लिखता हूँ बस जो कुछ देखा।

अब इसी आबू में परमपिता परमात्मा शिव ने, प्रजापिता ब्रह्मा के तन द्वारा, कल्प पहले की तरह फिर से सतयुग की स्थापना का कार्य तीव्रतर गति से प्रारम्भ किया। महाभारत में लिखा है कि पाण्डवों ने १२ वर्ष बनवास और १ वर्ष अज्ञात-वास किया था। सिन्ध में १३ वर्ष तक (१९३७ से लेकर १९५० तक) अपने बोर्डिंग में पहले १२ वर्ष लोगों से अलग और फिर एक वर्ष उन्हीं लोगों की कुदृष्टि से अज्ञात रहकर इन अहिंसक पाण्डवों अथवा शिव-शक्तियों ने तपस्या की। इस प्रकार जब उन्होंने अपनी अवस्था को उच्च बना लिया, संस्कारों को बदल लिया, योग में स्थिति प्राप्त कर ली, तब ये माया को हराने के लिए लड़ाई के मैदान पर उतरीं। अब गोपियों के पार्ट का संवरण हुआ और ये ज्ञान-गंगायें बन भारत को पतित से पावन करने के लिए निकलीं । तब उनका मन उल्लास से पूर्ण हो यह गीत गा रहा था :–

विश्व के परिवर्तक हम, राजयोग सिखलाते हम,
बोलो मेरे संग–पवित्र बन, पवित्र बन।
सोने की-सी नगरी था मेरा ये वतन,
जहाँ पर था एक राज्य और एक धर्म।
देवी-देवताओं में था प्यार का चलन,
न कोई दु:ख था और न कोई गम।
पवित्र बन, पवित्र बन.....
नया था जमाना वह, सुखी था संसार,
यथा राजा तथा प्रजा और साहूकार।
१६ कला सम्पूर्ण कहलाते थे वहाँ,
पूज्य और पवित्र था सारा ही जहाँ।
विश्व के परिवर्तक हम,
राजयोग सिखलाते हम।

भारत में ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की स्थापना

परमपिता परमात्मा द्वारा स्थापित यह ईश्वरीय ज्ञान-यज्ञ पाकिस्तान से भारत में कैसे स्थानान्तरित हुआ, इसके बारे में भी एक विचित्र कहानी है। इस विषय में ब्रह्माकुमारी मनमोहिनी जी, ने निम्नलिखित वृत्तान्त सुनाया:—

'मेरे लौकिक सम्बन्धी जिनका बम्बई में तथा विदेशों में लाखों-करोड़ों रुपये का व्यापार चलता है, चाहते थे कि किसी तरह हम पाकिस्तान छोड़कर भारत में आ जायें। अत: उन्होंने इस उद्देश्य से कराची में हमें कई पत्र लिखे। इधर लोगों की ज्ञान-सेवार्थ भारत जाने के लिये हमें शिव बाबा का भी आदेश तो मिल ही चुका था परन्तु साथ-साथ बाबा यह भी कहा करते थे कि ब्राह्मण लोग तो निमन्त्रण पर तथा ईश्वरीय सेवा के लिये ही कहीं जा सकते है, यों ही तो उनका कहीं जाने का कोई प्रयोजन नहीं होता। अत: अब जब मुझे लौकिक सम्बन्धियों से निमन्त्रण तथा हवाई यात्रा का टिकट मिला तो बाबा की आज्ञा से मैं कुछेक अन्य दैवी बहनों के साथ बम्बई में गई।

लौकिक सम्बन्धी हमारे स्वागत के लिये हवाई अड्डे पर आये हुए थे। जैसे लोग किसी महात्मा के स्वागत के लिए फूल-मालायें ले आते हैं, वैसे ही प्रचलित रिवाज़ के अनुसार हमारे लौकिक सम्बन्धी भी हमारे लिये फूल मालायें लाये हुए थे। परन्तु हम लोगों को तो बाबा की ओर से यह शिक्षा मिली हुई थी कि हम फूल-मालायें स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि ये मालायें तो केवल देवी-देवता जो कि पूर्ण पवित्र होते है, ही धारण करने के अधिकारी हैं, जबकि हम अभी उन देवी-देवताओं के समान पवित्र बनने

का पुरुषार्थ कर रहे हैं और सेवाधारी हैं। अत: हमने यह मालायें अपने गले में धारण नहीं कीं और इस विषय में हमने उन्हें बाबा से मिले आदेशों से परिचित किया। इस प्रकार बाबा के द्वारा मिली शिक्षाओं का पालन करते हुए हम लोग अपने लौकिक सम्बन्धियों के यहाँ गयीं । वहाँ उन्होंने दो कमरे हमारे आवास-निवास के लिये ठीक-ठाक करा दिये थे और वहाँ एक कमरे में ऐसी भी व्यवस्था की गयी थी कि हम जिज्ञासुओं अथवा लौकिक सम्बन्धियों को प्रभु-परिचय भी दे सकती थीं।

बस, ज्यों ही हम सम्बन्धियों के यहाँ जाकर ठहरीं,त्यों ही, अर्थात् पहले दिन से ही हमारे लौकिक मित्र-सम्बन्धी तथा अन्यान्य लोग ईश्वरीय ज्ञान सुनने के लिये हमारे पास आने लगे। हमें यह सोचकर बड़ी खुशी होती थी कि प्रारम्भ में जो लोग हमें 'ओम्-मण्डली' में जाने से रोकते थे, आज वे स्वयं भी हमारे जीवन से प्रभावित होकर, हमसे कुछ ज्ञान-वार्ता सुनने के लिये उत्सुक हैं। हमारी खुशी का एक और भी कारण था, बाबा हमें सदा कहा करते थे – ''बच्ची! यह एक उक्ति है कि पहले अपने लौकिक घर वालों को सुख देना चाहिए (Charity begins at home), अत: उस नीति बचन के अनुसार आप वत्सों को भी पहले अपने सम्बन्धियों की ज्ञान-सेवा करनी चाहिए।'' बाबा यह भी कहा करते थे –''ब्रह्मा-कन्या वह है जो अपने पियर और ससुराल दोनों कुल तारती हैं। अर्थात्, यदि कोई ब्रह्मा-पुत्री ईश्वरीय-ज्ञान प्राप्त करने से पहले विवाहिता थी तो अब कुमारी व्रत धारण करके-वह अपने 'मायके' वालों को तथा 'ससुराल' वालों को भी ईश्वरीय ज्ञान द्वारा अतीन्द्रिय सुख देने का यत्न करती हैं।'' अत: अब अपने सम्बन्धियों की ज्ञान-सेवा करते हुए हमें ऐसा महसूस होता था कि हम अपने कर्त्तव्य तथा उस ईश्वरीय आदेश का पालन कर रही हैं।

हम लगभग दो मास उन सम्बन्धियों के यहाँ ठहरीं। जिन कमरों में हम ठहरी थीं, उन्हें छोड़कर हम दो मास की अवधि में और कहीं भी नहीं

गयीं। हमारे दैहिक सम्बन्धी कारें ले आते थे और हमसे अनुरोध और स्नेह से कहते थे कि —''बम्बई देखने-जैसा शहर है चलो आपको दिखा लायें।'' परन्तु हम कभी भी बम्बई घूमने के लिए नहीं गयीं क्योंकि एक तो हमें इसके लिए कोई रुचि न थी और दूसरे हमें तो अब यह सारा संसार एक माया नगरी अथवा निस्सार लगता था। अत: हम उनसे कहती थीं कि —''हमने सतयुग का वह भारत भी देखा है जो कि धर्म-भूमि और देव-भूमि था और जहाँ सोने-चाँदी के महल थे तथा राजा-प्रजा सभी सुखी थे। उसकी तुलना में आज का यह भारत या बम्बई क्या है! यह तो 'कूर-खण्ड' अर्थात् मायावी बन गया है। तभी तो ज्ञान प्राप्त होने पर कवि ने लिखा है :—

धर्म-भूमि यह 'कूर खण्ड' हो गई,
बन गये पूज्य, आज पुजारी।
निर्विकारिता स्वप्न बन गई,
और सभी बन गये भिखारी।

भोग-भोग की बात रह गई,
डसे हुए है सबको माया।
एक मूर्च्छना में सब व्याकुल,
बैठे मान स्वयं को काया।

कोई कहता सभी ईश हैं,
कोई फिर भगवान् नहीं है।
जितने मुँह उतनी ही बातें,
कोई सत्य प्रमाण नहीं है।

तो हम जोकि शिव बाबा द्वारा दिव्य दृष्टि प्राप्त करके स्वर्ग के दृश्य देखती हैं, वे इस माया नगरी बम्बई को देखकर क्या करेंगी? इस पृथ्वी पर रहने वाले लोग सतयुग में पूज्य देवता थे परन्तु अब तो वे पुजारी और

विकारी हो चुके हैं। इस प्रकार की बातें कहकर हम उन्हें टाल देंती। हमारे सम्बन्धियों ने अनेक बार हमें कई प्रकार के भोजन तथा वैभवों की भी भेंट की थी परन्तु हम तो सदैव अपने हाथों से दो सादा रोटी बनाकर सादा सब्जी के साथ खाती थीं और मन में ईश्वर के गुण गाती थीं। अत: उन लोगों को विचार आया कि 'ब्रह्मा-वत्स' अब अपने जीवन को बहुत ऊँचा बना चुके हैं। न तो इन्हें घूमने-फिरने का शौक है और न खाने-पीने का चस्का है। इनके जीवन में त्याग की उच्च भावना है। एक ओर वे बम्बई के फ़ैशन और वहाँ के लोगों के राजसी रहन-सहन तथा भोगमय जीवन को देखते और दूसरी ओर वे हमारे सफेद एवं सादा वस्त्र तथा बहुत ही सादा खानपान को देखते तो वे ब्रह्मा-वत्सों के त्याग से प्रभावित होते । अत: वे हमें वापस कराची जाने न देते, परन्तु हमें तो वापस जाना ही था। हम जितना समय वहाँ रही, उतना समय उन्हें मधुर ईश्वरीय ज्ञान तो सुनाती ही रहीं और उन्हें परमपिता परमात्मा की स्मृति में भी बिठाती रहीं। अन्य जो लोग भी हमें मिलने आते उन सभी को हम यह सन्देश देती थीं कि :—

"शिव बाबा को अब याद करो,
तुम्हें मुक्तिधाम में जाना है।
अपने पुरुषार्थ के बल पर,
सतयुग में तुमको आना है।

यह संगम का स्वर्णिम युग है,
शिव बाबा फिर से आया है।
ब्रह्मा-मुख से शिव बाबा ने,
वही गीता-ज्ञान सुनाया है।

सृष्टि का अन्त अब आया है,
विकराल विनाश खड़ा आगे।
है समय आखिरी अब सबका,
शिव बाबा ने बतलाया है।

पाण्डव शिव-शक्ति सेना की,
रणभेरी अब फिर बजती है।
शिव बाबा के नेतृत्व में फिर,
माया को मार भगाना है।
शिव बाबा को अब याद करो,
तुम्हें मुक्तिधाम में जाना है।''

कुछ समय के बाद हमारे लौकिक सम्बन्धियों ने सारे यज्ञ के स्थानान्तरण के लिये बाबा को एक निमंत्रण पत्र लिखकर भेजा। बाबा ने उन्हें कहा कि –'निमन्त्रण उसी का स्वीकार हो सकता है जिसे ज्ञान सुनने की तथा ईश्वरीय नियमों का पालन करने की लगन हो ।'' ऐसा उत्तर मिलने पर उन्होंने हमारी एक अन्य देवी बहन जिसका नाम ब्रह्माकुमारी लीलावती है और जिनका उनके साथ लौकिक सम्बन्ध भी है, की ओर से यज्ञ में निमन्त्रण भेजा और हमें कहा कि सभी यज्ञ-वत्सों के आवास-निवास के लिए भारत में कोई अनुकूल भवन ढूँढा जाय। मैंने तथा ब्रह्माकुमारी लीलावती जी ने पूना, बम्बई, अहमदाबाद आदि में कई भवन देखे परन्तु हमें ढाई-तीन सौ यज्ञ-वत्सों के इकट्ठा रहने के लिये उन तीनों नगरों में ऐसा बड़ा कोई भी भवन न दिखाई दिया जिसमें ठीक व्यवस्था हो। मकान ढूँढने के कार्य में हमें अहमदाबाद में सर्वानन्द जी तथा गंगेश्वरानन्द जी, जोकि प्रसिद्ध संन्यासी और प्रचारक हैं और जिन्हें कि सिन्ध के लोग 'गुरु' मानते हैं, ने हमें काफ़ी सहयोग दिया। उन्होंने अपने एक संन्यासी-शिष्य सिद्धानन्द जी[१] को हमारे साथ भेजा।

---

१. बाद में जब हम बृज कोठी में रहती थीं तो सिद्धानन्द जी कुछ दिन वहाँ आकर रहे। जाते समय अपना अनुभव सुनाते हुए उन्होंने कहा कि – ''मैं सदा यह समझता था कि स्त्री और पुरुष इकट्ठे रहते हुए कभी भी पवित्र नहीं रह सकते परन्तु मेरे जीवन में अब यह पहली बार अनुभव हुआ है कि वे रह सकते हैं। यहाँ मैं जितने दिन रहा मुझे कभी स्त्री-पुरुष का भान नहीं हुआ बल्कि सदा मेरी आत्मिक दृष्टि ही बनी रही। कर्म-संन्यासियों के संग रहते हुए मेरी दृष्टि इतनी शुद्ध कभी नहीं हुई थी।''।

आखिर हम माउण्ट आबू में कोई अनुकूल भवन देखने के लिये आयीं। हमारे कुछ लौकिक सम्बन्धी भी हमारे साथ थे। मैंने एक दैवी बहन, ब्रह्माकुमारी रुक्मिणी जी[1] के साथ मकान ढूँढते-ढूंढते माउण्ट आबू की 'बृज कोठी' देखी जोकि भरतपुर के महाराजा की है। मुझे वह पसन्द आयी। यों वह कोठी कोई बहुत ज्यादा अच्छी न थी परन्तु उस कोठी को देखते समय मुझे बाबा के कुछ महावाक्य याद आये, इसलिये यह कोठी ले लेना मुझे उचित लगा। बाबा हमें सिन्ध में काफी पहले कहा करते थे कि —''बच्चे, अन्त में आप ब्रह्मा-वत्स पर्वतों पर जाकर तपस्या करेंगे।'' और महाराजाओं की कोठियों में रहेंगें।'' बाबा के यह पूर्व-वचन मेरे मन में बार-बार प्रबल प्रेरणा के रूप में उठते और मेरे मस्तिष्क को समझाते कि यह आबू ही वह पर्वत है और 'बृज कोठी' तो एक महाराजा (भरतपुर के महाराज) की कोठी है ही। अत: यही वह पर्वत है जिसके बारे में बाबा पहले से ही हमें बार-बार कहते रहे हैं कि — ''अन्त में आप पाण्डव पर्वत पर तपस्या करते-करते शरीर छोड़ेंगे।'' बाबा यह भी कहा करते कि —''जब इस कलियुगी विकारी सृष्टि का महाविनाश होगा तो ब्रह्मा-वत्स उस पहाड़ी पर ही होंगे तथा वहाँ से ही विनाश देखेंगे।'' अत: मुझे प्रबल प्रेरणा हुई कि हो न हो यह वही पहाड़ी है और यही वह राजा की कोठी है, जहाँ हम शिव-शक्तियों और पाण्डवों को अर्थात् ब्रह्मा-वत्सों को आकर तपस्या भी करनी है और रहना भी है। अत: मैंने अहमदाबाद जाकर बाबा को कराची में टेलीफोन किया और बृज कोठी के बारे में उनसे राय माँगी। तब बाबा ने इस स्थान के लिये झट से ऐसे ही स्वीकृति दी जैसे कि बाबा के मन में यहाँ आने की योजना पहले से ही हो और हमें केवल ढूँढने की सेवा का अवसर और खुशी प्राप्त करने के लिये ही उन्होंने भेजा हो।''

---

१. ब्रह्माकुमारी रुक्मिणी जी भी एक बहुत ही धनाढ्य कुल से सम्बन्धित थीं। परन्तु उनका जीवन बड़ा त्यागमय था

यज्ञ के एक विशेष सेवाधारी भाई का आबू में आना

जब शिव बाबा ने सिन्ध अथवा पाकिस्तान से 'यज्ञ' को भारत में स्थानान्तरित करने का निर्देश दिया तब आबू में बृज कोठी लेने तथा ब्रह्मा-मुख-वंशावली के आवास- निवास आदि के लिये उचित प्रबन्ध करने के लिये सब से पहले एक विशेष अनुभवी ब्रह्माकुमार को भेजा गया था। वह यज्ञ-वत्सों में से एक मुख्य भाई थे जिन्हें शिव बाबा ने 'विश्वकिशोर' नाम दिया था। सचमुच जैसा उनका नाम था वैसा उनका पुरुषार्थ भी था। वे भविष्य में विश्व के मालिक (श्री नारायण) का किशोर बनने-जैसा ही पुरुषार्थ किया करते थे। वह इस ईश्वरीय ज्ञान की धारणा से पहले कलकत्ता में एक उच्च और नामवर जवाहिरी थे। लौकिक नाते से वह बाबा के भतीजे थे। उन्हें बाबा के प्रति अगाध स्नेह और अत्यन्त सम्मान था। बाबा ने ही उन्हें जवाहिरात का धंधा सिखाकर निपुण जवाहिरी बनाया था। जब बाबा को ईश्वरीय साक्षात्कार हुए थे और उन्होंने जवाहिरात के धन्धे से अवकाश प्राप्त किया था तब 'विश्व किशोर' जी के मन में भी यह संकल्प था कि 'मैं भी बाबा का अनुकरण करूँगा।'' उन्होंने बाबा से अपनी हार्दिक इच्छा प्रगट भी की थी। परन्तु बाबा ने उन्हें निर्देश दिया था कि – ''अभी थोड़ा ठहरो। कुछ समय के बाद आपको भी पूर्ण रूपेण प्रभु-अर्पण होने की राय दे दी जायेगी।'' विश्व किशोर जी तो हर हाल में राजी थे, जैसे बाबा उन्हें चलायें वैसे ही चलने में उनको खुशी होती थी। कुछ ही वर्षों के बाद उन्हें इस ईश्वरीय ज्ञान यज्ञ में समर्पण होने की प्रेरणा मिल गयी और तब वे सपरिवार इस ईश्वरीय यज्ञ में सर्वस्व समर्पित हो गये थे । उनकी युगल जिनका नाम ब्रह्माकुमारी सन्तरी है, भी लगन और तन्मयता तथा त्याग से इसी ईश्वरीय विद्या के अध्ययन और सेवा कार्य में लग गयीं थीं।

विश्व किशोर जी भी बहुत अनुभवी, विचारवान, निश्चय बुद्धि, त्याग-वृत्ति वाले, वफ़ादार और ईमानदार थे। वे जब-कभी लोगों से यज्ञ के किसी कार्य के लिये मिलते तो लोग उनसे पूछते थे – ''आपका इस संस्था में

क्या स्थान है? क्या आप यहाँ के सेक्रेटरी हैं?'' तब विश्व किशोर जी कहा करते – ''नहीं, मैं तो माताओं-बहनों का एक छोटा-सा सेवक हूँ, अथवा मैं तो एक मामूली 'ईश्वरीय सेवक' हूँ।''

वे पत्र-व्यवहार में भी स्वयं को 'ईश्वरीय सेवक' लिखकर हस्ताक्षर करते थे। यों थे तो वे इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के एक प्रबन्धक।

भारत में जब आकर उन्होंने भरतपुर के महाराजा की कोठी (बृज कोठी) को यज्ञ-वत्सों के विद्या-अध्ययन तथा आवास-निवास के लिये ले लिया[१] तब यज्ञ-पिता, यज्ञ-माता तथा सभी यज्ञ-वत्स आबू में पधारे थे।

बाबा बोले कि साँपों से ही तो हमारा मुकाबला है

ब्रह्माकुमारी दीदी मनमोहिनी जी कहती हैं कि जब मैं बृजकोठी से तैयार होकर बाबा, ममा तथा यज्ञ-वत्सों का ओखा बन्दरगाह पर स्वागत करने के लिये रवाना होने लगी थी, तब मैंने बृज कोठी में, ऊपर के एक कमरे में बहुत लम्बा और मोटा साँप देखा। इससे मेरे मन में संकल्प उठा कि शायद मैंने यज्ञ-वत्सों के लिये गलत स्थान चुना है। अत: जब मैं ओखा बन्दरगाह पर बाबा से मिली तो मैंने उनके कानों में धीमे-धीमे स्वर में कहा –''बाबा। हम ने जो स्थान लिया है वहाँ तो साँप है।'' मैंने बाबा को यह बता देना अपना कर्त्तव्य समझा था। मेरी यह बात सुनकर बाबा ने मुस्करा दिया। वे बोले – ''बच्ची, कोई हर्ज नहीं है। साँप हमारा क्या बिगाड़ेंगे। हमें तो साँपों से मुकाबला करना है।'' यहाँ साँपों से बाबा का अभिप्राय काम, क्रोधादि विकारों से तथा आसुरी स्वभाव के लोगों से था। बाबा के इन शब्दों को सुनकर मेरे मन को सन्तोष हुआ। मैंने अपने-आपसे कहा कि –''चलो, बाबा ने स्वयं ही अब इस स्थान को पसन्द किया है।'' मेरा ध्यान इस बात की ओर भी गया कि बाबा हमारी अवस्था को बिल्कुल स्थिर और अभय बनाते हैं।

---

१. यह कोठी सन् १९५० में ली गई थी।

जब सभी यज्ञ-वत्स आबू पर्वत पर पहुँचे तब उनके मन में भी यह विचार चला कि पता नहीं आबू को 'यज्ञ' के लिए क्यों चुना गया है? परन्तु समयान्तर में शिव बाबा ने ज्ञान-मुरलियाँ में समझाया कि कैसे ५००० वर्ष पहले भी यहाँ ही आदि-देव ब्रह्मा और आदि-देवी सरस्वती ने अपने वत्सों-सहित तपस्या की थी जिसकी यादगार के रूप में यहाँ विश्व का अतिसुन्दर, दिलवाड़ा (देलवाड़ा) मन्दिर, अम्बा जी का मन्दिर, अधर देवी का मन्दिर, कँवारी कन्या का मन्दिर तथा अचलगढ़ का मन्दिर बना हुआ है और यहाँ एक इतिहास-प्रसिद्ध 'यज्ञ-कुण्ड' भी है जिसके बारे में दन्त-कथा है कि इस यज्ञ से सूर्यवंशी राजकुल के पूर्वज निकले थे। तब सभी यज्ञ-वत्सों को यह जान और देखकर खुशी हुई कि एक ओर दिलवाड़ा में हमारी कल्प पहले वाली पार्थिव यादगारें हैं और दूसरी ओर हम अपने दैवी माता- पिता के साथ अथवा आदि देव और आदि देवी के साथ इसी पर्वत पर वही ५००० वर्ष पहले की तरह ज्ञान-यज्ञ कर रहे हैं और सूर्य-वंशी महाराजा बनने का पुरुषार्थ कर रहे हैं। तभी तो कवि की लेखनी ने निम्नलिखित पद अंकित किये :—

आँख खोल देखें दिलवाड़ा,
खोलें मन का बन्द किवाड़ा,
मन्दिर के देवों की प्रतिमा,
ब्रह्मा-वत्सों की ही प्रतिमा।

मन्दिर की प्रतिमाओं का जीवन्त रूप मधुबन में देखा,
आदि पिता जगदम्बा के संग इन्हें तपस्या में रत देखा।

अग्नि कुण्ड का गुह्य राज है,
जान चुका ब्राह्मण समाज है।
शिव ने जिसको रचा आज है,
रूद्र यज्ञ पर हमें नाज है।

संगम का शुभ वर्ण ब्राह्मण,
इसी यज्ञ में अर्पण होकर।
स्वाहा करके निज तन-मन-धन,
अश्वमेध को करता पूरण।
जीवन की इन आहुतियों से,
माँ सरस्वती ब्रह्मा-ब्राह्मण।
सतयुग में जाकर बनते हैं,
ये श्री लक्ष्मी, श्री नारायण।

आबू में यज्ञ-वत्सों का पधारना और पर्वतों पर तपस्या करना

अब सिन्ध से स्थानान्तरित होकर सभी यज्ञ-वत्स आबू में बृज कोठी में आकर रहने लगे थे। वे ईश्वरीय विद्या-अध्ययन तथा प्रभु-स्मृति में लवलीन रहते थे। प्रतिदिन प्रात: उन्हें ईश्वरीय ज्ञान की मधुर मुरली सुनाकर अतीन्द्रिय सुख देने वाले बाबा उन्हें प्राय: सैर करने तथा पर्वतों पर चढ़ने भी अपने साथ ले जाते थे। जब सभी यज्ञ-वत्स निक्कर और रब्बड़ के बूट पहने हुए समूह में बृज कोठी से निकल कर डैम लेक, नक्की लेक आदि की ओर जाते तो स्थानीय लोग निस्तब्ध हुए-से उन्हें अपलक देखते रहते कि यह शक्ति-दल कहाँ से आ गया है! उनके मन में प्रश्न उठता था कि हम कोई स्वप्न तो नहीं देख रहे हैं? उन्होंने कभी भी इतनी संख्या में कन्याओं - माताओं को इस स्फूर्ति से, इस वेग में, दौड़ते-चलते, पर्वत पर चढ़ते नहीं देखा था। जब इतने सारे सफ़ेद वस्त्रधारी यज्ञ-वत्स पर्वत पर चढ़ रहे होते थे तब वह दृश्य देखते बनता था। मार्ग पर चलते लोग वहाँ के वहाँ खड़े एक टिक देखते रहते जब तक कि वत्सों का समूह उनकी दृष्टि से ओझल न हो जाता। परन्तु दर्शकों को यह थोड़े ही मालूम था कि गुप्त वेश में यही 'शिव-शक्तियाँ' हैं अथवा यही 'राज-ऋषि' हैं। उन्होंने तो सुन रखा था कि शक्तियाँ तलवार, तीर, कवच आदि से सजी होती

थीं और असुरों से युद्ध करती थीं परन्तु यह सच्ची शिव शक्तियाँ तो कहती थीं कि:—

है कवच हमारा सहज योग,
हम सजीं ज्ञान-तलवारों से।
दिन-रात युद्ध करती रहतीं,
माया के पाँच विकारों से।

अपना यह युद्ध अलौकिक है,
हम तो माया को मार रहे।
वह काम शत्रु, यह क्रोध शत्रु,
सब एक-एक कर हार रहे।

यह मनोजगत् का महायुद्ध,
इसमें हिंसा की बात नहीं।
मरजीवा बच्चे ब्रह्मा के,
हम करते कोई घात नहीं।

ब्रह्माकुमारी कुमारिका जी, **(दादी प्रकाशमणि जी)** जो कि वर्तमान समय इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय की मुख्य प्रशासिका है, कहती हैं कि —''बाबा हम वत्सों को जब पहाड़ी पर ले जाते तो बाबा की आयु तब सत्तर वर्ष से अधिक होते हुए भी बाबा की रफ्तार सभी से तेज होती थी। पर्वत पर चढ़ने वालों में वृद्ध मातायें भी होती थीं और छोटी आयु के गोप भी। परन्तु बाबा के साथ होने के कारण सभी इतने खुश होते थे और पर्वत पर ऐसे हर्ष से चढ़ते थे कि पता नहीं वहाँ जाकर उन्हें शायद स्वर्ग की प्राप्ति होगी। पर्वत पर चढ़कर बाबा और ममा वहाँ सभी वत्सों को ईश्वरीय ज्ञान के रमणीक रहस्यों से बहलाते । वे उन्हें पितृवत् - मातृवत् स्नेह देते तथा उन्हें योग में बिठाते थे। बाबा कहते — ‘'देखो, अब हम बेहद में आ गये हैं। यहाँ वातावरण कितना स्वच्छ और शान्त है। देखो, इस वातावरण

में शिव बाबा को याद करने में कितना आनन्द है। सभी बच्चे अन्तर्मुखी होकर बैठो उस मोस्ट बिलवेड (अत्यन्त प्रिय) बाबा की याद में जिसने हम सबको अज्ञान की नींद से जगाकर इतना उच्च बनाया है और सृष्टि के आदि-मध्य-अन्त का रहस्य समझाया है।'' ऐसे कहते -कहते ब्रह्मा बाबा के नेत्रों से प्रेम का समुद्र एक अनूठी झलक देता था। वे शिव बाबा की मधुर याद में तन्मय हो जाते और सामने बैठे सभी यज्ञ-वत्सों को भी अपनी योग-दृष्टि से योग-स्थित कर देते। कुछेक वत्स तो ध्यानावस्था में ही चले जाया करते थे।

उस अवस्था में उन वत्सों के नेत्र बन्द होते और वे वहीं ऐसे रास करने लगते जैसे कि किशोर अवस्था वाले श्रीकृष्ण उनके सामने हों और वे वत्स उनकी अँगुली पकड़कर उनके साथ रास कर रहे हों। रास करते -करते कई बार वे पहाड़ी के आखिरी सिरे पर से भी गुजरती थीं। इसलिए कई बार दूसरे वत्सों को ऐसा संकल्प आता कि यह रास करने वाली बहन कहीं पहाड़ी के सिरे से गिर न पड़े। परन्तु यह उनका भ्रम था क्योंकि जो दिव्य दृष्टि के वरदान को पाकर दिव्य मूर्त श्रीकृष्ण से रास कर रही हो तथा जिसे प्रभु का सहारा प्राप्त हो, वह भला नीचे गिर कैसे सकती थी? वहाँ एकान्त स्थान पर, जहाँ कि संसार के लोगों की न आवाज़ थी, न विकारी लोगों की उपस्थिति, ईश्वरीय ज्ञान का श्रवण, योग का अभ्यास अथवा अपने रूहानी पिता से आत्मिक बातें ऐसी सुखमय लगती थीं कि जिनका वर्णन शब्द नहीं कर सकते।

कई बार बाबा सभी को कहते – ''बच्ची, दो या तीन-तीन बहनें मिलकर अलग-अलग पहाड़ी पर जाकर ईश्वरीय स्मृति में बैठो तथा ज्ञान का मंथन करो। जैसे गाय चारा खाने के बाद जुगाली करती है, वैसे आपने भी जो ज्ञान सुना है, उस पर विचार-सागर मंथन करो। इस प्रकार जब सफ़ेद-वस्त्रधारी ब्रह्माकुमारियाँ और ब्रह्माकुमार आबू पर्वत की ऊँची-ऊँची चोटी पर चढ़कर बैठे होते तो नीचे से ऐसा मालूम होता था कि जैसे

सफ़ेद-सफ़ेद बादल इस पर्वत को ढके हुए हैं। वे जब पंक्ति बाँध कर एक - दूसरे के पीछे पर्वत पर चढ़ रहे होते तो नीचे सड़क पर जाने वालों को ऐसे लगता जैसे आकाश में कुँजों का समूह पंक्ति में उड़ता जा रहा हो।

बहुत बार बाबा बच्चों को खिलाने-पिलाने का सामान भी साथ लेकर जाते। वे प्रात:काल के बाद बहुत ही स्नेह और रुचि से चेम्बर[१] में कहते —''आज बाबा बच्चों को पिकनिक करायेंगे। मीठे बच्चों, आज अभी-अभी हम पहाड़ी पर चलेंगे, वहाँ शिव बाबा की मधुर स्मृति में भी बैठेंगे, ज्ञान की चिट-चैट भी करेंगे और फिर बाबा प्यारे बच्चों को अपने हाथों से 'टोली' (प्रसाद) भी खिलायेंगे। बच्चे, यह फैमिली सत्संग है अथवा गॉड फादरली यूनिवर्सिटी है। जैसे लौकिक परिवार में बूढ़ा बाप अथवा दादा बच्चों के साथ बैठकर उन्हें कहानी सुनाता, शिक्षा-सावधानी देता तथा प्यार से खिलाता-पिलाता भी है, वैसे ही यह सभी आत्माओं का बाप (शिव बाबा) तथा दादा (ब्रह्मा बाबा) भी आप बच्चों की आत्माओं के जन्म-पुनर्जन्म की कहानी सुनाता है। आप बहुत ही सिकीलधे (बहुत ही चाव और बहुत समय के बाद मिले) हुए बच्चे हो जोकि कल्प के बाद बाप से आन मिले हो। तो वह प्यार का सागर आप बच्चों को स्वयं ही खिलायेगा और बहलायेगा। वह तो निराकार है, उसका अपना तो कोई शरीर है नहीं, इसलिये उसने इस दादा का शरीर उधार पर लिया है। अत: इन हाथों से, बहुत ही जिगरी स्नेह से, वह आपके मुख में इस यज्ञ की शुद्ध 'टोली' देगा, जिस यज्ञ के पवित्र ब्रह्मा-भोजन के एक-एक कण के लिए देवता भी तरसते हैं। बच्चे, आप बहुत सौभाग्यशाली हो जिन्हें बाप (परमपिता परमात्मा शिव) स्वयं प्यार से खिलाता और पढ़ाता भी है। जरा

---

१. क्लास के बाद सभी वत्स बाबा के कमरे में जाते थे जहाँ बाबा अपनी चारपाई पर अनौपचारिक रीति से सुविधापूर्वक बैठते और सभी यज्ञ-वत्स भी ऐसे बैठ जाते जैसे बच्चे अपने बाप या दादा के पास बैठकर बात सुनते हैं। अब क्लास की बजाय परिवार का-सा रूप होता और वहाँ बाबा रमणीक रीति से ज्ञान सुनाते थे।

सोचो तो, त्रिलोकपति शिव बाबा स्वयं इतनी दूर से, परमधाम से, आकर आपको पढ़ाता है। जिसे पाने के लिए संन्यासी जंगलों में ढूँढ रहे हैं, जिसके एक सैकण्ड के दर्शन-मात्र के लिए, अथवा जिसकी क्षण-भर की झलक के लिये तीव्र-वेगी भक्त अपने सिर को उतार कर तली पर रखने के लिए भी तैयार हो जाते हैं तथा राजा, राज्य-भाग्य भी न्योछावर करने में संकोच नहीं करते, ऐसा वह सब का प्यारा पिता आप बच्चों को आकर पढ़ाता है, प्यार से दुलारता है, आपका सखा बनकर आपसे खेलता भी है! प्रभु-मिलन के इस जीवन का ही तो गायन शास्त्रों में है। परन्तु दुनिया आप को उस साधारण और गुप्त वेश में नहीं पहचान सकती, न ही उस पिता को पहचान सकती है क्योंकि आज मनुष्य की आँखों पर विकारों का मोटा पर्दा पड़ा हुआ है और उनकी दृष्टि तो केवल देहों को देख सकती है। तो चलो, बच्चे तैयार हो जाओ, चलो पुरुषोत्तम संगम युग की इन थोड़ी-सी घड़ियों में उस बाप से खूब मिलन मना लो और जन्म-जन्मान्तर आपने जिसके लिये भक्ति की, अब उससे जितना प्रेम तथा ज्ञान खज़ाना लूटना हो वह लूट लो।''

इस प्रकार, नारायणी नशे से सराबोर करके, ईश्वरीय मस्ती के विमान में चढ़ाकर तथा मधुर मुस्कान, प्रेम और योग के तेज से चमकती हुई आँखों से निहारते हुए, ''मीठे-मीठे बच्चे''- इन शब्दों से दुलारते हुए बाबा किसी को अपनी अँगुली देकर, किसी की अँगुली स्वयं पकड़कर, किसी के बारे में पूछते हुए, किसी को पीछे मुड़कर हर्ष से निहारते हुए ले चलते । चलते-चलते एक सैकण्ड रुक कर, पीछे मुड़कर, सबकी ओर निहारते हुए वे कहते —''बच्चे, शिव बाबा की याद है? यह याद है कि किसके साथ चल रहे हो? देखो शिव बाबा की याद में चलोगे तो कदम-कदम में पद्‌म-पद्‌म की कमाई होगी।''

कभी बाबा कहते —''आप बच्चे आगे-आगे चलो, मैं पीछे-पीछे आता हूँ क्योंकि गौओं की रखवाली करने वाला व्यक्ति सदा गौओं के पीछे

पद-यात्रा के साथ-साथ बुद्धि द्वारा ईश्वरीय याद रूप यात्रा

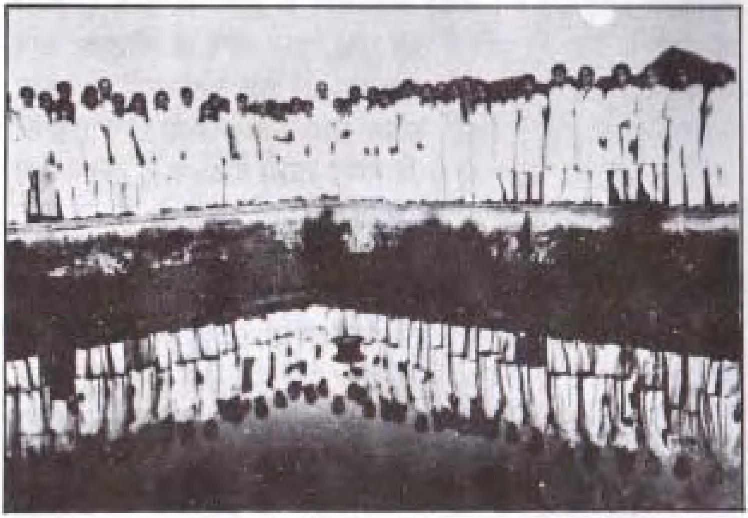

आबू में पिता-श्री पर्वतों पर घूमने ले जाया करते थे और कहते थे – ''बच्चे, ईश्वरीय ज्ञान की जो मंज़िल है, उस पर भी चढ़ते रहना।'' इस चित्र में यज्ञ-वत्स आबू पर्वत पर डैम लेक पर खड़े दिखाई देते हैं। उन श्वेत वस्त्रधारी ज्ञान-हंसों का प्रतिबिम्ब ऐसा लग रहा है जैसे लेक में भी हंस बैठे हों। इस प्रकार बाबा सहज शारीरिक व्यायाम भी कराते और चलते-फिरते, उठते-बैठते योग-युक्त अवस्था में स्थित रहने का अभ्यास भी कराते।

बाबा पत्र लिख रहे हैं

लाओ तो लाडले बच्चों को चिट्ठी लिख दें – 'ऐसा कहकर बाबा अपने कोमल हस्तों से अति प्यार और शिक्षा से युक्त ऐसे पत्र लिखते कि जिन्हें बार-बार पढ़ने को मन करता। वे पत्र जीवन की एक अनमोल निधि बन जाते और आत्मा में पवित्रता तथा शक्ति का संचार करने वाले सिद्ध होते। चित्र में ईशू बहन जी किसी लाड़ले बच्चे का पत्र ढूँढ रही हैं।

चलता है ताकि कोई गाय इधर-उधर न हो जाये।'' कभी वे कहते –''आप पीछे-पीछे चलो, मैं आगे-आगे चलूँगा क्योंकि पण्डा सदा आगे चलता है। वह रास्ता दिखाता है और यात्री उनके पीछे-पीछे चलते हैं।'' इस प्रकार की मीठी-मीठी नित्य नई-नई ईश्वरीय ज्ञान की मधुर मुरली से वे सभी को मस्त करते रहते। कभी वह इन माता रूपी गौओं का 'गोपाल' अथवा रक्षपाल बन जाते और कभी आत्माओं को परमधाम तथा बैकुण्ठ की यात्रा पर ले जाने वाले 'पण्डा' बन जाते । कभी उनका हाथ पकड़ कर चल रहे होते तो अचानक ही पुचकार कर पूछते – ''बच्ची, किसका हाथ पकड़ा हुआ है –शिव बाबा का या ब्रह्मा बाबा का? बच्ची, कभी हाथ छोड़ोगी तो नहीं? जानती हो इसका हाथ पकड़ने से कहाँ पहुँच जाओगी।'' फिर दूसरे ही क्षण वे किसी से पूछ लेते – ''बच्चे, किसके साथ चल रहे हो?'' वह बोलता –''बाबा के साथ।'' तब बाबा कहते – ''हाँ बच्चे, परन्तु यह याद है कि इस बाबा से क्या वर्सा मिलता है? उस वर्से की खुशी में चलते चलना। देखो, शिव बाबा आप बच्चों को राजयोग सिखाकर राजाओं का राजा बनाता है।''

फिर वह तीव्र गति से चल पड़ते। काफ़ी आगे निकल कर कहते – ''देखो तो यह कैसा शक्ति-दल है, यह कितना पीछे रह गया है! अरे, बुड्ढे जवान हो गये हैं, जवान बुड्ढे हो गये हैं।'' फिर वे समझाते कि इस तन में दो इंजन हैं, एक इंजन है ब्रह्मा की आत्मा, दूसरा इंजन है शिव बाबा अर्थात् परमात्मा, इसलिए यह (ब्रह्मा) तेज़ चलता है। फिर जान-बूझकर वह चतुर सुजान, बच्चों से हँसी-विनोद करने के लिये उन्हें कठिन रास्तें से पहाड़ी पर ले जाता। कुछ माताएँ भारी अथवा वृद्ध शरीर होने के कारण न चढ़ सकतीं तो कहतीं – ''बाबा, बाबा! ठहरो बाबा, यह कहाँ से ले जा रह हो, यहाँ तो चढ़ने की जगह ही नहीं है। यह तो गोल-गोल

१. 'गो' का अर्थ है–'इन्द्रियाँ' और 'पी' का अर्थ है, 'पी जाना।' जिसने इन्द्रियों को जीत लिया हो वह 'गोपी' अथवा 'गोप' है।

सा पत्थर है, इसे पकड़े कहाँ से और इस पर पाँव कहाँ से टिकाएँ।'' तब बाबा ऊपर के पत्थर पर खड़े होकर उन्हें हाथ देकर ऊपर चढ़ने के लिये सहारा देते। देखो तो सबके दिलों का सहारा प्रभु उन्हें इस बहाने से 'बाबा ....बाबा' याद करने की टेर डालते। चढ़ते-चढ़ते, कई-एक का साँस चढ़ जाता। वे कहते —''बाबा, अब बस करो। अब आगे मत जाओ। बाबा, प्यारे बाबा, आज इस पहाड़ी पर ही बैठेंगे।'' कभी बाबा उनकी बात मान लेते तो वे खुश हो जातीं कि देखो बाबा हमारी बात मानते हैं। कभी बाबा न मानते तो वे गोपियाँ हुज्जत से कहतीं कि — 'देखो तो बाबा हमारी बात मानते ही नहीं हैं।'' इस प्रकार वे मीठा-सा उलाहिना देतीं। इस तरह बाबा के हर कर्म में दिव्य चरित्र भरे होते, हर बात में दिव्य स्नेह और कल्याण की भावना भरी हुई होती थी। बच्चे-बूढ़े, माताएँ-कन्याएँ, सभी उनकी मीठी ज्ञान-मुरली से, उनके दिव्य चरित्रों से अपने-जीवन में हर्ष भरते चल रहे थे।

एक ओर पढ़ाई, दूसरी ओर परीक्षाएँ

इस प्रकार, आबू पर्वत पर यज्ञ-वत्स योग-तपस्या करते रहते थे,मानों पार्वतियाँ शिव को वरने के लिये योग साध रही हों । यज्ञ-वत्सों को जितना समय मिलता, वे ज्ञान-मुरली का अध्ययन तथा योग ही का अभ्यास करते रहते और अपनी आत्मिक उन्नति में निरन्तर तत्पर हरते थे। अब पढ़ाई के साथ-साथ कुछ नई परीक्षाएँ भी उनके सामने आती रहती थीं। इस विषय में ब्रह्माकुमार विश्व रत्न जो कि वर्तमान समय आबू में यज्ञ सेवा करते हैं, लिखते हैं कि :—

''यह बृज कोठी जिसमें अब यज्ञ-वत्स आकर रह रहे थे, एक श्मशान के निकट एकान्त स्थान में थी। यज्ञ-वत्सों के आ बसने से पहले यह कोठी काफ़ी समय तक खाली थी। आबू के कुछ लोग कहते थे कि इस कोठी में भूतों का वास है। आबू शहर के बाहरी सिरे पर वन के निकट होने के कारण यहाँ कई बार सर्प तथा वन्य पशु भी निकल आया करते थे।

अत: अब यज्ञ-वत्सों, के लिये इस शिक्षा-स्थली में विषैले जीवों, हिंसक पशुओं, प्रेत आत्माओं, श्मशान के उच्चाट वातावरण तथा बीहड़ स्थान के अति मौन वातावरण के रूप में एक परीक्षा सामने आई। संन्यासी लोग तो नगर को छोड़कर , विशेष तौर पर वन में जाकर वास करते हैं तथा हिंसक पशुओं और विषैले जीवों के दृश्य से पैदा होने वाले भय तथा निर्जन स्थान की, मन को खदेड़ने वाले मौन की परिस्थिति को पार करने का अभ्यास करते हैं परन्तु यज्ञ-वत्सों के सामने तो यह परिस्थिति स्वयं ही चलकर आयी थी।

किन्तु अपनी आत्मिक स्थिति तथा ज्ञान-निष्ठ अवस्था के बल पर उन्हें ऐसे स्थान की यह परिस्थितियाँ रंचक भी डरावनी न लगीं । कोई साँप सामने से होकर जाता तो वे ऐसे खड़ी रहतीं जैसे कि रब्बड़ का बना साँप, चाबी देने पर चल रहा हो! वे सोचतीं कि हम तो शिव बाबा की हो चुकी है और इसे कुछ हानि भी नहीं पहुँचा रही है तो ये हमारे साथ क्यों शत्रुता करेगा? कभी-कभी भूत भी आते परन्तु यज्ञ -वत्सों के योग-बल एवं पवित्रता-बल के सामने वे टिक न पाते । वे कुछ ही समय में अब इस बसेरे को छोड़कर भाग गये। सच है कि जिन देवियों ने अब काम-क्रोधादि विश्व-व्यापी भूतों पर विजय प्राप्त करने का प्रबल पुरुषार्थ किया था, जिन्होंने मन को निर्जन परमधाम के वासी परमपिता परमात्मा शिव में एकटिक स्थित करने का अभ्यास साधा था, जिन्होंने साँपों से भी अधिक विषैले, अर्थात् काम रूपी विष के मतवाले मनुष्यों के प्रहारों के सामने भी हार नहीं मानी थीं, वे अब इन साँपों से अथवा यहाँ के सुनसान वातावरण से क्यों डरतीं? उन्हें तो यहाँ का एकान्त एक परमपिता परमात्मा के अन्त में स्थित होने के लिए बहुत ही अनुकूल लगा और योग तपस्या के लिए बहुत ही प्रिय लगा।

उन दिनों आबू में गेहूँ का राशन था। यहाँ हरेक के लिए गेहूँ का आटा पूरी मात्रा में नहीं मिलता था बल्कि कुछ मक्कई और बाजरे का आटा भी

साथ लेना पड़ता था। यहाँ चावल भी बहुत ही हल्की किस्म के थोड़े-से ही मिलते थे। यहाँ के पानी में भी लवण तथा खनिज अधिक था और वायु में भी खुश्की थी। पानी भी बहुत भारी था। अत: खान-पान और जलवायु के अनायास परिवर्तन के रूप में भी एक परीक्षा यज्ञ-वत्सों के सामने आई।

यज्ञ-वत्सों में प्राय: ऐसे थे जिनका शारीरिक जन्म धनवान घराने में हुआ था और जो लाड़ और नाज़ों से पले थे। फिर जब यज्ञ-वत्सों ने अलौकिक जन्म लिया था, अर्थात् ईश्वरीय ज्ञान द्वारा परमात्मा को परमपिता के रूप में तथा ब्रह्मा बाबा को अलौकिक पिता के रूप में अपनाया था, तब इस ईश्वरीय यज्ञ में उनका जो लालन-पालन अथवा भरण-पोषण हुआ था, वह बहुत ही सात्विक और उच्च था। सिन्ध में बाबा ने उन्हें जिस प्रकार खिलाया-पिलाया था, जैसी उनकी संभाल की थी, जिस प्रकार उनके स्वास्थ्य और सुख की सामग्री जुटाई थी, वैसा स्नेह और सुख सारे कल्प में कोई भी लौकिक पिता नहीं दे सकता। केवल अब ही की यह परीक्षा यज्ञ-वत्सों को सम्पूर्ण और अधिकाधिक सहनशील बनाने के लिए आई थी। परन्तु प्रकृति को अधीन करने की जो शिक्षा उन्हें मिली हुई थी, उस शिक्षा के बल से उन्होंने क्षुधा-तृष्णा को तथा प्रतिकूल जलवायु से आई कठिनाई को भी पार किया क्योंकि नित्य ज्ञानामृत मिलने से उन्हें जो खुशी मिली थी, उस खुशी रूपी खुराक के होते हुए वे अल्पाहारी तो वैसे ही हो गए थे और हर प्रकार की परिस्थिति को सहज ही लाँघ जाने की ट्रेनिंग भी उन्हें मिली ही हुई थी। एक बार कराची में शिव बाबा ने यज्ञ-वत्सों को लगातार १५ दिन तक केवल बाजरी का ढोढा और छाछ ही लेने का निर्देश दिया था। यहाँ तक कि जो वत्स बीमार थे, उन्हें भी कहा गया कि वे भी इसी भोजन पर रहें, यही भोजन उनके लिए औषधि अथवा अमृत का काम देगा। तब किसी-किसी यज्ञ-वत्स के मन में यह संकल्प उठा था कि बीमार बहनें अथवा अस्वस्थ भाई बाजरे की रोटी और छाछ पर कैसे निर्वाह कर सकेंगे? वे तो इस आहार पर और अधिक बीमार पड़ जायेंगे।

परन्तु बीमार कन्याओं-माताओं तथा भाइयों ने निस्संकल्प होकर तथा सम्पूर्ण निश्चय से शिव बाबा द्वारा बताये उस भोजन को 'ब्रह्मा-भोजन', 'वैष्णव-भोजन' अथवा 'यज्ञ-प्रसाद' की भावना से लिया था। सभी को उसके परिणाम से बड़ा सन्तोष हुआ था क्योंकि उनका स्वास्थ्य दिनोंदिन अच्छा होता गया था। अत: उनके निश्चय में वृद्धि हुई थी। तब उनके मन ने दृढ़तापूर्वक यह पाठ प्रैक्टीकल रीति से पढ़ लिया था कि शिव बाबा कल्याणकारी तो है ही, उन द्वारा बताई किसी भी आज्ञा पर चलने से कल्याण निश्चय है, उसमें अकल्याण की बात सोचना मानवी बुद्धि की सरासर भूल है। अत: जो परिस्थिति सामने आई थी, उसमें भी सभी ने कल्याण ही माना।

यज्ञ-वत्स मन ही मन समझते थे कि इसमें भी हमारे पुरुषार्थ की अथवा शिक्षा की ही ज़रूर कोई बात छिपी है। उन्हें मालूम था कि योगी के सामने निन्दा-स्तुति, जय-पराजय, हानि-लाभ, सर्दी-गर्मी, क्षुधा-तृष्णा, अमीरी-ग़रीबी आदि के रूप में परीक्षाएँ आती हैं परन्तु सच्चा योगी प्रभु-आश्रित होकर, एक प्रभु के याद ही के बल और भरोसे पर उन सभी को हँसते- हँसते पार कर लेता है। अत: यद्यपि खान-पान तथा जलवायु के इस परिवर्तन ने कई-एक यज्ञ-वत्सों के स्वास्थ्य पर थोड़ा प्रभाव डाला था परन्तु प्राय: सभी ने अपने तन द्वारा तथा प्रकृति के तत्वों द्वारा आई इन कठिनाइयों को खुशी-खुशी पार किया। इस परिस्थिति में यज्ञ-वत्सों ने एक-दूसरे के लिए स्नेह और त्याग की भावना को प्रदर्शित किया। जिन वत्सों का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था, उनके लिए दूसरे वत्स स्वेच्छा से अच्छे गेहूँ का आटा तथा चावल, जो भी अस्वस्थ अथवा वृद्ध वत्सों के अनुकूल हों, छोड़ देते और स्वयं मकई या ज्वार के आटे की रोटी खाकर अथवा बहुत ही कम भोजन करके भी गुज़ारा करते थे।

विभिन्न प्रकार की आसक्तियों का त्याग

संसार के लोगों में कई प्रकार की आसक्तियाँ होती हैं। साधारणतया,

वे जहाँ जन्म लेते हैं, उस स्थान को, जिनके साथ उनके दैहिक नाते या उठना-बैठना होता है, उन रिश्तेदारों तथा सम्बन्धियों को, जो उनके खान-पान की आदतें या रीति- रस्में होती है उनको और धन-पदार्थों को वे छोड़ना नहीं चाहते, चाहे उनको छोड़ने से जन-जन का कल्याण ही क्यों न हो सकता हो? परन्तु योगी का तो लक्ष्य ही सर्व आसक्तियों का त्याग, कदम-कदम पर सीखना और जीवन को बदलना, आगे बढ़ना, स्वयं को मुड़ने के योग्य बनाना तथा निस्संकल्प होकर हर परिस्थिति को प्रभु के सदके पार करना होता है। इसलिए यज्ञ-वत्स, जिनका लक्ष्य ही पुरानी आदतों और संस्कारों को मिटा कर, अब ईश्वरीय ज्ञान और योग के साधन से नये, सतयुगी, दैवी संस्कारों को बनाना था, वे अपने-आपको बदलते गए। अत: इस नये वातावरण में, उन्होंने शीघ्र ही स्वयं को नये प्रकार के खान-पान तथा जल-वायु के अनुकूल परिवर्तित कर लिया। सिन्ध देश, सिन्ध के स्वजन-परजन तथा कारणे-अकारणे उनसे छूट ही गए थे और अज्ञान-काल की अवस्था के रीति-रिवाज़ भी छूट गए थे, अत: अब नये, दैवी परिवार में, नयी बातें सुनते, नये संस्कार, नई मर्यादाएँ अपनाते, पुरानी आसक्तियाँ तथा आदतें छोड़ते और नित्य नया जन्म लेते वे आगे बढ़ रहे थे।

यज्ञ-माता सरस्वती की देग की परीक्षा भी इन्हीं दिनों हुई थी। जैसा कि श्रीमद्‌भागवत् आदि ग्रन्थों में एक आख्यान है कि जब पाण्डव वन में थे तो एक दिन द्रौपदी की देग में एक ही पत्ता बच रहा था, तब प्रभु ने ही कौतुक किया था, क्षण-भर के लिए परीक्षा की स्थिति में डालकर फिर कमाल कर दिखाया था, वैसी परिस्थिति भी यज्ञ-वत्सों को सभी प्रकार से अनुभवी बनाने तथा एक रस अवस्था में स्थित करने के लिए अतीव अल्प-काल के लिए आई थी। जैसे समुद्री जहाज के डोलने पर जहाज पर के चूहे जहाज को छोड़कर भागने लगते हैं तथा जहाज पर के अन्य डरपोक जीव उड़ने लगते हैं, वैसा ही स्वयं प्रभु ने इस ज्ञान-स्टीमर को एक बार

जोर से हिलोरा दिया ताकि इस स्टीमर में घुसे हुए कुछ मन-मौजी जीव, जोकि किसी मंजिल पर जाने के लिए नहीं, बल्कि किसी आसक्ति के वश स्टीमर पर सवार और भार थे, वे इसे हिलता देखकर इसे छोड़ जायें। इस प्रकार, वह चतुर प्रभु, जो ही इस ज्ञान-स्टीमर का कप्तान अथवा खेवनहार था, इस स्टीमर में बैठे यात्रियों को हँसाता-बहलाता, अनुभवी बनाता, बीच - बीच में कौतुक करता, भँवर और चट्टानों, लहरों और तूफ़ानों से सभी को भव सागर से पार कराता हुआ लक्ष्य की ओर ले जा रहा था।

अब तो हमारे जीवन का यह नया दौर था और एक सुहावना नया जमाना था जिसमें कि हम अतीन्द्रिय सुख प्राप्त कर रहे थे, आध्यात्मिक अनुभवों से भी जीवन को संजो रहे थे तथा अलौकिक जन-सेवा के लिए तैयार हो रहे थे। अत: हमारा मनवा बोल रहा था :–

बुद्धि की तार जुट गई है जिसकी ईश से,
विकारों से वह हरगिज़ हराया न जाएगा।
रोशन किया चिराग उस शिव ने अब यह,
फूँकों से यह चिराग बुझाया न जायेगा।।

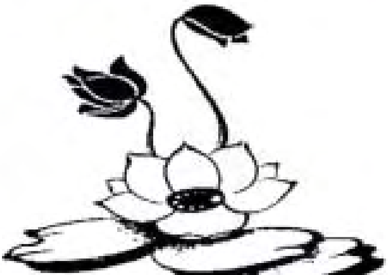

सोचा था क्या......!

ब्रह्माकुमारी चन्द्रमणि जी, जो कि ज्ञान सरोवर, आबू पर्वत की संचालिका थी, जिन्होंने अभी कुछ समय पहले ही शरीर छोड़ा है, वे इस बारे में लिखती हैं:—

''ईश्वरीय विद्या-अध्ययन के इस अलौकिक जीवन में सभी यज्ञ-वत्स यह समझ कर चल रहे थे कि अब जबकि हम प्रभु के हो चुके हैं, प्रभु हमें मिल गए हैं और उससे डायरेक्ट (Direct) हम पढ़ रहे हैं तथा लालन-पालन भी ले रहे हैं, तो अब हमारे लिए संसार में करने-योग्य कोई कार्य नहीं रहा, बल्कि अब तो ईश्वरीय विद्या प्राप्त करते हुए तथा योग तपस्या करते हुए हमें तो अपने देह रूप कलेवर को छोड़कर परमधाम को जाना है। अब तो हमारे लिए बस केवल यही एक कार्य बाकी रह गया है। अब प्रभु-प्राप्ति हो गई है और प्रभु के मधुर चरित्रों के रसास्वादन का सौभाग्य भी हमें प्राप्त हो गया है, और हम अतीन्द्रिय सुखमय जीवन में ही चल रहे हैं तो फिर अब और क्या दौड़-धूप करना बाकी है?

परन्तु अब यहाँ आबू में आकर हमें ऐसा आभास हुआ कि अब इस अलौकिक जीवन में कोई और अलौकिक पार्ट शुरू होने वाला है। हमें ऐसा महसूस हुआ कि अब इस अद्‌भुत सृष्टि-नाटक में यह सीन ड्राप (Drop) होकर दूसरे दृश्य के लिए शीघ्र ही पर्दा उठने वाला है और कोई कौतुक होने वाला है। हमें यह भान इसलिए हुआ कि प्यारे बाबा अब हमें नित्यप्रति बताया करते कि डाक्टरों, वकीलों, जजों, व्यापारियों आदि-आदि को यह ज्ञान किस प्रकार समझाना है। यज्ञ में तो जज और वकील थे ही नहीं, अतः हमने सोचा कि अब शायद बाबा जनता की सेवा के

लिए यज्ञ से बाहर भेजना चाहते हैं। यों इस विषय में बाबा सिन्ध में भी यज्ञ-वत्सों को प्रशिक्षण दिया करते थे परन्तु अब तो प्रात:काल की ज्ञान-मुरली के मधुर स्वर इसी दिव्य सेवा की रीति को ही खोला करते थे। साथ ही बाबा यह भी कहा करते थे कि — ''बच्ची, यह जो ज्ञान आपने प्राप्त किया है, यह बहुत ही अद्भुत और अनमोल है, यह प्राय: लुप्त हो चुका है। जब इस ज्ञान को आप दूसरों को सुनायेंगी तो वे बहुत ही खुश होंगे और प्रभु पर न्योछावर होंगे। बच्ची, इस ज्ञान से आप छोटी-छोटी कन्याएँ भी योग स्थित होकर बड़े-बड़े दिग्गज विद्वानों को भी मात दे सकेंगी और आज जो लोग स्वयं को ही शिव माने बैठे हैं अथवा आत्मा को ही परमात्मा समझे बैठे हैं, उन्हें आप प्रभु के आगे झुका सकेंगी। आप ही इस विश्व-ड्रामा में नर-नारियों को घोर अज्ञान-निद्रा से जगाने की निमित्त बनी हुई हैं। बच्ची, क्या आपके कानों में भक्तों की पुकार सुनाई नहीं दे रही? आप ज़रा एकान्त में जाकर बैठो तो आपको मालूम होगा कि भक्त आपको पुकार रहे हैं कि —'हे जग-जननी, हे अम्बे, हे शक्ति माता, हम तुम्हारे लाल चिरकाल से तुम्हें पुकार रहे हैं! हे शीतला मैया, अब तो हमें शान्ति और शीतलता का मन्त्र दो। हे ज्वाला देवी, हे ज्योतियों वाली माँ, अब तो हमारी बुझी ज्ञान-ज्वाला को जगाओ, अब तो हमारे बुझे दीप को जलाकर हमारे अंधकार को मिटाओ! माँ, हम तुमको कब से पुकार रहे हैं और माया से हार मानकर तेरी जड़-यादगारों के द्वार पड़े हैं, हम नतमस्तक होकर, आत्म-निवेदन करते-करते थक-से गए हैं तथा परिक्रमा कर-करके निराश-से हुए बैठे हैं! बोलो माँ, अब तो अपने लालों को गिराने से थामकर, हाथ पकड़कर उठा लो, अब तो हमारी पुकार सुन, हमारी बलि स्वीकार करो!'' बाबा के इस प्रकार के वाक्यों से यज्ञ-वत्सों को ऐसा समझ में आता था कि अब यज्ञ-स्थल को छोड़कर ग्राम-ग्राम, नगर-नगर, गली-गली में प्रभु-भक्तों की सेवा करने जाना पड़ेगा।

प्रेम और ज्ञान में युद्ध

ऐसा सोचकर यज्ञ-वत्सों को एक सैकण्ड के लिये यह संकल्प आता कि क्या हमें अपने प्यारे ब्रह्मा बाबा और शिव बाबा से बिछुड़ना पड़ेगा? हम तो ज्ञान-सागर शिव बाबा की ज्ञान-मुरली पर न्योछावर होकर यहाँ आई थीं। अरे, जिसके लिये हमने संसार को छोड़ा और दैहिक सम्बन्धियों से मुख मोड़ा और तन-जन के हर प्रकार के विघ्न सहे, अत्याचारों का सामना किया, स्वाद और स्वजनों से किनारा किया, क्या अब उस ज्ञान-मुरली को सम्मुख सुनने से हम वंचित रहेंगीं और क्या उस अति प्यारे आँखों के तारे, दिल के सहारे बाबा से हमें दिनों और महीनों दूर रहना पड़ेगा? नहीं, नहीं! यह हमें किसी भी कीमत पर स्वीकार नहीं है। दूसरे ही क्षण 'ज्ञान', उन्हें ईश्वरीय कर्त्तव्य की पहचान देकर कहता —''अरी गोपियों, निस्सन्देह तुम प्रभु-प्रेम में पली हो, तुमने उस प्रभु पर सब-कुछ न्योछावर किया है, परन्तु तुमने उस प्रभु से, वृद्ध पिता-श्री के तन द्वारा इतनी अनमोल सेवा ली है, इतने वर्षों तक शिक्षा-प्रशिक्षा तथा लालन-पालन लिया है, तब क्या तुम उस प्रभु से अलौकिक सुख पाकर उसे स्वयं तक सीमित रखोगी ? क्या तुम उस ज्ञान-सागर से ज्ञान का खजाना पाकर, दूसरों को उसमें कुछ भी दान नहीं करोगी? प्रभु ने स्वयं को तुम वत्सों के आगे प्रत्यक्ष किया है, तब क्या तुम उस गुप्त प्रभु को जन-मन के आगे प्रख्यात नहीं करोगी? यदि तुम, जिन्होंने कि प्रभु को पाया है और उससे पवित्रता और अतीन्द्रिय सुख का वरदान लिया है, संसार के लोगों को ईश्वरीय सन्देश नहीं दोगी! तो क्या स्वयं प्रभु, पिता-श्री के वृद्ध शरीर में आकर गली-गली, नगर-नगर में सोये हुए लालों को जगाने जायेंगे? गोपियों, माना कि तुमने प्रभु को पहचाना है परन्तु क्या दूसरों को उस प्रियतम की पहचान नहीं दोगी ? क्या आप उस प्रभु-प्रेम में ऐसी खोयी रहोगी कि भारत के दु:खी नर-नारियों पर दया नहीं करोगी?....'' इस प्रकार गोप-गोपियों अथवा यज्ञ-वत्सों के मन रूपी मैदान में प्रेम और ज्ञान

के बीच संग्राम चलता था।

इधर बाबा की मुरली में प्रतिदिन यही शिक्षा स्पष्ट रूप से मिलने लगी कि –''बच्ची, आपने ज्ञान तो पाया ही है, चौदह वर्ष तक आपको योग-तपस्या भी कराई है, अब आप ज्ञान-गंगाएँ बनो और अपनी योग-शक्ति का जलवा दिखाओ। जो सीखा है उसका सबूत (प्रमाण) दो। जिसने इस ज्ञान को स्पष्ट रूप से सीखा होगा वह दूसरों को भी इसे स्पष्ट रूप से समझा सकेगा। अत: अज्ञात वास अथवा वनवास का समय पूरा हुआ, होस्टल में रहने का समय भी समाप्त हुआ। संसार में कोई भी पार्ट सदा एक-जैसा नहीं चलता। अब आप सोये हुओं को जगाओ।''

बाबा कहते –''बच्ची, यह अश्वमेध अविनाशी ज्ञान-यज्ञ है। इस अश्वमेध यज्ञ से घोड़े निकलेंगे और विश्व की परिक्रमा करेंगे। शास्त्रों में इस बात का धुँधला-सा उल्लेख है कि अश्वमेध यज्ञ से घोड़े निकले थे और उन्होंने राजा विराट् को जीता था। वह आपके कर्त्तव्य का ही तो गायन है। आप ही तो इस अश्वमेध यज्ञ से निकले हैं। अत: अब आप जाकर ज्ञान की शंख-ध्वनि करो और दिग्विजय करो। आपको यह तो ईश्वरीय वरदान मिला ही हुआ है कि अन्ते विजय आपकी होगी। आपकी ज्ञान-गजगोर से भारत की जनता जागेगी और एक दिन आयेगा जब आपकी उच्च धारणा का जय गान गायेगी।''

कभी बाबा कहते –''बच्ची, बाबा आये हैं दैवी घराने (Dynasty) की पुन: स्थापना करने के लिये। अन्य जो धर्म- स्थापक अपना-अपना धर्म-वंश स्थापित करते हैं, उनके घराने की आत्मायें तो परमधाम से आ-आकर साकार होती हैं और इस प्रकार उनके वंश की वृद्धि होती है परन्तु दैवी धर्म की पुन: स्थापना का कार्य उनके कार्य से न्यारा है। आपके दैवी धर्म की तो सभी आत्मायें इस पृथ्वी पर हैं परन्तु स्वयं को भूलकर विकारी एवं पतित बन चुकी हैं। अत: आपने तो इन्हें अपने धर्म और कुल की स्मृति दिलाने का कार्य करना है और उन्हें पावन बनाकर फिर से देवी-

देवता बनने का लक्ष्य देना है। बच्ची, यह तो सतयुगी दैवी स्वराज्य स्थापित हो रहा है, उसके लिए राजा-प्रजा सभी देवी-देवता ही चाहिए। उस आने वाले स्वराज्य में राजा-महाराजा वे बनेंगें जो अपनी प्रजा बनायेंगे, अर्थात् जो दूसरी आत्माओं को भी ईश्वरीय ज्ञान द्वारा पतित से पावन अथवा मनुष्य से देवता बनाने की अलौकिक सेवा करेंगे। ऐसे सर्विसएबल, (Serviceable; सेवाधारी) बच्चे ही मुझे अति प्रिय हैं। यों तो आप सभी मुझे प्रिय हैं परन्तु आप में से ज्ञानी आत्मा तो मुझे अति प्रिय है क्योंकि ज्ञानी दूसरों को भी अपने समान बनाने की उच्च सेवा करता है। अत: बच्ची, आपने जो पढ़ा है, अब वह दूसरों को पढ़ाओ ...।'' इन युक्ति पूर्ण मधुर-मुरलियों से बाबा सभी वत्सों को अब ईश्वरीय सेवार्थ जाने के लिये प्रेरित करते। इन महावाक्यों को सुनकर तथा समय और परिस्थिति देखकर यज्ञ वत्स समझते थे कि अब ईश्वरीय प्रेम के मीठे बन्धन को न चाहते हुए भी ढीला छोड़ना ही पड़ेगा और अब कर्त्तव्य क्षेत्र पर उतरना ही होगा। जिन्हें एक घड़ी का बिछुड़ना भी पहले असह्य था, अब उनके मन में आवाज उठी कि अब ईश्वरीय सेवार्थ, उस अति प्यारे पिता द्वारा पढ़ी विद्या की झलक लोगों को देने के निमित्त अथवा उस सुखदाता, सर्व के सहारे प्रभु का यह सन्देश देने के लिये जाना ही होगा :—

पाप की गठरी शीश पे आय गया है काल।
माया रावण कर रहा आज तुझे बेहाल।।
आज तुझे बेहाल, स्वयं शिव आया है।
दर-दर भटक रहे मानव को सहज योग सिखाया।।
गृहस्थ जीवन कमल-पुष्प सा वह आज बनाते।
परमपिता शिव ज्ञान-योग की राह दिखाते।।
रात अंधेरी दु:ख की रही कैल की बीती।
ज्योति रूप भगवान् से अब कर लीजे प्रीति।।
अब कर लीजे प्रीत ज्ञान-सागर सुखकारी।

रचकर दैवी सृष्टि सुख की करें तैयारी॥
आत्माभिमानी बनाय 'मन्मनाभव' सिखलाते।
परमपिता शिव ज्ञान योग की राह दिखाते॥

जनता की रूहानी सेवार्थ यज्ञ-वत्सों की परिपक्व अवस्था

ब्रह्माकुमारी ध्यानी जी, जोकि वर्तमान समय अम्बाला में ईश्वरीय सेवा में तत्पर हैं, लिखतीं हैं कि –"अब ईश्वरीय सेवा के लिए बाहर जाने का समय आ गया लगता था। शिव बाबा ने भारत जाने का आदेश ईश्वरीय सेवार्थ ही तो दिया था।"

इधर ईश्वरीय विद्या को धारण करते हुए तथा ईश्वरीय स्मृति में लवलीन रहते हुए यज्ञ-वत्स वैसे ही परिपक्व हो गये थे जैसे कि एक बीज पहले अंकुरित होकर कली और फूल के बाद फल रूप धारण करता है आर तब बोने वाले की तथा जनता की सेवा में काम आता है। ईश्वरीय विद्या के अध्ययन से मनुष्य के जीवन में जो नम्रता, प्रेम, पवित्रता, हर्ष, अनासक्ति-भाव और दूसरों के प्रति जो करुणा और कल्याण-भावना जागृत होनी चाहिए, वह अब यज्ञ-वत्सों के जीवन में प्रचुर मात्रा में अथवा परिपक्व अवस्था में झलक दे रही थी। अत: अब दूसरे नर-नारी यज्ञ-वत्सों की इन दिव्य धारणाओं का रसास्वादन करके अपने जीवन में दिव्यता ला सकते थे। अब उनकी स्थिति ऐसी हो चुकी थी कि उन्होंने कर्मेन्द्रियों को जीत लिया था। अब मुख का विषय अर्थात् स्वाद उनके मुख को द्रवीभूत या लालायित नहीं कर सकता था। भोजन के स्वाद और चस्कों के प्रति उनका मन अनासक्त हो चुका था और वे सफ़ेद पोशाक अथवा सादा जीवन तो बहुत पहले से अपना चुकी थीं। योगियों के समान अब उनका तन-मन शीतल हो चुका था और संसार के जन -धन में उन्हें कोई आकर्षण अथवा रस अनुभव नहीं होता था। नाम-रूप के प्रति अर्थात् देहों और देह-धारियों के प्रति उनका राग भी मिट चुका था तथा विभिन्न घरों से आई हुई ढाई-

तीन सौ कन्याएँ, माताएँ इतने वर्षों तक इकट्ठी रहकर भाव-स्वभाव, आवेश और द्वेष की भट्ठी से भी स्वच्छ होकर निकल चुकी थीं। लोक-लाज, निन्दा, भय आदि की परीक्षाओं को तो वे बहुत पहले सिन्ध में ही पार कर चुकी थीं। स्त्री चोले में रहते हुए भी आत्मा-निश्चय के अभ्यास द्वारा वे स्त्रीत्तव का भान भी काफी हद तक मिटा चुकी थीं। अत: अब उनकी ऐसी अवस्था हो चुकी थी कि वे नरकमय, कलियुगी, विकारी सृष्टि के लोगों के पास जाकर उन्हें प्रभु-सन्देश देते हुए, विकारी लोगों के संग के रंग से स्वयं सुरक्षित रह सकती थीं और उनको अपनी धारणाओं तथा स्थिति से प्रभावित करके उनके जीवन में भी परिवर्तन ला सकती थीं। बाबा और ममा के दिव्य जीवन की झलक अब ज्ञानवान् यज्ञ-वत्सों के जीवन में भी दिखाई देती थी।

जैसे सागर का जल सूर्य के प्रकाश और ताप के फलस्वरूप उड़ कर आकाश में मेघ रूप धारण कर पर्वतों पर मँडराता है और फिर मैदानों में जाकर वर्षा करता तथा भूमि को हरा-भरा करता है और जन-जन को सुख और खुशी देता है, वैसा ही समय अब आ गया था। कराची में सागर-तट पर ज्ञान-सूर्य बाबा ने ज्ञान-सागर द्वारा यज्ञ-वत्सों की रचना की थी, वे ज्ञान-जल से भरे हुए बादल अब आबू पर्वत पर आ गये थे। ऐसा लगता था कि अब वे शीघ्र ही बरसेंगे और विकारों से तप्त भारत को शीतल एवं हरा-भरा करने की सेवा पर तत्पर होंगे।

ईश्वरीय सेवा के लिए प्रशिक्षण

ब्रह्माकुमारी शान्तामणि जी, जो कि वर्तमान समय शान्तिवन, आबूरोड, की संचालिका हैं, लिखती हैं कि — ''यों तो बाबा ने हैदराबाद तथा कराची में भी इस बात का प्रशिक्षण दिया था कि नये जिज्ञासुओं को कैसे समझाना है और क्या समझाना है। विशेषकर कराची में बाबा ने चार प्रकार से मनुष्य- आत्माओं की ज्ञान-सेवा करने की ट्रेनिंग दी थी। एक तो बाबा ने 'रूप' और 'बसन्त' के बीच संवाद बनाने अथवा ब्रह्माकुमारी और

'भूला-भाई' के बीच वार्तालाप बनाने की ट्रेनिंग दी थी। मनुष्य के जीवन में ईश्वरीय विद्या की अथवा स्वयं को जानने (Self-Realisation) की कितनी आवश्यकता है, 'पवित्रता रूपी धर्म का पालन कितना ज़रूरी है', 'आत्म-निश्चय' के बिना 'मनुष्य-जीवन कैसे पशु-तुल्य अथवा कौड़ी-तुल्य है, 'आने वाले महाविनाश से पहले ही भविष्य के लिये तोफा-तोशा बनाना कितना आवश्यक है', 'अन्ध-श्रद्धा पर आधारित भक्ति से मनुष्य कैसे पतित होता आया है; —''ऐसे-ऐसे विषयों पर संवाद बनाये गये थे। ये संवाद अथवा वार्तालाप छपवा कर अथवा साइक्लोस्टाइल करवा कर मन्त्रियों तथा अन्यान्य व्यक्तियों को निःशुल्क ही भेजे गये थे। इनसे यज्ञ-वत्सों को एक प्रकार से यह ट्रेनिंग मिल गयी थी कि भूले भाई अथवा अज्ञानियों द्वारा कौन-सा प्रश्न पूछने पर क्या उत्तर दिया जाय। जिज्ञासुओं के प्रश्नों को सुनकर उन्हें ईश्वरीय ज्ञान समझाने की रूप-रेखा स्पष्ट कर दी गयी थी। दूसरे, 'मन अथवा विकारों पर विजय कैसे प्राप्त करें?',(How to control Mind ?) 'जीवन की पहेली (The Puzzle: What am I ?) को हल करने से कैसे विश्व के स्वराज्य की चाबी हमारे हाथ लग सकती है?', 'आत्म-ज्ञान और परमात्मा-ज्ञान में क्या अन्तर है?', 'भारत का प्राचीन, ऊँचे से ऊँचा योग क्या है', 'हठयोग कर्म-संन्यास तथा सहज राजयोग सन्यास में क्या अन्तर है?', 'एक सेकण्ड में मन को कैसे वश में किया जा सकता है?', 'विश्व का अनादि वाईस्कोप अथवा ड्रामा कल्प-कल्प कैसे फिरता है?', 'आने वाली महाभारी महाभारत लड़ाई कैसे एक गुप्त वरदान है और उसके पीछे (Back-bone) कौन है?' ....आदि-आदि विषयों पर भाषण करने की ट्रेनिंग भी दी जा चुकी थी। इसके अतिरिक्त ग्रामोफोन रेकार्ड के गीतों को बजाकर उनका अलौकिक एवं दिव्य अर्थ यानी आत्मिक दृष्टिकोण से अर्थ करने का अभ्यास भी कराया जा चुका था। इससे यह शिक्षा मिली कि कोई व्यक्ति यदि लौकिक अर्थ में भी कोई बात करे तो यज्ञ-वत्स उस बात को मोड़ कर उसे आध्यात्मिक विषय बना लेते

। उदाहरण के तौर मान लीजिये कि एक गीत में यह पद है कि – ''जब तुम आये तो खुशियाँ भी आई, खुशियाँ भी आई, खुशियाँ भी आई ....।'' गाने वाले ने चाहे इसे लौकिक अर्थ से गाया हो परन्तु अब इसका आत्मिक दृष्टिकोण से यहाँ यह अर्थ लिया जाता कि – ''आत्मा परमपिता परमात्मा को कहती है कि 'हे बाबा', जब संसार में धर्म-ग्लानि हुई और आप आये तो हमाने मन की खुशी का ठिकाना न रहा ...'' इस प्रकार के अर्थ-अभ्यास से यज्ञ-वत्सों को यह ढंग आ गया कि वे मनुष्यों की सांसारिक बातों को मोड़ कर उन्हें भी आत्मिक चर्चा का रूप दे सकते थे और संगीत को लेकर उसका ऐसा कल्याणकारी अर्थ करके मनोरंजक तरीके से उन्हें ईश्वरीय ज्ञान दे सकते थे। इसके अतिरिक्त, 'कल्प वृक्ष', 'सृष्टि- चक्र', 'रुद्रमाला' और 'वैजयन्ती माला' के चित्रों पर सृष्टि के आदि-मध्य-अन्त के भेद समझाने, ज्ञान, भक्ति, वैराग्य के रहस्य स्पष्ट करने, परमपिता परमात्मा की जीवन-कहानी (Biography) और अवतरण का समय (Horoscope) समझाने की भी बाबा ने शिक्षा दी हुई थी। इसके अतिरिक्त लिट्रेचर (साहित्य) छपवा करके जनता में बाँटने की तथा विशिष्ट-व्यक्तियों को पत्र लिखकर उन्हें पत्र के साथ ईश्वरीय साहित्य भेंट करने की सेवा तथा विशेष-विशेष अवसरों पर उन्हें पत्र या तार भेजकर ईश्वरीय सन्देश देने की सेवा भी बाबा ने सिखा दी थी। इस विषय में ब्रह्माकुमार चन्द्रहास जी, जो कि वर्तमान समय माउण्ट आबू में ईश्वरीय सेवा में तत्पर हैं, लिखते हैं :–

''समाचार पत्रों तथा रेडियो द्वारा ब्रह्मा बाबा को यह तो समाचार मिलता ही रहता था कि कौन विशिष्ट व्यक्ति क्या कर रहा है अथवा संसार में कहाँ क्या हो रहा है। अत: बाबा उन विशिष्ट व्यक्तियों को पत्र या तार भिजवाकर उनका भी कल्याण करने, उन्हें ईश्वरीय सन्देश तथा शिक्षा से परिचित करने अथवा उन्हें ईश्वरीय यज्ञ के किसी कार्य में सहयोगी बनाकर उनका भाग्य भी उच्च बनाने की कोशिश करते थे।

उदाहरण के तौर पर जब ओम् मण्डली हैदराबाद (सिन्ध) में थी तो ब्रह्मचर्य व्रत लेने के कारण कई कन्याओं पर उनके पिता अत्याचार करते थे और उन्हें विकारी विवाह करने के लिये बाध्य करने की कोशश करते थे तथा कई पुरुष वासना के लिये अपनी पत्नी पर सितम ढाते थे। अत: अन्य लोगों को भी पवित्रता के ईश्वरीय आदेश से परिचित कराने के लिये तथा अन्य कन्याओं-माताओं के बचाव के लिये कुछ उपाय करने के लिये बाबा ने कुछ पत्र लिखवाये थे। उनमें से एक पत्र 'पशुओं पर होने वाले अत्याचार की रोकथाम की संस्था' (State Prevention Of Cruelty To Animals) की प्रधान (Miss. R. Piggot) को २३ जुलाई, १९३८ को भेजा गया था। उसमें बताया गया कि किस प्रकार १५ वर्षीय कन्या गोपी को उसके सम्बन्धियों ने एक कमरे में चार दिन ताले में बन्द रखा और उसे खाना नहीं दिया और उस कन्या के भाई ने उसे बहुत ही निर्दयता से मारा। इस प्रकार लिख कर प्रधान (मिस पिग्गट) को कहा गया कि पशुओं की तो बात एक ओर रही मनुष्यों पर देखो कितने अत्याचार हो रहे हैं! इसके साथ ही उसे सुझाव दिया गया कि मनुष्य-जाति पर हो रहे अत्याचारों की रोकथाम के लिये भी कोई कदम उठाना चाहिए और कि अगर उनकी संस्था केवल पशुओं पर होने वाले अत्याचार की रोकथाम के लिये ही कार्य करती है तो एक दूसरी संस्था बनानी चाहिए जो कि मनुष्य-जाति पर हो रहे अत्याचार की रोकथाम के बारे में कुछ ठोस कार्य करे।

महात्मा गाँधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य आदि-आदि के नाम पत्र, तार और प्रवचन

बाबा ने महात्मा गाँधी जी को वर्धा में तथा कविराज रवीन्द्रनाथ टैगोर जी को भी एक पत्र[1] से संलग्न करके दो ज्ञान-मुरलियों (प्रवचनों) की प्रतियाँ भेजी थीं। उन प्रवचनों में तत्कालीन परिस्थितियों पर तथा आने वाले

१. यह पत्र २७ अगस्त, १९३८ को भेजा गया था।

समय पर प्रकाश डाला गया था और वास्तविक स्वतन्त्रता कैसे प्राप्त हो सकती है तथा आत्मानुभूति (Self-Realisation) की कितनी आवश्यकता है और समाज में नारी का क्या स्थान होना चाहिए — इस बारे में भी ईश्वरीय महावाक्यों का उल्लेख था।

महात्मा गाँधी जी जिन दिनों सत्याग्रह, अनशन और सिविल नाफ़र्मानी आदि को अपना कर अंग्रेज सरकार के विरुद्ध आन्दोलन चला रहे थे, तब भी बाबा ने एक तार[१] महात्मा गाँधी जी के नाम भिजवाया था। उस तार की प्रति चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य जी को, आचार्य कृपलानी जी को तथा भोलाभाई देसाई जी को भी भेजी गयी थी। उस तार में लिखा था।कि —

"प्यारे गाँधी जी, अनशन और सिविल नाफ़र्मानी आदि हठयोग के विभिन्न रूप हैं।" ... पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति ईश्वरीय ज्ञान और दिव्य साक्षात्कार के बल से प्राप्त हो सकती है.... आत्मिक बल से ही विज्ञान - बल को जीता जा सकता है... वर्तमान समय धर्मग्लानि का समय है... अब परमपिता परमात्मा फिर से आदि सनातन देवी - देवता धर्म की स्थापना करा रहे हैं ...यह महाभारत युग है....!"

बाबा ने केवल भारत के राजनैतिक नेताओं तथा विशिष्ट एवं सामान्य लोगों को परमपिता परमात्मा के अवतरण की तथा सतयुग की हो रही स्थापना और कलियुग के होने वाले विनाश के बारे में सन्देश दिया बल्कि उन्होंने अंग्रेज सरकार के अधिकारियों को भी अभय होकर स्पष्ट शब्दों में यह सत्यता बताई ताकि कल को कोई यह उलाहना न दे सके कि प्रभु इस सृष्टि में आये परन्तु हमें सूचना भी न मिली और हमें उस परमपिता ने निमन्त्रण भी न दिया। इस कर्त्तव्य की पूर्ति के लिए बाबा ने इंगलैण्ड की प्रिंसेस एलिजाबेथ को बकिंघम पैलेस, लन्दन के पते पर भी पत्र भिजवाये। देखिये तो यज्ञ-माता द्वारा लिखवाये गये एक पत्र[२] में निम्नांकित पंक्तियाँ

१. यह तार ५ मई १९३९ को भेजी गई थी।

२. यह पत्र १६ मार्च १९३९ को 'ओम राधे' जी ने अपनी ओर से भेजा था।

कितना स्पष्ट संदेश दे रही है :—

'प्रिय बहन,

इस पत्र के साथ मैं आपको 'आत्मानुभूति' के विषय पर कुछ प्रवचन संलग्न करके भेज रही हूँ।

हमारे यहाँ के अनेक भाईयों और बहनों ने दिव्य दृष्टि द्वारा साक्षात्कार किया है कि निकट भविष्य में सृष्टि पर महासंकट की घड़ी आने वाली है। तब आत्मिक बल वाले लोग ही उस भयावह स्थिति का सामना कर सकेंगे और बच सकेंगे। आत्मिक बल — विज्ञान-बल अथवा अन्य सब प्रकार के बल से उच्च है और उन पर विजय पा सकने में समर्थ है। अभी जो विश्व-युद्ध होने वाला है, उसका परिणाम उन सभी के लिये निराशाजनक होगा जोकि आत्मानुभूति के लिए पुरुषार्थ नहीं करते और अपने सच्चे धर्म की रक्षा नहीं करते। आपको मालूम रहे कि पृथ्वी पर दैवी स्वराज्य की स्थापना का समय बस आने ही वाला है और मेरी जो ५ वर्ष की आयु वाले बच्चों से लेकर वयोवृद्ध लोगों की जो सेना है, वह इस कार्य के लिए तैयार हो रही है। इस अहिंसक सेना के विरुद्ध लोग बहुत शोर मचा रहे हैं।

प्यारी बहन, आप भी आत्मानुभूति तथा विश्व का दैवी स्वराज्य प्राप्त करने का पुरुषार्थ करो ....''

इस प्रकार, बाबा हरेक को आत्म साक्षात्कार करने, अपने-आपको जानने (Self-Realisation) तथा पवित्र बनने के लिए जगाते रहते। माता - जाति को तो वे विशेष प्रकार से प्रेरित करते थे क्योंकि वे कहते थे कि यदि वे स्वयं जाग कर दूसरों को जगाने का कार्य करें तो भारत का और विश्व का कल्याण हो सकता है। बाबा कहते थे कि माताओं के साथ तो बहुत अन्याय होता है परन्तु फिर भी कन्याएँ-माताएँ सदा त्याग के लिए तैयार रहती हैं। जब कन्या विवाह करके मायके से ससुराल जाती है, तब वह भी तो उसका एक प्रकार से मर कर दूसरा जन्म ही होता है। वह कन्या पिछले सम्बन्धियों को भूल अब नये सम्बन्ध जोड़ लेती है और अब मात-

पिता की बजाय पति तथा सास-ससुर के मत पर चलती है। ईश्वरीय ज्ञान लेने के लिए भी मनुष्य को मरजीवा बनना पड़ता है, अर्थात् दैहिक सम्बन्धियों को भूल कर अब परमपिता परमात्मा ही से सर्व सम्बन्ध जोड़ने पड़ते हैं और अब अन्य के मतों को छोड़ कर एक परमात्मा के मत पर चलना होता है। अत: कन्याओं-माताओं के लिए ईश्वरीय ज्ञान-प्राप्त करना सहज है क्योंकि उन्हें धन और पद का नशा नहीं होता है, और एक सम्बन्ध को छोड़ दूसरा तो उन्हें अपनाना ही पड़ता है।

बाबा कहा करते कि आज माता सभी के आगे घूँघट निकालती रहती है और झुकती रहती है और उसे समाज में संन्यासियों ने तथा गृहस्थियों ने बहुत ही निम्न स्थान दे रखा है। जो माता मनुष्य की प्रथम गुरु है, उस माता का आज तिरस्कार होता है। पुरुष उसे 'बांए पाओं की ऐड़ी' मानते हैं और उसे अपनी सम्पत्ति का वारिस भी नहीं मानते बल्कि जब चाहें उसे मार-पीट कर घर से निकाल देते हैं तथा दूसरा विवाह कर लेते हैं। किन्तु नारी को देखो, वह पति के मर जाने पर कितना रोती है। वह प्राय: दूसरा विवाह नहीं करती और कहीं-कहीं तो विधवा नारी पति की चिता पर बैठ कर सती भी हो जाती है। अत: नारी के लिए अब ज्ञान-चिता पर चढ़ना सहज है।

संन्यासी लोग नारी को जीते-जी विधवा बना कर घर छोड़ कर जंगल में चले जाते हैं और फिर उपदेश करते हैं कि पति ही नारी का गुरु भी है और परमेश्वर भी। इस प्रकार माताओं का तिरस्कार होता देखकर बाबा को उनके उत्थान के लिए सदा ध्यान रहता था। उन्होंने ममा अर्थात् ओम् राधे द्वारा अखिल भारतीय महिला समाज (All India Women Association) की प्रधान, 'रानी रजवारे' के नाम ग्वालियर में जो एक पत्र लिखवा कर भेजा, उसके निम्नलिखित अंश पढ़ने के योग्य हैं :-

"....प्रिय सखी, पति को पत्नी का 'गुरु' अथवा 'ईश्वर' कहा जाता है। परन्तु 'ईश्वर' तो निर्विकार और परम पवित्र है। तब क्या आज पति

निर्विकार होता है? 'गुरु' का कार्य तो परमात्मा का साक्षात्कार कराना अथवा आत्मानुभूति कराना होता है, परन्तु आज पति तो देह-अभिमान में फँसाता है। अत: स्पष्ट है कि आज का विकारी पति गुरु अथवा ईश्वर नहीं है। आप तो माता हैं। अब आप लक्ष्मी के समान बनो और नर-नारी को ज्ञानामृत पिलाओ! प्रिय सखी, अब जागो, स्वयं को पहचानो, उसके बिना जीवन ऐसा है कि जैसे अँधेरे में कूदना ...''

सन् १९३९ में एक अन्तर्राष्ट्रीय, सर्वधर्म सम्मेलन लंका में, कोलम्बो नगर में हुआ था। उसमें सभी धर्मों के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे। उस सम्मेलन का उद्देश्य विश्व में शान्ति स्थापित करने के तरीकों पर विचार करना था। तब बाबा ने उन धर्म-प्रचारकों को एक तार भिजवाई थी और पत्र[१] भी लिखवाया था, जिसका सारांश यह था कि —

''...जब तक विश्व का हरेक व्यक्ति स्वयं को नहीं जानता, अर्थात् आत्मानुभूति नहीं करता और आत्म-निश्चय-बुद्धि होकर कर्म नहीं करता तब तक विश्व में शान्ति का स्वप्न साकार नहीं हो सकता। वास्तव में धर्म एक है, वह है आत्मा का धर्म अथवा स्वधर्म। पवित्रता और शान्ति ही सच्चा धर्म है। आज जो अनेक धर्म हैं, उन्होंने तो कलह और लड़ाई-झगड़े पैदा किये हैं। जब तक मनुष्य आत्मा का अनुभव नहीं करता तब तक सही माने में वह इन्सान ही नहीं बल्कि हैवान है और जब तक वह हैवान है तब तक शान्ति हो नहीं सकती.....मैं आपको ईश्वरीय ज्ञान रूपी रत्नों का खज़ाना भेज रही हूँ। आप इसे पढ़ना....।''

राजाओं-महाराजाओं आदि को पत्र तथा ईश्वरीय-साहित्य

इस प्रकार बाबा सभी को ईश्वरीय ज्ञान द्वारा लाभान्वित करने का प्रयत्न निरन्तर करते रहते। उन्होंने जामनगर, जोधपुर, मण्डी आदि के महाराजाओं को भी पत्र[२] लिखवाये और उन्हें ईश्वरीय ज्ञान से सम्बन्धित चित्र भी

---

१. ये पत्र १ अगस्त १९३८ को भेजा गया था।

२. ये पत्र फरवरी और मार्च, १९४४ में भेजे गए थे।

भिजवाये, साहित्य भी भिजवाया तथा इस ईश्वरीय विद्यालय में आकर एक सप्ताह तक इसे सपष्ट रीति से समझने के लिए निमन्त्रण भी दिया। सभी के यहाँ से साहित्य तथा निमन्त्रण के पहुँच के पत्र भी आये, परन्तु ''कोटि-कोटि मनुष्यों में से कोइ विरला ही तो इस ईश्वरीय ज्ञान से लाभ उठाता है। बाकी सब तो आश्चर्यवत् होकर इसे पढ़ते और सुनते हैं'' — यह वाक्य तो श्रीमद्भगवत् गीता में स्पष्ट आये हैं।

बाबा ने तो 'ओम् राधे' जी द्वारा विभिन्न चेम्बर ऑफ कॉमर्स को, पारसी, ईसाई आदि-आदि सभी धर्मों की सभाओं को भी पत्र भिजवाये। विदेशों में भी विशिष्ट व्यक्तियों को बाबा ने ईश्वरीय निमन्त्रण तथा साहित्य भेजा और उनसे उत्तर भी आये परन्तु उन अभागों ने यह नहीं पहचाना कि यह तो सभी आत्माओं के परमपिता ने हमें 'स्वयं को जानने' और विश्व का स्वराज्य पाने के लिए अलौकिक निमन्त्रण दिया है। विदेश में बाबा ने विशिष्ट व्यक्तियों को पत्र में जो-कुछ लिखा उसका नमूना निम्नलिखित पत्रों में मिल जाता है ।..

लार्ड व्वाइड तथा लार्ड हैलीफेक्स को भेजे गये पत्र का सारांश

'प्रिय आत्मन्,

......हम आपको इस पत्र के साथ जो अनमोल ईश्वरीय साहित्य भेज रहे हैं, उसके अध्ययन से आप जान सकते हैं कि अब परमपिता परमात्मा एक साधारण मनुष्य के तन में अवतरित हुए हैं जिसका नाम उन्होंने 'प्रजापिता ब्रह्मा' रखा है। उस द्वारा वह ५००० वर्ष पूर्व की तरह विश्व को विकारों के पंजे से छुड़ाने का तथा सतयुगी सम्पन्न-सृष्टि की पुन: स्थापना का कर्त्तव्य कर रहे हैं। इधर गीता-युग की पुनरावृत्ति हो रही है और उधर ऐटॉमिक लड़ाई द्वारा निकट भविष्य में महाभारत-प्रसिद्ध वृत्तान्त दुहराया जायेगा।

आप यदि ध्यान से इस ईश्वरीय साहित्य का अध्ययन करेंगे तो

आपको विश्व के इतिहास के आदि-मध्य-अन्त का ज्ञान हो जायेगा, वर्तमान काल का भी यथार्थ बोध हो जायेगा और सम्भवत: आप अपने धर्म-पिता का साक्षात्कार भी कर सकेंगें...।

आपको मालूम रहे कि यह सृष्टि एक अनादि ड्रामा है जोकि हर ५००० वर्षों के बाद पुनरावृत्त होता है। आप भी इस विराट ड्रामा में एक ऐक्टर हैं....।

मैं आपको निमन्त्रण देती हूँ कि आप इस अनमोल अविनाशी ज्ञान को, बिना कौड़ी खर्चे, आकर स्पष्ट रीति से प्राप्त कीजिये.....।''

इसी प्रकार के पत्र-सिन्ध के गवर्नर, मुख्यमन्त्री तथा अन्य मन्त्रियों को और कराची के मेयर आदि-आदि को भी साहित्य-सहित भेजे गये थे। सिन्ध सरकार के ''राजनीतिक और विविध विभाग'' (Pulitical Miscellaneous Department) तथा अन्य विभागों के सचिवों को भी ऐसे पत्र लिखे गये थे। उन पत्रों के साथ 'महाभारी महाभारत लड़ाई' नाम की एक पुस्तक तथा सृष्टि रूपी चक्र का चित्र भी भेजा गया था।

भारत के वायसराय तथा इंग्लैंड के राजा और रानी के नाम पत्र

भारत के वायसराय लार्ड वेवल तथा उनकी पत्नी को भी साहित्य भेजा गया था। लार्ड वेवल की पत्नी ने लिखा कि —''मुझे आपका पत्र मिला, आपकी शुभ-चिन्ता के लिए धन्यवाद।'' इसी प्रकार वाशिंगटन में ब्रिटिश राजदूत को तथा देश-विदेश के अन्यान्य राजदूतों को भी सृष्टि-चक्र का आदि-मध्य-अन्त अंकित करने वाला चक्राकार चित्र और आने वाली महाभारी महाभारत लड़ाई के बारे में प्रकाश डालने वाली पुस्तक ईश्वरीय निमन्त्रण सहित भेजी गयी।

२ मई, १९४७ को जबकि भारत का राजनैतिक बटवारा नहीं हुआ था, तब इंग्लैंड की रानी ऐलिजाबेथ को तथा किंग जार्ज सप्तम को पत्र भेजे गये और उनके साथ सतयुग से लेकर कलियुग के अन्त और

संगमयुग के इतिहास को दर्शाने वाला 'कल्प वृक्ष' का चित्र भी संलग्न किया गया। इस पत्र में उन्हें लिखा गया है कि :—

''किंग जार्ज के रूप में प्रिय आत्मन्।

...... आपको मालूम होना चाहिए कि यह सृष्टि एक अनादि नाटक है जो कि हर ५००० वर्ष के बाद पुनरावृत्त होता है। आप भी इस वृहद नाटक के एक एक्टर हैं। क्या आप जानते हैं कि ५००० वर्ष पहले भी आपने इस तरह इंग्लैंड के राजा के रूप में इसी नाम तथा इसी शारीरिक आकृति से पार्ट बजाया था और ५००० वर्ष के बाद फिर आप अपना यह पार्ट दुहरायेंगे।

इस अनादि, पुनरावर्ती ड्रामा में, वर्तमान समय कलियुग के अन्त और सतयुग के आदि का संगम समय है। अब विश्व में कोई भी विकृत 'धर्म',जैसे कि हिन्दू धर्म, इस्लाम धर्म, बुद्ध धर्म, ईसाई धर्म....नहीं रहेगा। बल्कि अब सतयुग आयेगा जिसमें कि सबका केवल एक ही सच्चा दैवी धर्म अर्थात् पवित्रता रूप धर्म होगा !

भले ही आज ईसाई राष्ट्र यह समझे बैठे हैं कि ऐटम बमों आदि द्वारा वे विश्व का राज्य प्राप्त कर लेंगे परन्तु वास्तव में यह उनके मन की वृथा कल्पना है। वास्तव में इन बमों तथा मूसलों द्वारा उनका महाविनाश होगा। विश्व का सतयुगी दैवी स्वराज्य तो श्रीकृष्ण ही के हाथ में आयेगा।

क्या आपको मालूम है कि आपके इलाके में, भारत देश में, प्रजापिता ब्रह्मा और जगदम्बा सरस्वती द्वारा, ५००० वर्ष पहले की तरह सतयुग की पुन: स्थापना का दिव्य कार्य चल रहा है? गुप्त रूप में होने के कारण उन पर प्रान्तीय तथा आपकी विदेशी सरकार द्वारा अत्याचार हुए हैं। आप, जिनके शासन काल में परमपिता परमात्मा का अवतरण हुआ है, उस परमपिता के स्वरूप के बारे में अपरिचित हैं।

आपको मालूम रहे कि परमपिता परमात्मा, प्रजापिता ब्रह्मा के साधा-रण मानवी तन में अवतरित हो चुके हैं और उन्होंने राजसूय अश्वमेध

अविनाशी ज्ञान-यज्ञ की पुन: स्थापना की है जिसकी दिव्य शक्ति के परिणामस्वरूप विश्व के अनेक धर्मों से होने वाला कलह कुछ ही समय के बाद मिट जायेगा। अंग्रेज सरकार ने कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग को स्वराज्य देने की बात चलाकर फूट के बीज बो दिये हैं और स्वयं एक ओर खड़े होकर उन द्वारा एक-दूसरे को जलाने का तमाशा देखने की चाल चली है। उनका भी दोष नहीं है क्योंकि वे भी ५००० वर्ष पहले की तरह अपना पार्ट पुनरावृत्त कर रहे हैं! भविष्य में जो महाविनाश आयेगा उसमें पाश्चात्य राष्ट्रों के साथ यहाँ भारत में कलह करने वालों का भी विनाश होना अवश्यम्भावी है।... उसके बाद पृथ्वी पर सम्पूर्ण पवित्रता, सुख और शान्ति-सम्पन्न दैवी स्वराज्य प्रगट होगा। हम आपको कुछ साहित्य भेज रहे हैं जिसमें स्पष्ट रूप से इन रहस्यों को खोला गया है.....।''

देखिये तो किंग जार्ज तथा क्वीन ऐलिजाबेथ को सुनहरी कागज पर सुनहरी अक्षरों में, चित्रों सहित अलग-अलग भेजा गया यह पत्र कितना स्पष्ट है ! परन्तु फिर भी तो राज्य के नशे में चूर उन दोनों ने प्रभु को जानने की चेष्टा नहीं की।

मुहम्मद अली जिन्नाह , प्रेजीडेन्ट ट्रूमेन तथा नेपाल और उदयपुर के महाराजा आदि-आदि को पत्र

जब भारत का राजनीतिक बटवारा हुआ तब बाबा ने जगदम्बा सरस्वती जी द्वारा पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल मुहम्मद अली जिन्नाह को पत्र[१] भिजवाया। उसमें उन्हें स्पष्ट लिखा गया कि :—

'‘यद्यपि मनुष्य सोचता कुछ है परन्तु बहुत बार होता उससे भिन्न ही कुछ है। उसका एक मुख्य कारण यह है कि मनुष्य स्वयं को नहीं जानता और इस सृष्टि-चक्र की गति को भी नहीं जानता....।

आप समझते थे कि आप पाकिस्तान (पाक-स्थान) की संस्थापना कर

---

१. यह पत्र १ अक्तूबर, १९४७ को लिखा गया।

रहे हैं। आपको स्वप्न तक में भी शायद यह विचार नहीं आया होगा कि इसकी स्थापना होते ही, शुरू में ही लूट-मार, कत्ल, अग्निकाण्ड और छुरेबाजी होगी और निर्दोष नर-नारियों तथा बच्चों पर अत्याचार होंगे जैसे कि अब हो रहे हैं।

सभी धर्मग्रन्थ भी हमारे इस मन्तव्य की पुष्टि करेंगे कि जब तक कोई आत्मानुभूति नहीं कर लेता और परमपिता परमात्मा का पूर्णत: पवित्र बच्चा अथवा फ़रिश्ता नहीं बन जाता तब तक वह सही मानों में 'पाकिस्तान ' (पवित्र देवताओं का देश) स्थापित नहीं कर सकता.....।

अत: आप यह अलौकिक कर्तव्य समझते हुए मैं आपको ५००० वर्ष (कल्प) पहले की तरह ईश्वरीय निमन्त्रण देती हूँ कि आप इस अति पवित्र 'राजसूय अश्वमेध अविनाशी ज्ञान-यज्ञ' में पधार कर देखें तथा जानें कि किस प्रकार हम शक्तियाँ, जो कि आपकी शुभ-चिन्तिका हैं, सारे विश्व में आत्मिक शक्ति द्वारा सही मानों मे पाक-स्थान (पवित्र-स्वराज्य)स्थापित कर रही है। उस शान्त दैवी सृष्टि में मनुष्य तो क्या पशु-पक्षी भी कोई पाप नहीं करेंगे। उसमें 'यथा राजा-रानी तथा प्रजा' सभी पवित्र और श्रेष्ठाचारी होंगे।

क्या ही अच्छा हो कि आप इस पवित्र यज्ञ में आयें और इस सृष्टि-नाटक के और कलियुग के भावी महाविनाश के रहस्य का ज्ञान प्राप्त करें और सांसारिक चिन्ताओं से सदा के लिये मुक्ति प्राप्त करें.....।''

इसी प्रकार अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रूमेन को भी पत्र और साहित्य भेजा गया तथा इस ईश्वरीय यज्ञ में आकर वर्तमान संगमयुग के महत्व को समझने तथा आत्मानुभूति करने के लिये निमन्त्रण भी दिया गया।

देश-विदेश के पुस्तकालयों में ईश्वरीय निमन्त्रण तथा साहित्य

देश तथा विदेश के सामान्य लोगों को भी ईश्वरीय कार्य से परिचित कराने के लिये बाबा ने अनेकानेक पुस्तकालयों और विश्व-विद्यालयों में बहुत सुन्दर छपा हुआ साहित्य, कल्पवृक्ष तथा सृष्टि-चक्र के चित्र और

ईश्वरीय निमन्त्रण भेजा। न्यूयार्क (अमेरिका) की 'कोलम्बिया यूनिवर्सिटी' की लायब्रेरी, 'कैलेफोर्निया यूनिवर्सिटी' की लायब्रेरी, 'शिकागो यूनिवर्सिटी' की लायब्रेरी आदि-आदि ने उसकी पहुँच दी और हर्ष प्रगट किया। बम्बई से प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी साप्ताहिक 'इंल्लस्ट्रेटिड वीकली' (Illustrated Weekly), अरानाकुलम से प्रकाशित होने वाले दैनिक पत्र 'दीपक' आदि-आदि समाचार-पत्रों के सम्पादकों को भी पत्र और साहित्य भेजा गया ताकि जनता के लाभार्थ वे उसे प्रकाशित भी करें और स्वयं भी उससे लाभ उठायें। परन्तु किसी ने उसकी पहुँच मात्र लिख दी और किसी ने तो इतना भी कष्ट न किया। मनुष्य कह तो देते हैं कि —'हे प्रभु तेरी लीला न्यारी है' परन्तु जब वह प्रभु इस धरा पर आकर पुन: अपनी न्यारी लीला करते हैं, तब मनुष्य उसे समझने में असमर्थ सिद्ध होते हैं। देखिये तो पाकिस्तान के वित्तमन्त्री 'बी० जमान' जी ने अपने पत्र में ब्रह्माकुमारियों को जो अपना पत्र लिखा[१] उसमें उन्हें 'कल्प' पहले की तरह विकारी विश्व को मुक्ति दिलाने वाली प्रजापिता ब्रह्माकुमारियाँ (The Liberator of world, like Kalpa ago), पोस्ट आफिस बाक्स नं० ३८१, कराची' - इस पते पर भेजा, परन्तु फिर भी उनके कार्य से पूर्णतया लाभ लेकर स्वयं विकारों से मुक्त होने का पुरुषार्थ नहीं किया!

इस प्रकार हमने बाबा द्वारा भिजवाये गये कुछेक पत्रों, तारों तथा ईश्वरीय साहित्य का जो समाचार दिया है, उसके पीछे हमारा उद्देश्य यह बताना है कि बाबा ने विभिन्न प्रकार से ईश्वरीय सेवा करने का प्रशिक्षण पहले से ही दे दिया था। अब सतयुग की स्थापना के कार्य की गति को तीव्र करने के लिये बाबा ने यज्ञ-वत्सों को भारत के विभिन्न नगरों में भेजने का संकल्प भी किया था। उस समय सृष्टि-चक्र तथा कल्प-वृक्ष के दिव्य चित्र भी काफ़ी संख्या में छपे हुए थे। ये दोनों चित्र दिव्य-बुद्धि और दिव्य-

१. उनका यह पत्र २४ दिसम्बर १९४९ को आया था।

दृष्टि पर आधारित थे। बाबा इन चित्रों को बहुत ही अनमोल बताते थे। वे कहा करते थे कि यह कल्प-वृक्ष ऐसा लगता है कि जैसे मोर (Peacock) पंख फैलाकर खड़ा होता है। जो इस चित्र को यथार्थ रीति से समझेगा वह सतयुगी विश्व के स्वराज्य के ताऊसी तख्त (Peacock Throne) को जीतेगा। सृष्टि-चक्र के चित्र के बारे में बाबा कहते थे कि — ''यह आत्माओं के अनेक जन्मों को बताने वाली जन्मपत्री है'' अथवा 'जीवन की पहेली' (Puzzle of life) को हल करके विश्व के स्वराज्य की चाबी अथवा लाटरी देने वाली ईश्वरीय सौगात है।'

उन दिनों बाबा ने बहुत से ईश्वरीय निमन्त्रण पत्र पुस्तिकाएँ (Booklets), हैंडबिल, ब्रोशर (Brochure) आदि-आदि भी छपवाये थे। इनमें बताया गया था कि मनुष्य दिन-भर इस प्रकार के वाक्य बोलता है कि -'यह मेरा शरीर है, यह मेरी जमीन है, ये मेरे जेवर हैं, आदि-आदि।' इन वाक्यों में 'मेरा', 'मेरी', आदि शब्द प्रयोग करने वाला ''मैं'' वास्तव में कौन हूँ? (What am I ?) इस साहित्य में यह भी बताया गया था कि हम एक सेकण्ड में मन को वश करके विश्व के स्वराज्य की चाबी अपने हाथ कैसे कर सकते हैं। सृष्टि-ड्रामा के सतयुग से लेकर कलियुग के अन्त तक का इतिहास तथा संगमयुग का वृत्तान्त और भविष्य के वृत्तान्तों का भी इसमें उल्लेख था। इसके अतिरिक्त सर्वशक्तिवान्, बीजरूप परमात्मा के चरित्रों तथा 'मन को वश में करने के तरीके' पर पुस्तकें भी हिन्दी, अंग्रेजी, सिंधी आदि-आदि भाषाओं में छपाई गई थीं। कुछ प्रश्नावलियाँ (Questionnaire) भी प्रकाशित की गई थी। जोकि नये जिज्ञासुओं से भराने के लिये थीं। इस प्रकार इन अस्त्रों-शस्त्रों के साथ अब शिव-शक्तियाँ अथवा ज्ञान-गंगाएँ भारतवासियों की ज्ञान-सेवा के लिये तैयार थीं।''

चेतन ज्ञान-गंगाएँ, पतितों को पावन करने की अलौकिक सेवा में तत्पर

अब ब्रह्मा-वत्स ईश्वरीय सेवा के लिये तैयार हो गये थे। इस सेवार्थ उन्हें ईश्वरीय ज्ञान भी काफि स्पष्ट रीति से और विस्तारपूर्वक मिल चुका था। संयोग-वश अपने-अपने मित्र-सम्बन्धियों से उनका पत्र-व्यवहार भी इस तरह हो रहा था कि जिससे उनकी भी ज्ञान-सेवा की जा सके। अब लौकिक मित्रों-सम्बन्धियों से अनेक यज्ञ-वत्सों को, उनके यहाँ जाकर उन्हें ज्ञान-लाभ देने के लिए, निमन्त्रण प्राप्त हुए। अत: इन ब्रह्मा-वत्सों का अलौकिक सेवार्थ विभिन्न नगरों में जाना हुआ।

सन् १९५२ की बात है कि ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणि जी अहमदाबाद में एक व्यक्ति के निमन्त्रण पर वहाँ ईश्वरीय ज्ञान वितरणार्थ गयीं। वह व्यक्ति पहले आबू में भी आये थे। वहाँ जब उन्होंने ईश्वरीय ज्ञान सुना तो उन्हें बहुत आनन्द आया। आत्मिक सुख अनुभव करने के कारण उन्होंने स्वेचछा से एक लिफाफे में कुछ नोट डालकर यज्ञ में भेंट किये। परन्तु ब्रह्माकुमारी बहनों ने कहा — ''हम किसी से भी आर्थिक सेवा नहीं ले सकतीं। इस पवित्र ईश्वरीय यज्ञ में उसी का धन कार्य में लग सकता है जो इस ईश्वरीय ज्ञान को प्रेक्टीकल जीवन में धारण कर मनसा, वाचा, कर्मणा पवित्र बनने का पुरुषार्थ करते हैं। आपने अभी हमसे ज्ञान-सेवा पूरी तरह ली ही नहीं है, न इसके नियमों को अपने जीवन में अपना कर जीवन को निर्विकार बनाने का पुरुषार्थ प्रारम्भ किया है, अत: हमें जो ईश्वरीय आज्ञा है, उसके अनुसार हम आप द्वारा यह धन स्वीकार करने में असमर्थ हैं।''

ब्रह्माकुमारी बहनों ने उस व्यक्ति को यज्ञ-प्रसाद भी दिया था और

ज्ञान-चर्चा द्वारा पवित्रता के लिये प्रेरणा भी दी थी। जब उस व्यक्ति ने ब्रह्माकुमारी बहनों की इस बात को सुना कि वे आर्थिक सेवा स्वीकार नहीं कर सकतीं तो उन्हें बहुत अचम्भा हुआ। उन्होंने मन में सोचा कि आज के जमाने में कौन व्यक्ति है जिसे पैसा प्यारा नहीं लगता। हम साधुओं और 'महात्माओं'को धन देते हैं, तब वे तो उसे झट स्वीकार कर लेते हैं और धन प्राप्त करके उन्हें हर्ष होता है। परन्तु मैंने जीवन में पहली बार एक ऐसा धार्मिक स्थान और ऐसी बहनें देखी हैं जो कहती है कि हम धन स्वीकार करने में असमर्थ हैं! सचमुच इनका मन अनासक्त है। इनके जीवन में त्याग है। इन्होंने कुछ असूल अपनाये हैं। ये बहुत ही उच्च आत्मायें हैं।' वह ज्ञान-चर्चा और प्रैक्टीकल जीवन से प्रभावित होकर जब अहमदाबाद लौटे तो वहाँ से उन्होंने धन्यवाद का एक पत्र और अहमदाबाद में आने का निमन्त्रण पत्र लिख भेजा। उसी निमन्त्रण को स्वीकार करके ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणि जी अहमदाबाद गयी थीं।

इसके शीघ्र ही बाद ब्रह्माकुमारी दीदी मनमोहिनी जी तथा रुक्मिणी[1] जी अपने लौकिक मित्र-सम्बन्धियों के निमन्त्रण पर कुण्डला गयी थीं और वहाँ से लौटते समय उन्होंने देहली जाकर ईश्वरीय सेवा करने की योजना बनायी थीं। ब्रह्माकुमारी संतरी जी, सती जी तथा प्रकाशमणि जी और ब्रह्माकुमार आनन्द किशोर जी तथा चन्द्रहास जी कलकत्ता में भी सम्बन्धियों के निमन्त्रण पर गये थे। ब्रह्माकुमारी मनोहर इन्द्रा जी तथा गंगा जी को देहली से निमन्त्रण मिला था। ब्रह्माकुमारी कमल सुन्दरी जी का पूना में सेवार्थ जाना हुआ था। इस प्रकार कोई यज्ञ-वत्स पूर्व में, कोई पश्चिम में, कोई उत्तर में और कोई दक्षिण में जाकर ईश्वरीय सेवा में तत्पर हो गये थे। चौदह वर्ष ज्ञान-यज्ञ के कुण्ड के भीतर योग-तपस्या करने के बाद बाहर लोगों के यहाँ जाने का उनका यह पहला अनुभव बड़ा अजीब-सा था।

---

१. शरीर छोड़ने के समय तक इनका कार्य-क्षेत्र प्रायः बम्बई ही रहा।

चौदह वर्ष के बाद यज्ञ-कुण्ड से बाहर निकलने का अजीब अनुभव

इस बारे में ब्रह्माकुमारी कमल सुन्दरी जी, जोकि वर्तमान समय मेरठ में ईश्वरीय सेवा पर उपस्थित हैं, लिखती हैं :–

''क्या बताऊँ, सारे कल्प में वर्तमान जीवन एक बहुत ही अजीब जीवन है। मैंने इस जीवन में चार बार जन्म लिया। एक जन्म तो जैसे सभी का होता है, वैसे लिया ही। इस जन्म से मेरा अभिप्राय है –'शारीरिक जन्म लेना।' इसके बाद माता-पिता ने लालन-पालन करके बड़ा किया और फिर विवाह कर दिया। इसे मैं अपना दूसरा जन्म मानती हूँ क्योंकि कन्या के लिए विवाह एक घर से मरकर दूसरे घर में जन्म लेने के समान होता है। विवाह होने पर उसे एक प्रकार के माता-पिता से और मायके वालों से दैहिक नाते तोड़कर पति से तथा ससुराल वालों से नया नाता जोड़ना होता है। कन्या के समय का अलबेला, निश्चिन्त, स्वतन्त्र और पवित्र जीवन समाप्त होकर अब उसका पराधीन, परतन्त्र और चिन्ताओं से भरा, जिम्मेवारी का जीवन प्रारम्भ होता है जिसमें उसे कदम-कदम पर दूसरों की बातें सुननी पड़ती हैं और सहन तथा त्याग करना पड़ता है। ये दो जन्म तो प्रायः हरेक नारी को इस कलियुगी विकारी संसार में लेने ही पड़ते हैं, परन्तु मैंने दो जन्म और इनके अलावा भी लिये। आप सोचते होंगें कि वह दो जन्म कौन-से थे?

दो और जन्म

जब मैंने ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त किया तब वह मेरा एक नया जन्म था। इसे मैं इसलिए 'नया जन्म' मानती हूँ क्योंकि अब मैंने परमात्मा को पिता के रूप में अपनाया और मीरा की तरह विकारी संसार की रीति-रस्म और लोक-लाज़ छोड़ी। अब परमपिता परमात्मा जो सद्गुरु के रूप में मिले तो सभी दैहिक नातों को भूल कर, उनके ''मामेकं शरणं व्रज'', ''सर्वधर्मान् परित्यज्य'' के मन्त्र के अनुसार उनसे ही आत्मिक नाता जोड़ना पड़ा। 'मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई' - इस वचन को निभाने के लिए बुद्धि

में एक पतिव्रता नारी की तरह उस निराकार परमात्मा ही को मन में बसाया, बाकी इस संसार के विनाशी नाते तथा कर्मों के खाते भुलाने पड़े।

यह मरना भी कठिन था और जन्म लेना भी कठिन था क्योंकि मैंने पहले जो दो जन्म लिये थे, जिनका मैं पहले वर्णन कर चुकी हूँ, उनमें इतना सहन नहीं करना पड़ा और बुद्धि को भी इतना पुरुषार्थ नहीं करना पड़ा जितना कि अलौकिक जन्म अथवा मरजीवा जन्म लेने पर! इस अलौकिक जीवन में वर्तमान कलियुगी विकारी संसार को ही बुद्धि से भुलाने तथा मन से बिसारने का पुरुषार्थ था और सभी लौकिक रिश्तेदारों को देखते हुए भी बुद्धि से उन नातों को याद न करके अविनाशी आत्मिक नाते को याद करना था। जन्म-जन्मान्तर से आत्मा के जो संस्कार पक्के हो गये थे, उन्हें बिल्कुल मिटाने की मेहनत कोई कम मेहनत न थी बल्कि यह भी एक तरह से मरना और एक तरह से जीना था। पाँव फर्श पर होते हुए भी बुद्धि को अर्श पर रखने का यह पुरुषार्थ था। और तो क्या, स्वयं अपनी देह को भूलकर विदेही बन जाने का यह अभ्यास था और कदम-कदम पर, पतियों के भी पति परमेश्वर की जो मत मिले, उस पर ही चलने तथा मर-मिटने की टेव मन को डालनी थी। पुराने सिर को काट कर, तली पर रखकर, दिव्य बुद्धि के दाता परमपिता से नया शीश अर्थात् दिव्य बुद्धि लेने की यह अनोखी बात थी। इसलिए ही तो इस जीवन को 'मरजीवा जन्म' कहा गया है और इस जन्म के कारण ही तो सच्चे ब्राह्मणों को 'द्विज' अर्थात् 'दूसरा जन्म लेने वाला' माना गया है। गोया शुद्र (क्षुद्र) जीवन का अन्त करके अब ब्राह्मण (पवित्र)बनने का अथवा कीड़े से बदलकर भृंगी बनने का सवाल था।

बहुत-से यज्ञ-वत्सों ने यह जन्म लिया और उनकी तरह मैंने भी यह अलौकिक जन्म अथवा जीवन लिया। अत: अब हम 'ब्रह्मामुख-वंशावली' अर्थात् ब्रह्मा बाबा के मुख से (मुख द्वारा दिये गये ज्ञान से) पैदा हुए-हुए ब्राह्मण -'ब्रह्माकुमारियाँ', 'ब्रह्माकुमार' कहलाये। यज्ञ-पिता और यज्ञ-माता

द्वारा ही हमारा लालन-पालन और हमारी शिक्षा शुरू हुई। बड़ी आयु होते हुए भी अब फिर से इस ईश्वरीय गुरुकुल में हमारा न्यारा, प्यारा और निश्चिन्त विद्यार्थी जीवन प्रारम्भ हुआ और ईश्वरीय विद्या के अध्ययन में ही व्यस्त हम ब्रह्मा बाबा तथा सरस्वती मैया के रूहानी धर्म के बच्चे (Adopted Children) बने। अहा, इस अलौकिक जीवन के सुख का क्या वर्णन करें ! नित्य-प्रति ज्ञान की मीठी-मीठी बातें सुनते, अलौकिक तथा पारलौकिक माता-पिता का निःस्वार्थ और आत्मिक स्नेह पाते, ईश्वर अर्पण हुए धन से, सच्चे ब्राह्मणों द्वारा बनाया पवित्र ब्रह्मा-भोजन लेते, ईश्वरीय कुटुम्ब में रहते, हमारा यह नये प्रकार का बचपन तो हमें कभी स्वप्न में भी नहीं भूल सकता ! अतीन्द्रिय सुख वाला यह जीवन भी सभी ब्रह्मा-वत्सों ने पाया। परन्तु मेरा जो चौथा जन्म हुआ, वह किसी-किसी ने ही पाया।

मेरा चौथा जन्म

हुआ यह कि एक बार मेरे जीवन में फिर पलटा आया। शिव बाबा ने यज्ञ-वत्सों को तथा यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता को यह अनुभव कराना था कि सतयुग में देवताई जीवन कैसा होगा। उस समय के संस्कार कैसे होंगे और खान-पान आदि की रीति कैसी होगी। अतः उस करन-करावनहार, दिव्य-दृष्टि के दाता, दिव्य-दृष्टि विधाता प्रभु ने मुझे एक और जन्म दिया। कैसे ? अनायास ही एक दिन मुझे शिव बाबा ने विशेष प्रोग्राम दिया। उसके अनुसार, मैं अलग ही एक कमरे में कई दिन तक रही। मुझे भोजन करने के लिए मना थी। थोड़ा फल और दूध लेती थी और न किसी की बात सुनती थी, न किसी से करती थी और न किसी अज्ञानी व्यक्ति को देखती थी। निरन्तर योगाभ्यास की आज्ञा मुझे मिली हुई थी। एक सूर्यमुखी फूल की तरह मेरी दिनचर्या थी; शिव बाबा की याद ही मेरा एक मात्र काम था, बस! इस प्रोग्राम के परिणामस्वरूप मेरे इस जीवन के सभी संस्कार तिरोभावित (Merge) हो गये, इस संसार की सभी स्मृतियाँ गुम हो गयीं, सभी दैहिक नाते भूल गये और दृष्टि-वृत्ति सब पलट गई। मैं जीती-जागती

तो थी परन्तु मुझे अपनी देह का नाम, आयु वा परिचय कुछ भी याद न रहा। मेरे जो लौकिक सम्बन्धी थे, उनकी भी मुझे पहचान तथा स्मृति न रही। यहाँ यज्ञ में आने के बाद जो मेरे दिव्य सम्बन्धी अर्थात् यज्ञ-निवासी भाई-बहन थे, इनके भी नाम आदि मुझे सब भूल गये।

मैंने अपने-आपको भविष्य की सतयुगी सृष्टि की एक दैवी राजकुल की बहुत छोटी-सी कन्या के रूप में अनुभव किया। वहाँ की ही भाषा तथा बोलचाल मेरे मुख से धीमे-धीमे स्वर से निकलती थी। वहाँ के देवी-देवताओं जैसे ही सतोप्रधान संस्कारों का मेरे मन में प्रादुर्भाव हुआ। मैं काम, क्रोध, लोभ आदि का अर्थ, व्यवहार या विचार जानती तक न थी। इस कलियुगी संसार की भाषा, चेष्टा, हाव-भाव, रीति-रस्म आदि को समझती तक न थी!

मेरे नेत्र वही थे परन्तु देखने वाला मन बदल गया हुआ था। मैं दिव्य दृष्टि से सभी को देखती थी। त्रिकालदर्शी परमपिता परमात्मा ने अपनी शक्ति से मुझे कुछ समय के लिये ऐसा कर दिया था कि जो-जो भी यज्ञ-वत्स मेरे सामने आते, मेरे मन में उनकी वह सूरत-सीरत, उनका वह नाम-धाम, वह सम्बन्ध और कर्त्तव्य स्पष्ट रूप से अंकित हो जाता जोकि भविष्य में सतयुगी सृष्टि में उन्हें मिलना था। मुझ से यज्ञ-वत्स कई बातें पूछते कि – ''आप कौन हो,'' तो मैं अपने-आपको भविष्य की सतयुगी सृष्टि में की एक शहज़ादी (राजकुमारी) महसूस करने के कारण अपना वही देवताई नाम-धाम, आयु आदि बताती और जब वे पूछते कि फलां जो यज्ञ-वत्स है, यह कौन है ? तो उसे भी मैं सतयुगी राजकुमार या राजकुमारी या दास या दासी या सखी आदि जिस रूप में देखती, उसी का वर्णन करती। कौन से राजा का राज्य है, कौन मेरे माता-पिता हैं, उनका भी पता मैं देती थी। मेरा ऐसा पार्ट लगभग एक-डेढ़ मास चला। मैं सतयुगी दैवी राजकुमारियों की तरह बहुत ही थोड़ा खाती थी। दिन-भर में एक-दो बार दूध के दो-चार चम्मच ही ले लेती थी। इतना बड़ा शरीर था, सभी सोचते कि यह इतने

दिन तक इस प्रकार अल्प भोजन पर कैसे चलेगा? परन्तु मुझे कुछ भी कमज़ोरी अनुभव नहीं होती थी। एक छोटी-सी दैवी शहज़ादी की तरह ही मेरी चाल-ढाल, मेरा खान-पान और मेरा सारा व्यवहार था।

उन्हीं दिनों मेरे लौकिक रिश्तेदार भी यज्ञ में मुझसे मिलने आये थे, परन्तु मैंने किसी को भी नहीं पहचाना था। जब मेरा यह पार्ट समाप्त हुआ तब भी बहुत दिनों तक मुझे अपने दैहिक नाम, देह के सम्बन्धियों का परिचय तथा यज्ञ-वत्सों के भी नाम आदि याद न थे। कई दिन तक जब मुझे यज्ञ-वत्सों का तथा मेरे मरजीवा जीवन का मुझे परिचय याद दिलाया जाता रहा, तब मेरा पहले वाला अर्थात् यज्ञ का जीवन मुझे याद हो आया और दिव्य दृष्टि पर आधारित मेरा अब देवताई जीवन का पार्ट हल्का हुआ। तब मुझे यज्ञ-वत्सों ने बताया कि डेढ़ मास मेरा जीवन बिल्कुल ही बदला हुआ था और एक दैवी शहज़ादी की तरह था। मुझे तो अब उस डेढ़ मास के जीवन का बिल्कुल पता तक न था। बस, मैं यही जानती कि इस डेढ़ मास के समय में मैं कहीं गुम थी, पता नहीं कहाँ थी ! इसे मैं अपना चौथा और विचित्र जीवन मानती हूँ जो कि स्वयं परमपिता परमात्मा की दिव्य शक्ति के प्रभाव से कुछ काल के लिये हुआ। इससे मेरे जीवन में एक और पलटा आया था।

'यज्ञ-कुण्ड'से बाहर निकलने के बाद संसार कैसा लगा?

इस प्रकार चार जन्म लेकर, अब काफी समय यज्ञ के दैवी वत्सों के साथ, ईश्वरीय गुरुकुल में, पवित्र वातावरण में ही हमारा जीवन बीता था। अब जब फिर अपने लौकिक परिवार की ज्ञान-सेवार्थ यज्ञ-कुण्ड से बाहर जाने का ईश्वरीय आदेश मिला तो मुझे बड़ा अजीब-सा लगा था। माउण्ट आबू में बस-स्टैण्ड से बस में बैठकर जब हम आबू रोड पर पहुँचीं तो यह दुनिया ही बड़ी अजीब लगती थी! प्यारे बाबा से बिछुड़ कर हम पहली बार जा रहे थे, इसलिये मन में एक ओर तो यज्ञ की याद हमें खींच रही थी, दूसरी ओर इस संसार का वातावरण घोर नरक का जैसा लगता था

जिसे देखकर मन करता था कि वापस अपने ईश्वरीय कुल के शुद्ध वातावरण में लौट जायें जहाँ पर कि ऐसी अशुद्ध मन-तरंगें (Vibrations) नाम-मात्र भी नहीं है। परन्तु सेवार्थ जाना ही था, इसलिये मज़बूरी महसूस करते हुए रेलागाड़ी में हम सवार हो गयी। रेल में लोगों की दृष्टि-वृत्ति, बोल-चाल, रहन-सहन देखकर ऐसा लगता था कि अब यह संसार बहुत ही बिगड़ गया है और मनुष्य बिल्कुल ही देह-अभिमानी बन गये है !..... तभी कवि का यह गीत स्मरण हो गया :—

देख तेरे संसार की हालत क्या हो गई भगवान्,
कितना बदल गया इन्सान, कितना बदल गया इन्सान!
सूरज न बदला, चाँद न बदला, न बदला रे आसमान,
कितना बदल गया इन्सान!!
छल और कपट के हाथों बेच रहा ईमान,
कितना बदल गया इन्सान!
राम के भक्त रहीम के बन्दे,
रखते आज फ़रेब के फन्दे,।
कितने ये मक्कार, ये अन्धे,
देख लिये इनके भी धन्धे।
इन्हीं की काली करतूतों से हुआ ये मुल्क मसान,
कितना बदल गया इन्सान!
जो हम आपस में न झगड़ते,
बने हुए क्यों खेल बिगड़ते।
काहे लाखों ये घर उजड़ते,
क्यों ये बच्चे माँ से बिछुड़ते ।
कितना बदल गया इन्सान!
देख तेरे संसार की हालत क्या हो गई भगवान्,
कितना बदल गया इन्सान!

ब्रह्माकुमारी सीतू जी कहती है कि :—

बहुत समय तक यज्ञ-कुण्ड में रहने के कारण हमें बाहर के संसार का कुछ भी पता न था, यहाँ तक कि हमें यह भी मालूम नहीं था कि अब सरकार का कौन-सा सिक्का चल रहा है। हम जब यज्ञ में रहती थीं तो हमने कभी हाथ में पैसा लिया न था क्योंकि हमें कोई सौदा तो खरीदना नहीं पड़ता था। हमें तो सब-कुछ ईश्वरीय यज्ञ के भण्डार से ही बिन माँगे मिलता था। बाबा का यह आदेश था कि यज्ञ-वत्सों को कभी भी कुछ माँगना न पड़े। बाबा कहा करते थे —''सतयुग में देवी-देवता कभी किसी से कुछ भी माँगते नहीं है। अत: अब जबकि यज्ञ-वत्स देवता बनने का पुरुषार्थ कर रहे है तो इन्हें भी कुछ माँगने की आवश्यकता नहीं रहनी चाहिए।'' अहो,प्रभु द्वारा पालन की उस अनोखी रीति का हम कैसे वर्णन करें ! उस अलबेले, 'फ़िक्र से फ़ारिग' जीवन की घड़ियाँ तो अत्यन्त सुखमय थीं, तभी तो कहा गया है कि ''तुम माता-पिता हम बालक तेरे, तुम्हारी कृपा से सुख घनेरे''। तो मैं यह बता रही थी कि हमें संसार के सिक्कों का भी कुछ पता नहीं था। हमारी दुनिया ही एक न्यारी और प्यारी, एक ईश्वरीय दुनिया थी। यदि कोई नया व्यक्ति वहाँ आकर रहता तो वह समझ सकता था कि सचमुच भोलानाथ शिव एक नई, सरल स्वभाव वाली, पवित्र पुष्पों वाली, प्यारी सृष्टि की रचना कर रहे हैं।

मुझे याद है कि एक बार जब हमारी दो दैवी बहने ईश्वरीय सेवा के लिए कहीं गयी थीं, तो एक छोटी-सी समस्या उनके सामने आई थी। उन्हें एक ताँगे वाले को अठन्नी देनी थी और वे यह निर्णय नहीं कर पा रही थीं कि टाँगे वाले को कौन-सा सिक्का दिया जाय। बात यह थी कि उन दिनों एक नया रुपया निकला था और एक अठन्नी का सिक्का पहले से चल रहा था और दोनों का घेरा लगभग बराबर था। उन्होंने दोनो सिक्कों को एक-दूसरे के ऊपर रख कर देखा और जो सिक्का उन्होंने घेरे में छोटा पाया उसे उन्होंने अठन्नी मान कर ताँगे वाले को दे दिया क्योंकि वे दोनों बहनें

पढ़ी-लिखी तो थीं नहीं। परन्तु वे अपने लिए यह सौभाग्य की बात मानती थीं कि वे केवल ईश्वरीय विद्या ही पढ़ी थीं और उन्होंने उस कलियुगी नारकीय संसार की छी-छी बातें न पढ़ी थीं, न सुनी थीं। हाँ, बाद में उन्होंने थोड़ा-सा अक्षर-ज्ञान भी ले लिया ताकि वे लेन-देन भी कर सकें।

ऐसी निराली अवस्था में जब हम ब्रह्माकुमारियाँ यज्ञ-कुण्ड से निकल कर लोक-सेवार्थ गयीं तो समझा जा सकता है कि हमें यह संसार कैसा लगा होगा ! जब हमको लोग कहते कि —''हम विकारों को जीत ही नहीं सकते'', तो हमें उन पर बड़ा आश्चर्य होता था क्योंकि हम पर बाबा ने ऐसी ज्ञान-वर्षा की थी कि हमारा तो सहज स्वभाज ही निर्मल हो गया था।

अपनी पहली रेल-यात्रा के बारे में ब्रह्माकुमारी गंगा जी लिखती हैं कि — 'रेल में बैठे हुए भी हमें अपने यज्ञ की याद आती रही और बाबा की ओर हमारा मन खिंचा रहा। आखिर मन को हमने जैसे -तैसे अपने काबू में करके पास बैठी दूसरी माताओं को ईश्वरीय ज्ञान सुनाना प्रारम्भ किया। उन लोगों को इससे बहुत ही शान्ति का अनुभव हुआ और वे हमें अपने यहाँ के लिए निमन्त्रण भी देने लगीं। उन पर इस ज्ञान का बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा। तब हमें बाबा के ये महावाक्य याद हो आये कि —''बच्ची, जब आप यह ईश्वरीय ज्ञान लोगों को सुनाओगी तो उन्हें बहुत खुशी होगी और आपका बहुत प्रभाव निकलेगा।......'' हम जब बृजकोठी में बाबा से विदा ले रही थीं तो बाबा ने हमें अलौकिक स्नेह से युक्त दृष्टि से निहारते हुए तथा पुचकारते हुए कहा था — ''बच्ची, जाओ! आप शक्तियों का काम ही है- सभी आत्माओं को जगाना। खूब सर्विस करो ! एक दिन आयेगा कि तुम्हारी ज्ञान-धारणा का चमत्कार देखकर तथा पवित्र जीवन देखकर लोग तुम्हारी जय-जयकार करेंगे....।'' अब वही महावाक्य साकार हो रहे थे।

अस्तु, हम मनोहर इन्द्रा बहन जी के उन लौकिक सम्बन्धियों के यहाँ पहुँची जिन्होंने कि हमें निमन्त्रण पत्र में यह लिखकर भेजा था कि — ''आप

आकर अपने चौदह वर्ष की तपस्या से और आध्यात्मिक अनुभवों से हमें भी जगाओ तथा ज्ञानामृत पिलाओ।'' हमने उन्हें यह तो सूचना दे ही दी थी कि हम लोग प्रात: बहुत जल्दी उठती हैं और स्नानादि करके ईश्वरीय स्मृति में लवलीन होती हैं, अत: हमारे लिये एक अलग कमरा चाहिएगा। हमने उन्हें यह भी बताया हुआ था कि हम अपने ही हाथों से अपना भोजन बनाती है और हम कोई भी अशुद्ध अथवा तामसिक भोजन नहीं लेतीं; इसलिये हमारे यहाँ रहने पर घर में प्याज़ आदि तामसिक पदार्थों का प्रयोग नहीं होना चाहिए। इसके लिये उन्होंने उचित व्यवस्था कर दी थी।

अत: जब हम उनके यहाँ जाकर ठहरीं तब हम ईश्वरीय नियमों के अनुसार ही रहती थीं। हम उन्हें भी ईश्वरीय याद में स्थित होकर भोजन बनाने तथा भोग लगाकर भोजन खाने की प्रेरणा देती थीं। उन्हें ईश्वरीय ज्ञान भी हम नित्यप्रति सुनातीं और पवित्रता का मार्ग भी दर्शाती थीं। उन पर हमारे जीवन का काफी प्रभाव पड़ा परन्तु वे इस भ्रम में पड़े हुए थे कि गृहस्थ तथा व्यापार करते हुए उन नियमों का पालन करना कठिन है।

पंडित जवाहरलाल जी तथा इन्द्रिरा गाँधी जी से भेंट

जब हम देहली में उनके यहाँ ठहरी हुई थीं तो एक दिन हमने उन लौकिक सम्बन्धियों से कहा कि —''हमें पंडित जवाहर लाल नेहरू जी से तथा इन्द्रिरा गांधी जी से भी मिलना है क्योंकि हमें उनको भी ईश्वरीय सन्देश देना है।'' हमारी यह बात सुनकर हमारे वे लौकिक सम्बन्धी मन ही मन में हम पर हँसते थे। प्रत्यक्ष रूप में वे हमें कहते थे कि 'नेहरू जी से आप कैसे मिल सकेंगें ? वे तो जनता को मिलने का समय नहीं देते जब तक कि कोई ऐसा कार्य या कोई अत्यन्त महत्वपूर्ण बात न हो। नेहरू जी तो भारत के प्रधान मन्त्री हैं, बेताज़ बादशाह हैं, बहुत ही व्यस्त रहते हैं। यदि वह इस प्रकार सभी को मिलने का समय दें तब तो वे कोई काम ही न कर सकें।' अत: वे हमारे लौकिक सम्बन्धी हमारे उस संकल्प को असम्भव मानकर टाल देते। हमने तो उन्हें अपने साथ इसलिये चलने के

लिये कहा था कि हम देहली में पहली बार आई थीं और देहली के रास्तों से परिचित न थीं।

खैर, जब हमने अपने सम्बन्धियों का उत्साहवर्धक रुख न देखा तो प्रभु का आसरा लेकर स्वयं ही नेहरू जी से मिलने निकल पड़ीं। बाबा ने नेहरू जी को एक ग्रामोफोन रेकार्ड तथा कुछ साहित्य ईश्वरीय सौगात के रूप में देने के लिये हमें आदेश दिया था। अत: हमने सोचा कि हम प्रभु-प्रेरणा के अनुसार ही तो प्रभु-सन्देश देने जा रही हैं, अत: चलो हम चलती हैं। आखिर हम तीन मूर्ति भवन में जा पहुँची। हमें उनसे मिलने का समय दिया गया। पहले हम इन्दिरा जी से मिलीं। उन्होंने हम से पूछा कि यह ईश्वरीय यज्ञ भारत की क्या सेवा कर रहा है, वहाँ कितनी माताएँ रहती हैं, क्या ज्ञान मिलता है, आदि-आदि। हमने उन्हें ईश्वरीय सन्देश तथा माउण्ट आबू में यज्ञ में पधारने का निमन्त्रण तथा ईश्वरीय साहित्य दिया। फिर हमें नेहरू जी से मिलाया गया। उन्हें हमने ईश्वरीय साहित्य और निमन्त्रण के अतिरिक्त वह रेकार्ड भी दिया। उस रेकार्ड में यज्ञ-माता सरस्वती जी का एक दिव्य प्रवचन भरा हुआ था जिसमें वर्तमान समय की पहचान, परमपिता परमात्मा द्वारा हो रहे ईश्वरीय कर्त्तव्य, आने वाले महाविनाश, जीवन में पवित्रता की आवश्यकता आदि-आदि पर प्रकाश डाला गया था। हमने उस मुलाकात में उन्हें वह रेकार्ड देते हुए उसमें भरे सन्देश का सार बताया।

देहली में चाँदनी चौक के प्रसिद्ध 'गौरीशंकर मन्दिर', जोकि लाल किले के निकट है, में भी हमारे दो-तीन भाषण हुए। मन्दिर के सेक्रेटरी ने हमें मन्दिर में, ऊपर एक कमरा हमारे निवास के लिये तथा आने वाले जिज्ञासुओं से ज्ञान-वार्तालाप के लिये दिया था। जिन दिनों हम वहाँ ठहरी हुई थीं, उन दिनों मन्दिर में आने वाली माताएँ पूजा करने के बाद ऊपर हमारे पास आतीं थीं। उन्हें जब हम ईश्वरीय ज्ञान सुनातीं तो उन्हें बहुत ही आनन्द मिलता। पुरुष भी आते थे। हम सभी नर-नारियों को ईश्वरीय स्मृति

में, अर्थात् योग में बिठाती थीं। उन्हें बहुत शान्ति अनुभव होती थी। कुछेक माताएँ ध्यानावस्था में चली जाती थीं। उन्हें कलियुगी सृष्टि के महाविनाश तथा सतयुगी सृष्टि की स्थापना के दिव्य साक्षात्कार भी हुए। कभी-कभी ज्ञान की प्यासी उन माताओं को घर लौटने में कुछ थोड़ी देर भी हो जाती। वे घर वालों को आत्मिक नशे में दिखाई देतीं। उनके घर वाले उन्हें डाँटते-डपटते भी थे। जिस-किसी को साक्षात्कार हुआ होता था, वह अपने परिवार वालों को अपना अनुभव सुनाती थी। परन्तु उनके कुटुम्बी कहते- ''यह भोली माता है। इसे किसी ने जादू लगा दिया होगा। अरे, साक्षात्कार होना क्या ऐसी मामूली और सहज बात है ! घोर तपस्या करने पर ऋषियों-मुनियों को भी साक्षात्कार नहीं हुए।'' वे उन पर जादू हुआ मान कर उन्हें मन्दिर में न जाने देते और यदि वे हठ करतीं तो उन्हें मारते-पीटते थे। कुछ पुरुष यह देखने चले आते थे कि यहाँ कैसा जादू है। परन्तु जब वे सम्मुख आकर ज्ञान सुनते तथा वातावरण देखते तब वे समझ जाते कि इन बहनों का जीवन उच्च और प्रभावशाली है तथा यह ज्ञान जीवन में पवित्रता के लिये प्रेरणा देने वाला और प्रभु से प्रीति पैदा करने वाला है। जो सम्मुख आकर ज्ञान न सुनते, वे भ्रान्तियों में ही पड़े रहते।

हम डेढ़ या दो मास उस मन्दिर में रही होंगी। दिनोंदिन सत्संग में आने वालों की संख्या बढ़ती गयी। मन्दिर में पुजारियों ने देखा कि माताएँ और पुरुषों का ध्यान अब ऊपर सत्संग सुनने की ओर है और उनका ध्यान पूजा की ओर कम तथा योग की ओर अधिक हो गया है। उन्होंने यह भी देखा कि यह बहनें देवताओं की पूजा करने की बजाय देवताओं के जैसे गुण धारण करने की शिक्षा देती हैं और देवों के भी देव जो एक परमपिता परमात्मा शिव हैं, उनकी अनन्य स्मृति में स्थित होने की सहज विधि समझाती हैं, जिस पर लोग आकर्षित हो गये हैं। अत: उन्होंने मन्दिर की प्रबन्धक कमेटी के सदस्यों को उकसाया। इसके परिणामस्वरूप मन्दिर के प्रबन्धकों ने हमें कहा कि —''जितना समय यहाँ रहने के लिये आपको

निमन्त्रण दिया गया था, वह समय अब पूरा हुआ है और यहाँ अब कोई और महात्मा आने वाले हैं।'' हमने उस स्थान को खाली करना ही उचित समझा, परन्तु सत्संग में आने वाली माताएँ-कन्याएँ तथा भाई इस बात के लिए तैयार न थे कि सत्संग बन्द हो। अत: उन्होंने प्रबन्कों से आग्रह किया जिसके फलस्वरूप हमारे प्रवचन तो चलते रहे परन्तु हमने निवास-अर्थ अन्य स्थान पर प्रस्थान किया।

अब हम नित्य-प्रति प्रात:काल को यमुना के घाट पर आने वाले भक्तों को भी ईश्वरीय सन्देश देती थीं और सायंकाल को गौरीशंकर मन्दिर में भाषण भी करती थीं। कुछ दिन हमारा यह कार्यक्रम चलता रहा। इसी बीच लाला जगन्नाथ जी, जोकि देहली के एक प्रसिद्ध रईस हैं और जिन्होंने देहली में एक घण्टाघर (Clock Tower) भी बनाया हुआ है, की माता जी ने अपनी धर्मशाला में हमें भाषण करने के लिए स्थान दिया और उसके निकट ही हमारे रहने के लिए भी प्रबन्ध कर दिया। वह धर्मपरायण थीं, इसलिए उन्होंने हमें काफी सहयोग दिया। अब कुछ समय वहाँ ही प्रवचन चलते रहे। सुनने वालों की संख्या नित्य बढ़ती ही गयी। यहाँ भी कई-एक को दिव्य साक्षात्कार होते। दिव्य बुद्धि के दाता परमपिता परमात्मा ने हमें जो दिव्य ज्ञान दिया था, हम वह सुनाती थीं और परमात्मा स्वयं दिव्य-दृष्टि का वरदान देकर जन्मजन्मान्तर भक्ति करने वाली कई आत्माओं को दिव्य साक्षात्कार कराते थे। परन्तु जो लोग सत्संग में नहीं आते थे और जिनका खान-पान आदि अशुद्ध था, वे भला इन बातों को कहाँ समझ सकते थे ?

ऋषिकेश में विश्व-शान्ति के बारे में धर्म-सम्मेलन

उसी वर्ष विश्व शान्ति-सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए एक निमन्त्रण आबू में यज्ञ-माता के पास आया था। यह निमन्त्रण-पत्र शिवानन्द जी ने ऋषिकेश से भेजा था। उन्होंने ही उस सम्मेलन का आयोजन किया था। यज्ञ-माता ने ब्रह्माकुमारी दीदी मनमोहिनी जी, सन्तरी जी, गंगा जी तथा ब्रह्माकुमार आनन्द किशोर को उस सम्मेलन के लिए ऋषिकेश भेजा

था। उस सम्मेलन के विषय में ब्रह्माकुमारी सन्तरी जी ने बताया कि:–

"उस सम्मेलन में विदेशों से भी बहुत से प्रतिनिधि आये हुए थे। हमारे ईश्वरीय विश्व-विद्यालय ने भी भाषण किया था जोकि सभी को बहुत अच्छा लगा। परन्तु सम्मेलन में दो दिन के कार्यक्रम के बाद, तीसरे दिन आये हुए प्रतिनिधियों में झगड़ा हो गया। शायद यह झगड़ा इस कारण हुआ था कि भारत के विभिन्न धर्मों के कुछ देशी प्रतिनिधि विदेशी भाषा (अंग्रेजी) में उस सम्मेलन में बोले थे परन्तु कुछेक हिन्दी भाषा-भाषी प्रतिनिधियों ने इसका कड़ा विरोध किया और आखिर काफी गर्मा-गर्मी हुई। इस समय शिवानन्द जी, जोकि हँसमुख और शान्तिप्रिय स्वभाव के थे, वहाँ उपस्थित नहीं थे। हमने मन में सोचा कि देखो, भाषा-भेद, देश-भेद आदि के आधार पर ऐसे शान्ति-सम्मेलनों में 'धार्मिक नेता' कहलाने वाले लोग भी आपस में लड़ते और एक-दूसरे पर कुर्सियाँ उठाकर फैंकते हैं ! धर्म-ग्लानि का यह स्पष्ट लक्षण नहीं तो और क्या है ? आज पवित्रता और शान्ति रूपी स्वधर्म को छोड़ कर सभी क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि के वशीभूत हैं। धर्म का तो पहला पाठ ही यह है कि हम सभी आत्माएँ हैं और शान्ति हमारा स्वरूप है। परन्तु आज यदि ये प्रतिनिधि लोग भी हिंसा पर उतर आते हैं और स्वरूप को भूलकर देह-अभिमान तथा क्रोध के वशीभूत आसुरी लक्षण अपनाते हैं तो स्पष्ट है कि दैवी सम्पदा का जो प्राय: लोप हो चुका है और अब स्वयं भगवान् के अवतरण का समय है। आज की स्थिति के बारे में कवि ने ठीक ही तो कहा है कि:–

मानव आज बना है दानव,
उसका कितना पतन पराभव।
सब हैं हुए देह-अभिमानी,
काम-क्रोध-अब अवगुण खानी।
सब में व्यापित क्रोध अहं मद,
कर्म-वचन-मन बिगड़े अनहद।

सारी सृष्टि हो चुकी गंदी,
माया के पिंजड़े की बन्दी।
लुप्त प्राय: सत्‌-धर्म जगत्‌ में,
दूर हुए हैं सब श्रीमत्‌ से।
साधु-सन्त विद्वान भ्रमित हैं,
वे भी क्रोध-वश हुए पतित हैं।
कौन करे पतितों को पावन?
सिवा तुम्हारे हे परमात्मन्‌!

शिवानन्द जी से वार्त्तालाप

अस्तु, एक दिन शिवानन्द जी ने हमसे विशेष वार्तालाप किया। उन्होंने यज्ञ-पिता का कुशल समाचार पूछा और कहा कि सचमुच उनका यह कमाल है कि उन्होंने इतनी माताओं-कन्याओं का ऐसा उच्च जीवन बनाया है !

फिर वह बोले –''क्या आप यज्ञ-वत्सों में लड़ाई-झगड़ा नहीं होता?'' हमने कहा –''नहीं। हमें शिक्षा ही यह मिलती है कि आत्मिक दृष्टि को अपनाना है, दिव्य गुण धारण करने हैं और गुण-ग्राहक बनना है। हम तो सभी एक ईश्वरीय कुल के सदस्यों की तरह रहते हैं। यज्ञ-पिता हैं, यज्ञ-माता हैं और हम उनके धर्म के बच्चे हैं ; हम सभी प्रेम से रहते हैं।''

शिवानन्द जी बोले –''कमाल है! मैंने तो यहाँ बहुत यत्न किया है कि माताएँ भी यहाँ आध्यात्मिक लाभ उठायें। मैंने उनके लिए अलग व्यवस्था भी की। परन्तु तीन-चार बार कोशिश करने पर भी मेरा यह प्रयत्न सफल नहीं हुआ क्योंकि वे आपस में झगड़ पड़ती हैं। आप ढाई-तीन सौ माताएँ-कन्याएँ एक साथ ही चौदह वर्ष तक इकट्ठी रही हैं, यह एक बहुत बड़ी बात है! दादा ने यह बहुत अद्‌भुत और सराहनीय कार्य किया है। दादा से कहना कि वह हमें भी कुछेक माताओं का सहयोग दें जो कि यहाँ

माताओं की क्लास का संचालन करें.........।''

तब हमने इन्हें बताया कि —''यह कार्य स्वयं परमपिता परमात्मा ही यज्ञ-पिता द्वारा करा रहे हैं। उस सर्वशक्तिमान् परमपिता के सिवा कोई मनुष्य तो यह कार्य कर ही नहीं सकता। उस प्रभु ने ही हमारा जीवन उच्च बनाया है।

उस सम्मेलन में भी हमने सभी लोगों को ईश्वरीय साहित्य, निमन्त्रण-पत्र तथा अपना पता दिया था। इस प्रकार ईश्वरीय सेवा करके हम आबू वापस लौट गयीं।''

इधर देहली में इन दिनों ब्रह्माकुमारी बहनों को एक माता ने लाला जगन्नाथ जी की धर्मशाला के निकट ही अपने घर में आमन्त्रित किया और अब वे वहाँ ही सत्संग करती थीं। सत्संग में आने वाले भाई-बहन अब ईश्वरीय ज्ञान पर बहुत ही मुग्ध थे। परन्तु ब्रह्माकुमारी मनोहर इन्द्रा जी कहती हैं —''हमें अब यज्ञ में लौटने का संकल्प-प्रबल रूप से आया क्योंकि वहाँ से निकले हमें लगभग दो मास हो चुके। जब हमारे लौटने की घड़ी आयी तब सत्संग में आने वाले भाई-बहिनों का मन यह सोचकर बहुत उदास-सा हो गया कि अब हमें यह ज्ञान सुनने का अवसर नहीं मिलेगा। उन्होंने न जाने के लिए बहुत आग्रह किया। परन्तु हमें तो जाना ही था।

इस प्रकार हम कुछ दिन देहली में अलौकिक सेवा करके और अपने उस निमन्त्रण का समय पूरा करके वापस आबू लौट आयीं। दूसरे यज्ञ-वत्स भी इसी प्रकार कुछेक दिन ज्ञान-सेवा करके लौट आये। बाबा ने देखा कि ये थोड़े-से दिन कुछ ही आत्माओं की सेवा कर वापस लौट आयी हैं। जैसे छोटे बच्चे घर में ही रहने में खुश रहते है और घर से निकल कर धन्धा करना इन्हें पहले-पहल अच्छा नहीं लगता है, बाबा ने देखा कि वैसे ही अभी यज्ञ-वत्सों को दूसरी आत्माओं की ज्ञान-सेवा करने का इतना शौक नहीं है। अत: बाबा ने हम में फिर से मनुष्य-आत्माओं के प्रति उपकार तथा

करुणा की भावना भरनी शुरू की। बाबा कहते — ''बच्ची, अब आपको केवल अपने दैहिक सम्बन्धियों की ज्ञान-सेवा नहीं करनी है, बल्कि जितनी भी मनुष्यात्माएँ इस सृष्टि में हैं, ये सभी ही तो आत्मिक नाते से आपके सम्बन्धी हैं। अत: इन सभी पर ज्ञानामृत की वर्षा करके इन्हें निहाल करना है। बच्ची, अन्धों की लाठी बनना है। यह ठीक है कि आपके जो मित्र-सम्बन्धी शुरू में आपका विरोध करते थे और जिन्होंने आप पर अत्याचार किए थे, उनको आपने ईश्वरीय सन्देश देकर अपने कर्त्तव्य का पालन किया है परन्तु आप ज्ञान-गंगाओं का कर्त्तव्य है कि वास्तव में सारे भारत को पावन करना है। नदियाँ एक जगह ठहरती नहीं हैं बल्कि नगर-नगर से बहती हुई, जन-जन की प्यास बुझाती हैं। अत: आप जाओ और भारत के नगर-नगर में विकारों से तृप्त हुई आत्माओं की सुख-शान्ति की प्यास इस ज्ञानामृत से तृप्त करो....।''

अत: बाबा के इन जोरदार महावाक्यों को सुनकर हम कुछ दैवी बहनों ने बैठकर ईश्वरीय सेवा की योजना बनाई। बाबा का विशेष ध्यान भारत की राजधानी अर्थात् देहली पर था। बाबा कहते कि — ''यहाँ से ही सतयुगी राज्य की कलम लगनी है। इसी बीच देहली की कुछेक बहनों तथा भाईयों ने, जोकि वहाँ हमारे सत्संग में आया करते थे, यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता को एक पत्र लिखा कि हम ज्ञानामृत के बिना तड़प रहे है और ब्रह्माकुमारी बहनें हमें छोड़कर वापस आपके पास आ गयी हैं। उन्होंने बाबा से अनुनय किया कि ब्रह्माकुमारी बहनों को वापस ज्ञान-अमृत की वर्षा करने के लिए भेजा जाये। अत: अब बाबा ने हमें फिर से जाने के लिए प्रेरित किया। हम कुछेक दैवी बहनों ने मिलकर ईश्वरीय सेवा की योजना बनाई। आखिर हम फिर देहली के लिए रवाना हुई।''

ब्रह्माकुमारी ध्यानी जी, जोकि वर्तमान समय अम्बाला में ईश्वरीय सेवा में तत्पर थीं और जिन्हें दिव्य दृष्टि भी प्राप्त है, लिखती हैं कि जब हम देहली में पहुँची तो सत्संग की कई माताएँ तथा कई भाई हमारे स्वागत के

लिए आये थे। उन्होंने हमारे ठहरने के लिए प्रबन्ध तो पहले से ही कर रखा था। अत: अब फिर से हमने ईश्वरीय ज्ञान की क्लास प्रात: तथा सायंकाल प्रारम्भ कर दी और देहली के कई क्षेत्रों में तथा थियोसॉफिकल सोसाइटी आदि-आदि धार्मिक स्थानों पर हमारे प्रवचन भी समय-समय पर होते रहे।

कुम्भ के मेले पर एक ओर ज्ञान-गंगा दूसरी ओर जल-गंगा

उन्हीं दिनों हमें इलाहाबाद में कुम्भ के मेले पर जाने का भी निमन्त्रण मिला था। जो दैवी बहनें कलकत्ता में गयी हुई थीं, उनके सत्संग में आने वाले किसी जिज्ञासु ने वहाँ ब्रह्माकुमारी बहनों के लिए व्यवस्था करा दी थी। देहली में भी बहनों के सम्पर्क में एक शास्त्री जी आये थे। उन्होंने भी वहाँ इलाहाबाद में पधार कर भाषण करने के लिए निमन्त्रण दिया था। अत: बाबा ने बहुत-सी बहनों को कुम्भ के मेले पर आत्माओं की ज्ञान-सेवा के लिए भेजा था।

ब्रह्माकुमारी बृज शान्ता जी, जोकि आजकल पूना सेवा केन्द्र पर ईश्वरीय ज्ञान तथा योग की शिक्षा देती हैं, लिखती है कि-''उस मेले पर लाखों नर-नारी आये थे। अनेकानेक संन्यासियों, शास्त्रियों और आचार्यों ने प्रवचन के लिए अपने-अपने यहाँ व्यवस्था की हुई थी। हमें उनमें से प्राय: सभी ने भाषण के लिए निमन्त्रण दिया था। उनमें से एक प्रमुख साधु 'प्रभुदत्त ब्रह्मचारी' जी ने भी हमें दो-तीन बार अपने मंच पर भाषण करने का अवसर दिया था। प्रतिदिन कई स्थानों पर हम भक्त लोगों को ईश्वरीय सन्देश देती थीं। हमें बहुत-से ऐसे जिज्ञासु भी मिले जिन्होंने कि हमें स्वेच्छा से और अपने ही खर्चे से हमें 'ईश्वरीय निमन्त्रण' तथा अन्य कई फोल्डर आदि-आदि छपवा दिए। इस प्रकार के कई लाख ईश्वरीय निमन्त्रण पत्र तथा फोल्डर हमने नर-नारियों को दिये। उनमें परमपिता परमात्मा के अवतरण की सूचना तथा आने वाले समय की पहचान दी गई थी।

हम अपने प्रवचनों में लोगों को 'कुम्भ' तथा 'संगम' का वास्तविक

परिचय भी देती थीं। हम उन्हें बताती थी कि वास्तव में कलियुग के अन्त और सतयुग के आरम्भ का सन्धि समय ही 'संगम' अथवा 'पुरुषोत्तम संगम युग' है जबकि परमपिता परमात्मा इस सृष्टि में आकर माताओं-कन्याओं को ज्ञानामृत का कलश अथवा कुम्भ देते हैं। वही माताएँ-कन्याएँ ही ज्ञान-गंगा, ज्ञान-यमुना तथा ज्ञान-सरस्वती बनकर भारत के नर-नारियों को ज्ञान-जल अथवा ज्ञानामृत द्वारा पतित से पावन बनाने का कर्त्तव्य करती हैं। उसी की याद में गंगा-यमुना-गुप्त सरस्वती नदी के संगम पर आज तक लोग कुम्भ का मेला मनाते आते हैं। अब फिर वही संगम युग चल रहा है। परमपिता परमात्मा शिव ने प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा हम गंगा-सरस्वती आदि कन्याओं-माताओं को ज्ञानामृत का कलश (कुम्भ) दिया है। आप उस ज्ञान-स्नान के द्वारा अब स्वयं को पावन कर पुण्य के भागी बन सकते हो। यह जल तत्व तो केवल शरीर को ही पावन कर सकता है। आत्मा इससे पावन नहीं होती। आत्मा ज्ञान-स्नान से पावन होती है...।'' परन्तु लाखों मनुष्यों में से किसी बिरले ही मनुष्य की बुद्धि में यह बात धारण हुई। हमने देखा कि साधुओं-संन्यासियों ने भोली-भाली जनता को खूब अन्ध-श्रद्धा में फँसा रखा था।

लोग जल में ही स्नान करके आत्मा को पावन हो गया मानते थे। वे 'जय-गंगा मैया' बोल कर ही अपने कर्त्तव्य की पूर्ति समझते थे। उन्हें कहीं भी ज्ञान-गंगा में स्नान करने, दिव्य-गुणों की स्पष्ट शिक्षा नहीं दी जा रही थी। बल्कि हर जगह कुम्भ के मेले का महात्म्य, गंगा-स्नान से होने वाले पुण्य तथा संगम के फल का ही बखान किया जा रहा था। स्वयं संन्यासी, 'जगद्गुरु' साधू आदि, जो कि आत्मा को निर्लेप मानते हैं, भी पावन होने के विचार से डुबकी लगा रहे थे। बल्कि उनमें होड़ लगी थी कि पहले कौन-सा साधु-सम्प्रदाय स्नान करेगा और फिर कौन सा ! इसी होड़ तथा जनता की अनियन्त्रित भीड़भाड़ के परिणामस्वरूप वहाँ एक पुल भी टूट गया था और कई लोग भगदड़ में मरे भी और पुल टूटने से दुर्घटना और

मृत्यु के शिकार हुए थे। परन्तु फिर भी मनुष्यों ने कोई शिक्षा ग्रहण नहीं की। हम उन्हें कहती थीं –

विकारों में न फँस बन्दे, अगर ईश्वर को पाना है।
विकारों में न फँस बन्दे, अगर सतयुग में जाना है।
आपको भुलाया, बाप को भुलाया,
अकेला ही तू आया था, अकेला लौट जाना है !
विकारों में न फँस बन्दे अगर बैकुण्ठ में जाना है !!
आया था पार्ट बजाने, कर्मों को श्रेष्ठ बनाने,
तू फँस गया मोह-माया में, इसी को घर बना बैठा !!
विकारों में न फँस बन्दे, अगर मुक्ति को पाना है।
माया से नाता तोड़ो, ईश्वर से नाता जोड़ो,
बनो तुम शुद्र से ब्राह्मण, अगर सतयुग में जाना है।
विकारों में न फँस बन्दे अगर मुक्ति को पाना है।।

परन्तु वे सुनी बात को अनसुनी कर देते थे, क्योंकि वे तो आत्मा को निर्लेप माने बैठे थे और स्वयं कोई पुरुषार्थ नहीं करना चाहते थे बल्कि गंगा को ही उन्होंने पतित से पावन बनाने का कर्त्तव्य दे रखा था।

भारत की भोली जनता की यह दशा देखकर हम कन्याओं-माताओं के मन में बहुत करुणा का उद्रेक होता था। हम बहुत सोचती थीं कि हम इन्हें अन्ध-श्रद्धा के गर्त से कैसे निकालें और तत्व भक्ति की जंजीरों से कैसे छुड़ायें! हम कहतीं –''हाय भारत की जनता, तुम्हारा कैसा हाल हो गया है!! करोड़ों रुपये, समय तथा शक्ति इन वृथा मेलों पर वृथा ही जाती है जबकि दूसरी ओर करोड़ों लोगों को भर-पेट भोजन भी नहीं मिलता। स्वतन्त्र भारत की सरकार भी इस अन्ध-श्रद्धा के पोषण में अपना हाथ देती है क्योंकि उसे भी विशेष रेलगाड़ियाँ चलाकर तथा यात्री कर (Pilgrim Tax) आदि लेकर करोड़ों रुपयों की कमाई होती है। हाय, कोई भी इन्हें

स्पष्ट शब्दों में सच्ची बात नहीं बताता !''

मनुष्यों का एक अथाह समुद्र वहाँ उमड़ रहा था। कुछ ही दिनों में लोग लौट गये। यात्रा के कष्ट झेल कर, धन खर्च करके वे लोग आए थे परन्तु उन्होंने प्राप्त क्या किया? हमारे मन में बहुत दया आती कि हम कन्याएँ-माताएँ ही अब भारत के जन-जन की अथक ज्ञान-सेवा करेंगी।

इस प्रकार लोगों के सम्पर्क में आने से हमें संसार की हालत का और अच्छी तरह पता लगा। हमने अनुभव किया कि सचमुच आज दुनिया की ऐसी हालत हो गई है और आज इन्सान अन्ध-श्रद्धा, तत्व-पूजा तथा गुरुडम की जंजीरों में ऐसी बुरी तरह जकड़ चुका है कि उसे इनसे मुक्त करना किसी मनुष्य की सामर्थ्य से बाहर है। स्वयं सर्वशक्तिवान् परमपिता परमात्मा ही इन्हें अज्ञान की गहरी नींद से जगा सकते है। सचमुच परमपिता परमात्मा का इस समय जो अवतरण हुआ है वह बिल्कुल ठीक समय हुआ है। अत: हमें ये शब्द याद हो आते थे –

धर्मों के बाज़ार में है धर्म खो गया
गुरुओं की भरमार में है ज्ञान खो गया
सुख-दु:ख की दौड़-होड़ में है सुख भी खो गया
निराश और अनाथ बन मनुष्य रो रहा,
प्राण-प्राण में दु:खों की लग रही अगन
फिर से जग में आ गए हैं शिव पतित-पावन !
आ गये हैं सन्तों-साधुओं को तारने
आ गए हैं भक्त-जन के दु:ख निवारने
आ गए हैं पापियों को फिर उद्धारने
आ गए हैं बिगड़े भाग्य को संवारने
आ गई प्रभात करती रात का हरन
फिर से जग में आ गए हैं शिव पतित पावन!

एक ओर देश और धर्म की हालत को देखकर और दूसरी ओर परमपिता परमात्मा के वर्तमान समय हुए दिव्य अवतरण को जानते हुए, हम वहाँ सभी मनुष्यात्माओं को स्नेह से और उनकी शुभचिन्तिका होकर कहती थीं –

उठो अब रात बीत चली प्रभात देख लो।
उठो कंगाल सिर पे अपने दोहरा ताज लो॥
युगों की आश मन की मानी आज तृप्ति लो।
मनुष्य सारे बन्धनों से आज मुक्ति लो॥
भगवान आ गए हैं करने आश को पूरण।
फिर से जग में आ गए हैं शिव पतित-पावन॥
ये वक्त की पुकार है पवित्र अब रहो।
ये जिन्दगी का सार है, शिव के हो रहो॥
विष का लेन-देन आज अब ही छोड़ दो।
अन्त का ये काल अब तो राह मोड़ दो॥
बढ़ते आ रहे हैं महामृत्यु के चरण।
फिर से जग में आ गए हैं शिव पतित-पावन॥

वे हमारे इस ईश्वरीय सन्देश पर ध्यान नहीं देते थे क्योंकि वे तो गंगा-जल में डुबकी लगाने से ही पावन होने की आशा लिए बैठे थे! फिर भी हम अपना कर्त्तव्य पालन करने के लिए लोगों को कहती रहती :–

तुम्हें पावन बनाने को, स्वयं भगवान् आये हैं।
उठो अब नींद को त्यागो, जगाने आज आये हैं॥
भागीरथ ब्रह्मा के तन से
वे देते ज्ञान हैं उज्जवल,
नहा लो ज्ञान-गंगा में
यही सन्देश लाये हैं।

तुम्हें पावन बनाने को, स्वयं भगवान् आये हैं।
उठो अब नींद को त्यागो, जगाने आज आए हैं।।

ईश्वरीय सेवा-केन्द्रों की स्थापना

अब देहली में तो एक ईश्वरीय सेवा-केन्द्र कमला नगर में स्थापित हो ही गया था। इधर जो ब्रह्माकुमारी बहनें इलाहाबाद गई थीं, उन्हें वहाँ कानपुर में आकर ईश्वरीय ज्ञान की शिक्षा देने के लिए निमन्त्रण मिला था। कानपुर में जब उस निमन्त्रण पर जाना हुआ तो वहाँ के एक प्रसिद्ध व्यक्ति बाबू हरविलास राय के सम्पर्क में आयें। वह वहाँ के एक उद्योगपति थे, विभिन्न धार्मिक संस्थाओं, जैसे कि आर्य समाज, गुरुद्वारों की प्रबन्धक कमेटी, आहलुवालिया बिरादरी आदि-आदि कमेटी के मान्य सदस्य अथवा प्रधान भी रह चुके थे और उनके यहाँ प्राय: साधू-सन्त आकर प्रवचन करते तथा ठहरा करते थे। उनकी धर्म-पत्नी ने तथा उन्होंने इस ईश्वरीय ज्ञान को समझा और अपने ही विशाल बंगले का एक भाग इसी ईश्वरीय सेवार्थ बहनों को रहने के लिए दिया। अत: वहाँ भी एक ईश्वरीय सेवा-केन्द्र खुल गया।

उससे कुछ ही समय पहले लखनऊ में भी ब्रह्माकुमारी हृदयमोहिनी जी तथा ब्रह्माकुमारी शान्तामणि जी वहाँ के लोगों के निमन्त्रण पर ज्ञान-सेवार्थ गयी थीं और वहाँ भी ईश्वरीय सेवाकेन्द्र स्थापित हो चुका था। इस प्रकार अब लोगों के निमन्त्रण पर स्थायी सेवा-केन्द्र स्थापित होते गये और जनता ही स्वेच्छा से, आपसी आर्थिक सहयोग से, उन सेवा-केन्द्रों को कायम रख-कर प्रतिदिन प्रात: और सायंकाल ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राजयोग से लाभ उठाने लगीं।''

शीघ्र ही गुड़गाँव, मेरठ, सहारनपुर आदि में भी वहाँ-वहाँ के लोगों के निमन्त्रणों पर ईश्वरीय सेवा-केन्द्र खुल गये। लखनऊ और कानपुर में भी जिज्ञासुओं की संख्या बढ़ने लगीं। सभी स्थानों पर अच्छे-अच्छे कुलों के

लोग ईश्वरीय ज्ञान से लाभ उठाने आने लगे। जो भी जिज्ञासु आते थे, उनसे एक परिचय-पत्र अथवा प्रश्न-पत्र भी भराया जाता था ताकि उन्हें भी यह मालूम हो सके कि वे किस उद्देश्य से यहाँ आये हैं और यहाँ उन्हें क्या प्राप्ति होगी। उन द्वारा लिखे गये उत्तरों को लेकर उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान स्पष्ट रूप से समझाया जाता था।

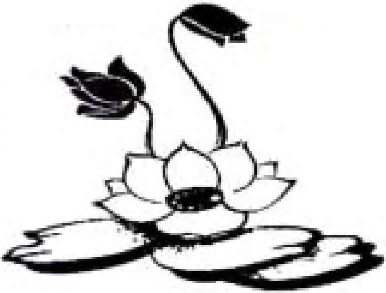

आत्माओं का मिलन

परमपिता परमात्मा तथा प्रजापिता ब्रह्मा से

ब्रह्माकुमारी जानकी जी, जोकि वर्तमान समय ईश्वरीय विश्व विद्यालय की, सहप्रशासिका हैं लिखती हैं कि –''अब जो लोग ईश्वरीय सेवा-केन्द्रों पर नित्य प्रति ज्ञान लेते तथा योगाभ्यास करते थे, उनके जीवन में अलौकिक सुख का अनुभव हुआ तो उनके मन में उमंग पैदा हुई कि हम आत्मा के उस पिता परमात्मा शिव से मिलें। उनके मन में विचार उठा कि जब इन ब्रह्माकुमारी बहनों का जीवन इतना पवित्र और शान्ति सम्पन्न है तो स्वयं ब्रह्मा बाबा का जीवन-अत्यन्त निर्मल और दिव्य गुण सम्पन्न होगा ही। फिर, यह बहनें जो कहती हैं कि –''ब्रह्मा बाबा के साधारण एवं वृद्ध मानवी तन में सभी आत्माओं के परमपिता परमात्मा अर्थात् 'शिव बाबा' आते हैं और वह ही ब्रह्मा बाबा के मुखारविंद से ज्ञान देकर परमधाम लौट जाते हैं, तो यह कौतुक तो अवश्य ही देखना चाहिए। संसार में इससे अधिक महत्वपूर्ण और अद्भुत क्या और कोई बात हो सकती है? त्रिलोकीनाथ, सर्वशक्तिवान् परमपिता परमात्मा सूर्य-तारागण से भी पार, परमधाम से हम आत्माओं को ईश्वरीय ज्ञान देने और पतित से पावन बनाने का उच्च कर्त्तव्य करने नित्यप्रति आते हैं तो यह जो थोड़ा-सा फासला हमारे इस नगर से आबू तक का है, यह उस फासले के सामने तो कुछ भी नहीं है जबकि हमने इस ज्ञान की प्राप्ति द्वारा उसे जाना है, पहचाना है और माना है, तब हम तो एक सेकण्ड भी उनसे मिले बिना नहीं रह सकते। अरे, हम जिस पिता को जन्म-जन्मान्तर पुकारते थे, मन्दिरों, गुरुद्वारों, तीर्थों, पर्वतों की गुफाओं, निर्जन जंगलों और हृदय की गुहा में ढूँढते थे,

अब वह हमारे मन का सच्चा मीत, वह प्रियतम प्रभु आ गया है तो हम उससे मिले बिना एक क्षण भी कैसे रह सकते हैं? उसका परमधाम से आना तो हमारे लिए आल्हाद् का विषय है और हमारा मन तो इस तन की रेल-यात्रा के लिए भी नहीं रुकना चाहता। बल्कि, वह तो आकाश मार्ग से वायु-यान की रफ्तार से उड़ने का धीरज भी अब नहीं कर सकता; वह तो सीधे ही वहाँ पहुँच गया है! परन्तु यह तन भी अब यहाँ पड़ा रहना नहीं चाहता। इसके रोम-रोम में अब एक नशा बस रहा है और यह भी मन का ही साथ देना चाहता है और लपक कर अपने उस प्रभु का हो जाना चाहता है.....।''

अत: वे जिज्ञासु ब्रह्माकुमारी बहनों से कहते —''बहन जी, अब हम अधिक इन्तज़ार नहीं कर सकते। हमने इस ज्ञान को समझने में ही इतना समय लगा दिया है, हमे तो यह समय भी अखर रहा है।''

ईश्वरीय यज्ञ में जाने के लिए नियम

परन्तु वह कहतीं —''अभी आप बाबा से मिलने नहीं जा सकते। वहाँ यज्ञ में वही जा सकता जो ब्रह्मचर्य का पालन करता हो, बाज़ार में बनी चीजें अथवा तामसिक पदार्थ न खाता हो, धूम्रपान न करता हो, जिसने अपने जीवन में अलौकिक परिवर्तन अर्थात् पवित्रता लाई हो, अपनी दृष्टि तथा वृत्ति को शुद्ध किया हो और जिसे ईश्वरीय ज्ञान में पूर्ण निश्चय हो। हमें शिव बाबा की आज्ञा है कि उनसे मिलने के लिए केवल उन्हीं को ले जाया जा सकता है जो सपूत बच्चे बने हों और जिन्होंने आत्मा के पिता को पहचाना हो।

जिज्ञासु पूछते —''बहन जी, 'सपूत बच्चा' किसे कहा जाता है और निश्चय-बुद्धि के क्या चिन्ह अथवा लक्षण हैं?''

बहनें कहतीं —''सपूत बच्चा वह है जो बाप की आज्ञा पर चलता है। बाप की आज्ञा यह है कि मन, वचन, कर्म से पवित्र बनो तथा योग-युक्त बनो। पवित्रता में ब्रह्मचर्य का पहला स्थान है क्योंकि उसके बल से ही दूसरे

मनोविकारों को भी जीता जा सकता है और उसी के आधार पर ही आत्मा का योग भी परमात्मा से लग सकता है। जो इस पहले नियम का पालन करता है तथा अपना आहार-व्यवहार शुद्ध करता है, वही शिव बाबा का आज्ञाकारी, सपूत तथा योग्य बच्चा है, वही उनसे मिल सकता है। ज्ञान में निश्चय होने का प्रमाण मनुष्य के निजी आचरण से मिलता है। यदि किसी मनुष्य को इस ईश्वरीय ज्ञान में निश्चय होगा तो उसके जीवन में अवश्य ही परिवर्तन आया होगा। उसने अपने तमोगुणी स्वभाव को बदला होगा, खराब आदतों को छोड़ा होगा और अब वह ज्ञान के नियमों के अनुकूल चलता होगा।''

कई जिज्ञासु कहते –''बहनजी, हमें बहुत-सी बातों में तो निश्चय है, कुछेक में नहीं है। वहाँ आबू जाकर शायद वह भी निश्चय हो जायेगा।'' अन्य कहते –''बहन जी, हमारे जीवन में कुछ परिवर्तन तो अवश्य आया है परन्तु हमारे संस्कार ऐसे कड़े हैं कि हम इस 'काम' महाशत्रु पर बिजय नहीं पा सकते। आप हमें आबू में बाबा के पास ले चलिये; शायद वहाँ जाकर, उनसे सम्मुख मिलने पर हम अपने इस संस्कार को भी ठीक कर पायेंगे!''

हम ब्रह्माकुमारी बहनें कहतीं –''ब्रह्मचर्य व्रत से ही बुद्धि दिव्य होती है। ज्ञान ही दिव्य चक्षु है। दिव्य बुद्धि और दिव्य चक्षु द्वारा ही तो परमात्मा को जाना जा सकता है। अगर बुद्धि दिव्य नहीं हुई होगी तो वह परमपिता परमात्मा के पवित्र ज्ञान रूप अमृत को धारण कैसे कर सकोगी? ज्ञान रूपी प्रकाश नहीं होगा तो मन रूपी आँख प्रभु को देखेंगी कैसे? अत: पहले आप ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करके बुद्धि को दिव्य करो और ईश्वरीय ज्ञान की अच्छी तरह धारणा करके निश्चय-बुद्धि बनो, तभी हम आपको ले चलेंगी। ब्रह्मचर्य की धारणा न होना ही इस बात का प्रमाण है अभी आप में स्त्री-पुरुष का भान है, अर्थात् अभी आपकी देह-दृष्टि है और आप आत्मा को देखने की बजाय शरीरों को देखते हैं और स्वयं को भी देह मानते हैं।

देह-दृष्टि और देह-बुद्धि होने पर आप तो ब्रह्मा बाबा की भी देह ही को देखेंगे; आप आत्माओं में से परम, जो परमात्मा (परम-आत्मा) शिव, ब्रह्मा बाबा के तन में आते हैं, उन्हें तो आप देख नहीं सकेंगे। देह-बुद्धि होने के कारण आपकी बुद्धि ज्ञान के सूक्ष्म रहस्यों को तो पकड़ नहीं सकेगी और सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमात्मा को तो पहचान नहीं सकेगी। अत: अगर आप ने ब्रह्मचर्य व्रत की धारणा नहीं की होगी और हम आपको आबू बाप-दादा (शिव बाबा और ब्रह्मा बाबा) के पास ले चलेंगी तो हमें दण्ड मिलेगा!''

जिज्ञासु कहते –''बहन जी, क्या बाबा दण्ड भी देते हैं ? बहन जी, हमारा तो यही निवेदन है कि आप हमें ले चलिये। शायद वहाँ जाने से हमारा निश्चय पक्का हो जायेगा।''

ब्रह्माकुमारी बहनें कहतीं –''निश्चय तो ज्ञान से पक्का होता है। ज्ञान-बुद्धि में तभी धारण होता है जब मनुष्य ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करता है और अन्न दोष तथा संगदोष से बचता है। अत: पहले आप इन नियमों का पालन करो ताकि आपके निश्चय की नींव पक्की हो। यदि आप परमपिता परमात्मा से मनोमिलन मनाने के लिये और उससे परम आनन्द और अवर्णनीय अतीन्द्रिय सुख की प्राप्ति के लिये इतना त्याग भी नहीं कर सकते, काम रूप विष को नहीं छोड़ सकते, तो हम आपको बाप-दादा के पास ले जाने में असमर्थ हैं। आप इतनी अनमोल चीज़ को पाना चाहते हैं परन्तु उसके लिये इस काम रूपी दु:खदायक चीज़ को भी नहीं छोड़ सकते! इससे स्पष्ट है कि आपने यह ज्ञान अभी नहीं समझा है। हम आपको लायक बनाकर ही यज्ञ में ले जाना चाहती हैं क्योंकि अपवित्र आत्मा को वहाँ ठहरने की मना है। हंसों में बगुले का बैठना अच्छा नहीं लगता। वहाँ के शुद्ध वातावरण को बिगाड़ने का दोषी हम आपको नहीं बनाना चाहतीं। आप पहले बुद्धि रूपी कलश को 'काम' रूपी विष से खाली कर इसे ज्ञान रूप अमृत से भरो, तभी हम आपको उस सर्वोच्च पिता के पास ले चलेंगी। वरना हमें भी दण्ड मिलेगा।''

जानते हो, ऐसी कच्ची अवस्था वाले जिज्ञासु को लाने वाली ब्रह्माकुमारी के बारे में बाबा क्या कहते हैं और उसे वह क्या दण्ड देते हैं ? बाबा इस विषय में एक प्रसिद्ध आख्यान सुनाते हैं। वह आख्यान यह है कि —''एक परी मृत्युलोक के किसी मनुष्य को देवलोक में अथवा इन्द्र की सभा में ले गयी थी। वहाँ दूसरे देवी-देवताओं के मन में ऐसा महसूस हुआ कि आज इस सभा में मृत्युलोक का कोई विषयी व्यक्ति किसी तरह आ बैठा है। अत: सभा में वायु-मण्डल बिगड़ने के कारण थोड़ी हलचल हुई। आखिर इन्द्र ने पूछा कि कौन परी इस विकारी दृष्टि तथा अशुद्ध वृत्ति वाले मनुष्य को इन्द्र सभा में लाई है ? आख्यान में बताया गया है कि इन्द्र ने उस मनुष्य के साथ परी को भी सभा से निकाल दिया और वह परी मृत्युलोक में एक वृक्ष बन गयी।'' बाबा यह आख्यान सुना कर समझाते हैं कि यह आख्यान इसी इन्द्र-सभा के बारे में है। ज्ञान और योग के परों से युक्त व्यक्ति जो इस कलियुगी मृत्यु-लोक के किसी वासना-युक्त मनुष्य को यहाँ शिव बाबा के पास तथा ब्रह्मा बाबा के पास अर्थात् ज्ञानामृत की वर्षा करने वाले इन्द्र की सभा में लाता है, वह यहाँ के पवित्र, तपस्या से निर्मल हुए वातावरण को बिगाड़ने का दोषी बनता है और इस पाप का दण्ड भोगता है। यों कोई मनुष्य कभी भी वृक्ष नहीं बनता परन्तु बाबा कहते हैं कि वह यज्ञ-वत्स वृक्ष की तरह अवाक् अथवा मूक (गूँगा) बन जाता है, अर्थात् वह सांसारिक बातें भले ही कर ले परन्तु वह ईश्वरीय ज्ञान नहीं बोल सकता। अत: हम आप से कहती हैं कि आप पहले उस सच्ची-सच्ची इन्द्र सभा में जाने के योग्य बन जाओ। पहले आप मोती चुगने वाले गुण-ग्राहक हंस बन जाओ।''

इस प्रकार जिज्ञासुओं को पवित्र बनने की प्रेरणा भी मिलती और उन्हें यह सोच कर खुशी भी होती कि इस सत्संग अथवा यज्ञ के कुछ नियम हैं और ये ब्रह्माकुमारी बहनें इन नियमों पर बहुत दृढ़ रहती हैं। कुछ जिज्ञासु तो पवित्रता की धारणा के लिये पुरुषार्थ करते थे और कई तो

माया-मर्दिनी, तपस्विनी माँ!!

बलिदानों की नव परम्परा,
मरजीवा वत्सों ने डाली।
दैवी वत्सों की सम्भाल कर,
स्नेह छाँव में उन्हें पालकर,
उनमें जीवन नया डालकर,
माँ तुमने दिया कमाल कर।

तुमने ऐसे सत्य सुनाये,
ज्ञान योग के मर्म बताये।
शक्ति-सैन्य की थी सैनानी,
जागृति मर्म उच्चारने वाली।
उठो, उठो हे भारत वासी,
अब यह सृष्टि बदलने वाली!

किया ज्ञान शिव का उच्चारण और मिटाया मोह आवरण।
कर सारा अज्ञान निवारण और सरस्वती बन गयीं तपोधन।

इस सृष्टि को फूलों का बग़ीचा बनाने वाले

सरस्वती मैया

सरस्वती मैया (जो कि 'कामधेनु' के समान सबको वर दिलाने वाली है) जो कहती है — लाडले बच्चो! तीव्र पुरुषार्थ बनने के लिये दो बातें आप सदैव याद रखो। (१) एक बार जो भूल हो जाय उसे दुबारा न होने दो। और (२) शिवबाबा की शिक्षाओं को जीवन का अंग बनाने में तत्पर रहो।''

ब्रह्मा बाबा

ब्रह्मा बाबा (जोकि कल्पवृक्ष के नीचे तपस्या करने वाले कपिल मुनि है) के कमल मुख द्वारा शिव बाबा कहते है — प्यारे बच्चों! अब आप पवित्र एवं योगी बनो क्योंकि मुझे इस सृष्टि को फूलों का बग़ीचा बनाना है। वत्सों! यह बड़ा ही अनमोल समय है। इसे व्यर्थ न जाने दो।''

हताश होकर छोड़ भी जाते थे। वे कहते कि यह बड़ी ऊँची मंज़िल है, यहाँ के बहुत कठिन नियम हैं, हम इन पर नहीं चल सकते। कई ऐसे भी होते जो कहते कि –''हम इस एक जन्म में प्रभु के लिये सब-कुछ करने को तैयार हैं। काम विकार तो है ही 'नरक का द्वार'; इसे छोड़ना क्या कठिन है? जबकि इसे छोड़ने से हमें प्रभु मिलते हैं तो इसे तो हम एक सैकण्ड में छोड़ देंगे।''

अन्य कोई जिज्ञासु कहते –''बहन जी, हम तो सम्पूर्ण निश्चय-बुद्धि हैं। हम कम-से-कम एक मास से तो ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर रहे हैं। हमारा खान-पान अब शुद्ध है। हमारे संस्कारों में भी परिवर्तन आया है। हमारे कुटुम्बी तथा हमारे अड़ोसी-पड़ोसी इसके गवाह हैं। अत: आप हमें तो ले चलो। हम आपको लिख कर देते हैं कि हमें पूर्ण निश्चय हो चुका है। अब उस बाप को मिलने के लिए हमारा मन तड़प रहा है।'' ऐसे जिज्ञासुओं को बहनें यज्ञ में बाप-दादा और यज्ञ-माता के सामने ले जातीं।

यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता परमात्मा से आत्माओं का अनोखा मिलन

ब्रह्माकुमारी जानकी जी कहती हैं कि जब अपने-अपने नगर से जिज्ञासु रेलगाड़ी में सवार होते तो उनके मन की अवस्था अजीब-सी होती थी। उनकी बुद्धि में बस यही विचार होता था कि हम ब्रह्मा-बाबा, शिव-बाबा तथा सरस्वती मैया से मिलने जा रहे हैं। जैसे-जैसे स्टेशन गुज़रते जाते उनके मन की उत्कण्ठा बढ़ती जाती । आबू रोड जाकर जब वे उतरते तो उन्हें सामने से पहाड़ दीखते और वे सोचते कि बस अब तो ऊपर बाबा हमारी इन्तजार में होंगे! न जाने उनके मन में एक अपनापन क्यों महसूस होता और मिलने से पहले ही यह भाव क्यों उमड़ पड़ता कि हम अपने सच्चे बाप के पास अथवा अपने घर जा रहे हैं। उन्हें एक अजीब-से आकर्षण का अनुभव होता।

आखिर वे ऊपर आबू पर्वत पर 'यज्ञ' में जा पहुँचते। बाबा द्वारा पहले

ही यज्ञ-वत्सों को आदेश होता था कि आने वाले जिज्ञासुओं को कहाँ ठहराना है तथा उनकी कैसे व्यवस्था होनी चाहिए। बाबा कहते —''मेरे सिकीलधे बच्चे आये हैं। कल्प से बिछड़े हुए बच्चे आन मिले हैं। देखना, इन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो। माया ने इन्हें जन्म-जन्मान्तर दु:खी किया है और थका दिया है। अब यह बाप के घर आये हैं आत्मा की थकावट दूर करने। अत: इन्हें स्थूल और सूक्ष्म सभी सुविधाएँ देना।''

आत्मा और परमात्मा का मिलन

वह शुभ घड़ी भी आ पहुँचती जब उन जिज्ञासु आत्माओं को ब्रह्मा बाबा और शिव बाबा के सामने ले जाया जाता और सभी यज्ञ-वत्स भी आसपास बैठे देख रहे होते कि ये हमारे नये भाई-बहन आये हैं। बाबा और ममा के सामने बैठे हुए वे जिज्ञासु अपने मन में बड़े प्रसन्न होते। यहाँ आने से पहले तो उनके मन में यह प्रश्न अथवा उत्सुकता बनी रहती थी कि शिव बाबा ब्रह्मा बाबा के तन में कैसे आते होंगे; उनकी प्रवेशता को हम कैसे जान पायेंगे; शिव बाबा से हमारा मिलन कैसा होगा.....!'' परन्तु अब जब वे आकर 'आत्मा-निश्चय' होकर बैठते और बाप-दादा की ओर निहारते तो वे उनकी नजर से निहाल हो जाते। ब्रह्मा बाबा के नेत्रों रूप खिड़कियों से शिव बाबा आत्माओं से मिलते। बाबा —''बच्चे, मीठे बच्चे....'' कहकर पुकारते तथा पुचकारते। परन्तु ये शब्द उच्चारण होने से पहले ही कई जिज्ञासु तो उस चुम्बक के पास ही पहुँच जाते। बाबा और ममा का तन क्या था, इस पृथ्वी पर सुखधाम और शान्तिधाम था। उस पारसनाथ के स्पर्श से ऐसा महसूस होता था कि पवित्रता की धारणा का प्रभाव उनकी प्रकृति पर भी खूब पड़ा है। कहावत भी है कि —''संत बड़े परमार्थी शीतल जिनके अंग, औरों को शीतल करें, दे दें अपना रंग।'' सचमुच उन दोनों के तन में भी ऐसी विलक्षणता थी कि जिससे आत्मा की जन्म-जन्मान्तर की थकावट दूर हो जाती थी। परन्तु उस ईश्वरीय गोद का सौभाग्य उन्हीं को मिल सकता जिन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य की धारणा की

तथा योगाभ्यास की प्रतिज्ञा लिये हुए होते थे। वास्तव में उस मिलन में देह का भान ही नहीं होता था। अपनी देह की भी सुधबुध न होती थी। अशरीरी अवस्था क्या होती है और आत्मा का परमात्मा से मिलन कैसा होता है, उसका जो अवर्णनीय अनुभव उन सुखद क्षणों में होता था, उससे आत्मा गद्‌गद् होती थी। तब मन में इस संसार का कोई संकल्प या आभास नहीं होता था और आसपास बैठे यज्ञ-वत्सों की उपस्थिति का भी पता नहीं रहता था। अहा, आत्मा का परमपिता से वह मिलन ऐसा होता था कि तब बीच में किसी दूसरे की याद, किसी भी प्रकार का कोई संकल्प-विकल्प, मन में कोई भी इच्छा या तृष्णा नहीं होती थी बल्कि एक आत्मा और दूसरा पिता परमात्मा, दोनों बिन्दु आपस में ऐसे स्नेह और चाव से मिलते थे और परमात्मा की ओर आत्मा का ऐसा दिव्य आकर्षण रहता था कि कैसे उनकी व्याख्या करें! एक सैकण्ड में यह स्थिति होती थी कि जिसमें न जमीन का भान, न आसमान का पता रहता था और आत्मा सर्वभावेन परमपिता परमात्मा की होकर अभूतपूर्व आनन्द में, प्रेम में, शान्ति में, शक्ति में, रस में तन्मय होती थी, फिर स्थिति थोड़ी-थोड़ी करके इस ऊँचाई से नीचे की ओर होती थी। परन्तु उस अनुभव की याद में जिज्ञासु खोया रहता था। उस अनुभव को पाने की उसे फिर तीव्र उत्कण्ठा रहती थी। 'परन्तु अब अन्य भाई-बहनों ने मिलना है'- मन में थोड़ा यह संकल्प उठने के कारण वह स्वयं को जैसे-तैसे कन्ट्रोल करता था......।

जिज्ञासुओं का पहले जो यह प्रश्न उठत था कि परमात्मा का मिलन कैसे होता होगा, उस समय वातावरण और वायुमण्डल किस प्रकार होगा, शिव बाबा की प्रवेशता का पता कैसे चलेगा — उनके इन प्रश्नों का उत्तर उन्हें अपने अनुभव में मिलता था। परन्तु यह अनुभव उस घड़ी होता था जिस घड़ी वह प्रश्न भी मन में प्रादुर्भूत न होते थे बल्कि आत्मा एक-टिक होती थी।

जिज्ञासुओं द्वारा अनुभव का वर्णन

ब्रह्माकुमारी हृदयमोहिनी जी कहती हैं कि — जिज्ञासु बाद में जब अपना अनुभव सुनाते थे तो कहते थे कि — 'हम जब बाबा से मिले तो हमने पहले तो एक **दिव्य प्रभाव** (Divine Presence) अनुभव किया। आत्मा में **शान्ति का स्पर्श** गहरा-गहरा होता गया। बाबा से जब दृष्टि ली तो उसमें एक विचित्र स्नेह का अनुभव हुआ। उन नेत्रों से एक **सर्च-लाईट** का आभास हुआ अथवा ऐसा महसूस हुआ कि जैसे कोई अपनी अँगुलियों को बिजली की पावर (Power) वाले शू (Shoe) के दो सुराखों पर रखने से खिंचाव तथा अपने तन में एक करेन्ट महसूस करता है। परन्तु यह खिंचाव और करेन्ट मन को बहुत प्रिय लगता है, आत्मा को सुहाता और भाता है ! आत्मा स्वयं में एक शक्ति का संचार तथा स्वयं पर एक **प्रकाश का एक फव्वार-सा छूटता महसूस करती है।** वह स्वयं को आकाश तत्व की बजाय प्रकाश तत्व में अनुभव करती है। तब कोई अपवित्र संकल्प नहीं उठता है, मन में मलिन संस्कार धुल गए लगते हैं और जीवन में एक अपार हल्कापन, हुल्लास, हिम्मत, उपराम-भाव तथा दिव्यता का अनुभव होता है और मन कहता है कि इसी में ही रमा रहे; इसी का ही रसास्वादन करता रहे। ''जीवन है तो यही है, सुख है तो यही है, मुझे प्यास थी तो इसी चीज की '' — ऐसे ही मन बोल उठता है। ''मुझे और कुछ नहीं चाहिए, मुझे रास्ता मिल गया, मैंने खज़ाना पा लिया, मुझे मंज़िल दिख गई है, मैं स्वरूप में टिक गया- ऐसी गुप्त आवाज़ अन्दर उठती है।'' इससे पहले का जीवन याद नहीं आता; फिर जब यह याद आता है तो अज्ञानता का वह जीवन हेय तथा कौड़ी-तुल्य लगता है।

उस समय वातावरण में अपूर्व खुशी की लहर, शान्ति की तरंगें, स्नेह की उर्मियाँ, दिव्यता के स्पन्दन, एक अनोखे प्रकार का सन्नाटा आत्मा को महसूस होता है और आत्मा उस दिव्य प्रकाश से आलोकित, एक पवित्र प्रभाव से परिपूर्ण वातावरण में स्वयं को शरीर से न्यारी होती हुई-सी

महसूस करती है क्योंकि आत्मा को तो परमात्मा खींचने लगता है और देह अलग होने लगती है।

कुछ इस प्रकार के अनुभव जिज्ञासु अपनी-अपनी अवस्था के अनुसार सुनाते और ब्रह्माकुमारी बहनें भी इस तरह का आदान-प्रदान उनसे करतीं।

ज्ञान-मुरली सुनते समय दिव्य अनुभव

प्रात: ज्ञान-मुरली सुनते समय भी जिज्ञासुओं को एक विचित्र प्रकार का अनुभव होता था। वे देखते थे कि वह मुरली सर्व आत्माओं के प्रति ही चलाई गई है। वह सभी धर्मों, सभी देशों, सभी वर्गों के लोगों के लिए है। उसमें तीनों कालों तथा तीनों लोकों का ज्ञान समाया हुआ है। उसमें सुनाने वाला साधुओं, महात्माओं, जगत्गुरुओं, ऋषियों-मुनियों, देश के राष्ट्रपति तथा राजनैतिक नेताओं, राजाओं-महाराजाओं, आदि-आदि से भी उच्च अधिकार के स्वर (Authoritative Voice) से बोलता है और ऐसे बोलता है जैसे परमधाम से आया हो, स्वयं 'काम'-आदि विकारों से बिल्कुल ही निर्मल, सर्वशिक्तवान् तथा ज्ञान का सागर हो। उसके ज्ञान का आधार न कोई शास्त्र है, न कोई प्रचलित विचारधारा। उस ज्ञान की सीमा न एक जाति या काल विशेष है, न 'धर्म-विशेष'। वह बोलता भी ऐसे है जैसे कि उसने हमारा कल्याण करके ही छोड़ना हो, हमें पवित्र बनाने का कर्त्तव्य करके ही रहना हो। वह हमें ''बच्चे-बच्चे.....''भी ऐसे स्वाभाविक तरीके से तथा स्नेह से कहता है जैसे हम सचमुच उसके 'बच्चे' हों और वह हमारा 'बाप' हो। हम उसे जानें-न-जानें, मानें-न-मानें, परन्तु उसका व्यवहार ऐसा है जैसे कि वह हमें जानता और पहचानता है और पक्की तरह हमें अपना मानता है! वह हमें पुचकारता और दुलारता भी ऐसे है जैसे कि उसका प्यार हिलोरें लेता हो और उसका स्वाभाविक गुण ही प्यार करना तथा सभी का कल्याण करना और सभी को पतित से पावन बनाना हो। हम उससे रूठ जाएँ तो भी वह हमें मनाता है: हम सो जाएँ तो वह जागती-ज्योति हमें जगाता है, हम कर्त्तव्य-विमुख हो जायें तो वह हमें जतलाता

तथा सुझाता है; कदम-कदम पर वह हमारे जीवन की जिम्मेवारी लेता है।

वे बाबा के पास बैठकर बाबा को अपने किये विकर्मों का चिट्ठा बताते। तो भी बाबा की दृष्टि उनके लिए 'घृणा की दृष्टि न बनती बल्कि उनके उन संस्कारों से निकालने का ही वे सदा पुरुषार्थ कराते। उनका प्यार पहले की तरह बना रहता। वह अभी-अभी मुरली में बहुत ही ओजस्वी भाषा में संन्यासियों, शास्त्रवादियों, राजनीतिज्ञों या सामान्य व्यक्तियों को किसी महान् भूल के लिये फटाकरता है; लगता है कि उसमें शायद आवेश है परन्तु वास्तव में उसमें आवेश है ही नहीं क्योंकि एक ही क्षण में विषय को पलटकर मधुर मुस्कान से वह दूसरी बात कहने लगता है और उन संन्यासी-आदि को भी अपने बच्चे मानते हुए उनके जीवन के एक पहलू (पवित्रता) के लिए उनकी सराहना भी करता है। उसकी बात से पता चलता है कि वह निर्वैर है, निर्भय है, अकाल-मूर्त और अव्यक्त मूर्त है। वह जिसके तन में (अर्थात् ब्रह्मा बाबा के तन में) आया है, उसे स्वयं से अलग बताता है। उसके हाव-भाव (Expressions), उसकी वाणी, उसका ओज, उसका प्यार ही न्यारा है।

जिज्ञासु सोचते थे कि 'बाबा से हम अमुक बात पूछेंगे, अथवा हमारे मन में अमुक-अमुक जो संकल्प उठते हैं, उनका समाधान हम बाबा से लेंगे।' परन्तु वह उसी दिन या अगले ही दिन देखते कि बाबा ने जो मुरली चलाई है, उसमें उन्हीं प्रश्नों पर प्रकाश डाला है, मानो कि वह मन को जानता हो। वे अपने मन में सोचते कि यदि हमारा योग सच्चा है तो शिव बाबा हमें विशेष प्यार करेंगे और हमें दुलारेंगे और वे देखते कि उनके मन की बात का उत्तर उन्हें बाबा के व्यवहार से मिलता। ब्रह्मा बाबा कहते कि —'मैं अन्तर्यामी नहीं हूँ, परन्तु बच्चे जो संकल्प करते हैं, वह शिव बाबा के पास पहुँचते हैं और वह मेरे तन में आकर यदि उचित समझते हैं तो उन्हें मुरली में उस विषय पर समझा जाते हैं।''

इस प्रकार, एक नि:स्वार्थ और अलौकिक प्यार, एक दिव्य प्रभाव, एक

विचित्र आकर्षण तथा वातावरण में शान्ति, पवित्रता और आनन्द की लहरों को अनुभव करके और मुरली में विशेषताओं की ओर ध्यान देकर बहुत-से जिज्ञासुओं को प्रैक्टीकल रीति से यह निश्चय हो जाता कि शिव बाबा ब्रह्मा बाबा के तन में आकर हमें पढ़ाते हैं।

ब्रह्माकुमारी कुंज जी, जो कि वर्तमान समय पटना में ईश्वरीय ज्ञान और योग की शिक्षा देती है कहती है कि - जिज्ञासु जितने दिन यज्ञ में रहते थे, उनकी मनोस्थिति संसार से न्यारी और प्यारी हो जाती थी। उन्हें न दिन याद रहता था न तिथि, मानों वे काल की परिधि से ऊपर उठ गये महसूस करते थे। उन्हें ऐसा लगता था जैसे कि वे आज ही तो यज्ञ में आये हैं। परन्तु उन्हें यह भी अनुभव होता था कि वे तो पहले से ही इस दैवी परिवार के अथवा बाबा के हैं। जब पहली बार वे बाबा से मिलते थे तब बाबा उनसे पूछते भी थे —''बच्चे, क्या पहले भी कभी बाबा से मिले हो?''

जिज्ञासु का बाबा से मधुर संवाद

जिज्ञासु उत्तर देते – ''हाँ बाबा, ५००० वर्ष पहले भी आप से मिले थे।''

बाबा कहते – ''क्या यह पक्का निश्चय है कि यहीं, इसी स्थान पर, आज के दिन हू-बहू ऐसे ही मिले थे? भला कितनी बार बाबा को पहले भी मिल चुके हो?''

जिज्ञासु कहते – ''बाबा, हमें पूरा निश्चय है कि हम आपके बिछड़े हुए बच्चे कल्प-कल्प आपसे हू-बहू इसी तरह मिलते रहे हैं। बाबा, ज्ञान के आधार पर हम जानते हैं कि हम अनगिनत बार आपसे मिल चुके हैं।''

बाबा कहते – ''अच्छा यह तो बताओ कि आपके कितने बच्चे है ?''

जिज्ञासु के जितने बच्चे होते, वह बता देता।

तब बाबा कहते – ''क्या, 'शिव' बाबा को भुला दिया है ? क्या परमात्मा को अपना वारिस नहीं बनाया है ? जब तक उसको वारस नहीं

बनाओगे तब तक उससे वर्सा कैसे लोगे ?''

बाबा की ये बातें सुनकर सभी हँस पड़ते। जिज्ञासुओं का अपने दैहिक बच्चों से मोह निकाल कर परमपिता शिव की ओर मन को लगाने की बाबा की ये रमणीक युक्तियाँ थीं।

फिर बाबा पूछते – ''क्या आप कभी रोयेंगे तो नहीं?''

जिज्ञासु बोलते – ''नहीं बाबा, अब हम कभी नहीं रोयेंगे।''

मुस्करा कर बाबा कहते – ''सच कहते हो? क्या पति मरे, (या पत्नी मरे), बच्चा मरे, कुछ भी हो जाय, कभी नहीं रोयेंगे?''

वह कहते – ''नहीं बाबा, अब हम कभी नहीं रोयेंगे।''

बाबा कहते – ''यह बच्चा तो सचमुच देही-अभिमानी और नष्टोमोहा है। हाँ बच्चे, जब तुम्हें शिव बाबा मिल गया है तो रोने की तो कोई बात नहीं रह जाती। रोती तो विधवा है। तुम आत्मा को तो अविनाशी पति परमात्मा मिला है।''.

इस प्रकार, बाबा भिन्न-भिन्न रीति से जिज्ञासुओं को देही-निश्चय (Soul-Conscious) बनाते रहते। वे उनसे पूछते – ''अच्छा यह तो बताओ, आप विजिटर (Visitor, मेहमान) हो या वारिस (बच्चे) हो? देखो 'विजिटर' वे होते हैं जो यहाँ बाबा को केवल देखने के लिए आते हैं। 'वारिस' वे कहाते हैं जो बाबा के 'बच्चे' बन जाते हैं।

जिज्ञासु कहते – ''बाबा, हम तो आपके बन चुके हैं। हम तो वारिस हैं। हमने ज्ञान द्वारा शिव बाबा को पहचान लिया है और अब सुख-शान्ति का खज़ाना, जोकि हमारा ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार है, वह हम उनसे लेकर ही छोड़ेंगे।''

प्रात:क्लास में मुरली सुनने के बाद बाबा इस प्रकार बच्चों को चेम्बर (Chamber) में अनौपचारिक रीति से ज्ञान की वार्ता से बहलाते रहते। वह उन्हें बहुत ही प्यार से अपने हाथों से प्रसाद भी खिलाते जिसे कि वे 'टोली' कहते थे। हाथ में देने की बजाय, जैसे छोटे-छोटे बच्चों को वृद्ध

दादा मुख में कोई मीठी चीज़ खिलाता है, वैसे ही वे भी मुख में मीठी-मीठी 'टोली' देते, साथ-साथ मीठी दृष्टि से देखते रहते, मीठी-मीठी बातें करते रहते। वे कभी माथा चूम कर कहते — ''यह बच्चा अच्छा है, यह अच्छी तरह धारणा करके, बहुतों का कल्याण करेगा!'' ..... यह मीठा बच्चा है, यह बहुतों को सुख देगा.....।'' इस प्रकार वे माया पर विजय प्राप्त करने का बल भर देते।

बूढ़ी माताओं तथा वृद्ध पुरुषों को देखकर वे कहते — ''यह हमशरीक (हमारे-जैसे) हैं। ये अनुभवी है, ये किसी को ज्ञान सुनायेंगे तो इन्हें शोभेगा, क्योंकि ये बुजुर्ग है। ये घर को सच्चा सच्चा आश्रम बना सकते हैं।'' इस प्रकार वे कुमारों को, कुमारियों को, सभी को अनेकानेक युक्तियों से ज्ञान के नशे में झुलाते रहते।

फिर वे सभी को पर्वत पर घुमाने ले जाते। वहाँ भी वे उन्हें ईश्वरीय ज्ञान तथा योग की मधुर चर्चा से बहलाते रहते।

यज्ञ की स्थूल सेवा में उपस्थित होकर बाबा का प्रेरणादायक बातें सुनाना

ब्रह्माकुमारी प्रकाश इन्द्रा जी, कहती हैं कि बाबा वापस आकर यज्ञ-वत्सों के साथ ब्रह्मा-भोजन के लिये सब्जी काटने आदि-आदि जैसे स्थूल कार्यों में भी जुट जाते थे। सभी यज्ञ-वत्स कहते — ''बाबा, यह कार्य हम बच्चों का है। आप इतना उच्च कार्य करते हैं, यह स्थूल काम हमें करने दीजिये। आपके वृद्ध हाथ हैं, उन्हें यह कार्य करते देखकर हमारे मन को न जाने क्या होता है.....।''

बाबा कहते — ''मैं भी शिव बाबा का बच्चा हूँ। हमारा तो कर्म-योग है। यदि हम स्थूल कार्य न करें तो यह 'कर्मयोग' कैसे सिद्ध होगा ? बच्ची, यज्ञ की सेवा सर्वोत्तम सेवा है। इसके लिये तो दधीचि ऋषि की तरह हड्डियाँ देनी हैं। तन,मन,धन से हर प्रकार की सेवा करनी है। हमारा यह अलौकिक जन्म ही सेवा के लिए है। स्वयं शिव बाबा कहते है कि

—'मैं आत्माओं की सेवा पर उपस्थित हुआ हूँ।' तो हम बच्चों को भी तो सेवाधारी बनना है। हर प्रकार का कार्य करते हुए भी शिव बाबा की याद में रहने का अभ्यास करना है ताकि स्थिति एकरस और योग निरन्तर हो जाये.....।'' इस प्रकार की युक्तियाँ देकर बाबा अपनी बात मनवा लेते।

फिर सभी बच्चे नाश्ता करते। बाबा भी ईश्वरीय सेवा-केन्द्रों पर आने वाले नये बच्चों के पत्रों का उत्तर देने के लिए उन्हें पत्र लिखते। वे पत्र क्या होते, वे अमृत के प्याले अथवा संजीवनी बूटी की तरह काम करते। उन्हें पढ़ने से आत्मा को एक रूहानी नशा चढ़ जाता। उनमें इतना माधुर्य, इतना स्नेह, इतनी कल्याणकारी बातें, इतना ज्ञान छलकता था कि उन्हें पढ़-पढ़कर आत्मा गद्‌गद् हो जाती। क्या कभी किसी ने सोचा होगा कि आत्मा को परमात्मा से पत्र भी आ सकता है? इस विषय में एक गीत भी है कि —''भगवान् तुझे पत्र लिखता अगर तेरा पता मालूम होता....'' परन्तु अब तो उसने अपना बता पता दिया था। प्रतिदिन न जाने कितने पत्र आबू में इस पते पर जाते थे —

सेवा में,
परमपिता परमात्मा शिव
मार्फ़त प्रजापिता ब्रह्मा,
बृज कोठी,
आबू पर्वत (राज.)

आबू डाकखाने के कर्मचारी भी यह पता पढ़कर आश्चर्यान्वित होते। सभी पत्र इसी पते पर आते , परन्तु वे इसके अर्थ को जानने का भरसक प्रयत्न करते तभी तो इसे जान पाते। इस बात को तो अनुभवी ही जान सकते हैं, दूसरे लोगों के लिये तो यह एक अविश्वसनीय बात होगी।

बाबा के पत्रों के उन सुनहरी अक्षरों के लिए, उन मधुर शब्दों के लिए जिज्ञासु लोग तड़पते रहते। सेवा-केन्द्र पर पत्र आते ही चारों ओर सभी

ऐसे इकट्ठे हो जाते, न जाने उन्हें उस पत्र को सुनने से क्या मिलेगा ! हरेक को नाम से याद किया होता, हरेक को ''सिकीलधे, नूरे रत्न, मीठे-मीठे बच्चे'' — ऐसे शब्दों से सम्बोधित किया होता।

दिन में कई बार योगाभ्यास अथवा ईश्वरीय याद रूप यात्रा की क्लास होती। सभी उस अभ्यास से अपनी अवस्था को अव्यक्त बनाते और आत्मा में लाईट तथा माइट भरते अथवा आत्मा रूपी बैटरी को चार्ज करने का पुरुषार्थ करते।

मधुबन में रात्रि-क्लास

ब्रह्माकुमारी पुष्प शान्ता जी लिखती हैं कि -

रात्रि की क्लास में बाबा और ममा जब सभी के सामने आकर बैठते तो वह दृश्य भी देखते बनता था। दोनों दिव्यमूर्त तथा दोनों के मुखमण्डल पर पवित्रता की अनोखी झलक, और अद्भुत तेज। दोनों की भृकुटि में आत्मा का उजाला। दोनों मधुर मुस्कान से, स्नेह भरे नयनों से निहारते। अहो, पृथ्वी पर अजीब कौतुक हो रहा था और करोड़ों मनुष्यों को इसका पता भी न था! ठीक ही तो कहा गया है कि 'जब परमपिता ने सृष्टि में आकर सौभाग्य बाँटा तो बहुत-से लोग वहाँ देर से पहुँचे और बहुत-से तो (अज्ञान-निद्रा में) सोये ही रहे।' धन्य हैं वह आँखें जिन्होंने सभी आत्माओं के प्रजापिता ब्रह्मा को तथा जगदम्बा सरस्वती को अपने सामने बैठे हुए देखा और ज्ञान-चक्षु से ब्रह्मा बाबा में पधारे हुए शिव बाबा को भी देखा! धन्य हैं वे कान जिन्होंने उनके मुखारविन्द से आत्मा को आलोकित, आनन्दित और निर्मल करने वाले उन मधुर महावाक्यों को सुना!! धन्य हैं वे मानव-शरीरधारी जिन्होंने उन माता-पिता की अलौकिक, धर्म-गोद का दिव्य सुख लूटा। धन्य हैं वे जिन्होंने उनके पवित्र हाथों से 'टोली' पायी। क्या वह दृश्य सदा नहीं रह सकता?

वह दोनों दिव्य मूर्तियाँ जब क्लास में आतीं तो उनके आने का ढंग, बैठने की रीति, उनकी प्रीति, उनके निहारने की विधि न्यारी होती। पहले

'ममा' (यज्ञ-माता) क्लास में आकर कहतीं —''सभी ठीक बैठे हो?

'ठीक' का मतलब है कि मनसा, वाचा, कर्मणा, तीनों प्रकार से ठीक हो? किसी प्रकार के कोई संकल्प-विकल्प तो परेशान नहीं करते? देखना, इतने ऊँचे बाप के पास आकर किसी प्रकार के संकल्पों में पड़कर स्वयं को घाटे में न डालना। यह जीवन बड़ा अनमोल है। व्यर्थ संकल्पों में समय न गँवा देना। अच्छा, कोई स्थूल-सूक्ष्म 'सेलवेशन'(Salvation वस्तु आदि) चाहिए हो तो बताना। अपने बाप के घर में बैठे हो, किसी प्रकार की लज्जा न करना। बोलो, जिसको कोई सेलवेशन चाहिए हो, वह हाथ खड़ा करे।''

यह पूछ लेने के बाद वह कहतीं —''अच्छा, सारे दिन में कोई भूल-चूक की हो, कोई ऐसा काम किया हो जो मन को खाता हो तो बताओ। बताकर मन को हल्का कर दो। उस पर समझाया जायेगा तो आगे के लिये मन की वह बीमारी ठीक हो जायेगी। वरना यदि अन्दर ही अन्दर बीमारी रखोगी तो बीमारी बढ़ जायेगी और एक दिन घातक सिद्ध होगी.....।''

फिर बाप-दादा आते, सभी की दृष्टि उस ओर जाती। उनका बैठना-उठना सभी को बहुत ही मधुर और अलौकिक लगता। क्लास में खुशी की लहर के साथ-साथ सन्नाटा छा जाता। अपना स्थान ग्रहण करके, बच्चों की ओर देखते हुए वे कहते —'ममा, सभी से खुश-खैराफत पूछी? सभी से सेलवेशन पूछी?'' देखो बच्चे, बाप-दादा के घर आए हो सुख पाने के लिए। लज्जा न करना। यहाँ शिव-बाबा का सारा भण्डारा सो आप बच्चों का है। जिसके खान-पान की जैसी आदत हो, तबीयत को जैसा अनुकूल पड़ता हो वैसा बनवा सकते हो। यह शरीर बहुत ही अनमोल है क्योंकि इस द्वारा शिव बाबा की याद में रहकर जन्म-जन्मान्तर के विकर्म दग्ध करने हैं। भले ही यह काम-विकार से पैदा हुआ-हुआ और तमोगुणी तत्वों का बना हुआ है परन्तु इस जन्म में जबकि ईश्वरीय ज्ञान मिला है तो इस द्वारा अविनाशी कमाई बहुत हो सकती है। इसलिए इसकी सम्भाल करते रहना। हाँ, इसमें मोह न रखना, शरीर को एक ओर भुलाने का भी पुरुषार्थ

करना है परन्तु साक्षी होकर इस अमानत को संभालना भी है। बच्चे, अगर आती बार कोई कम्बल, चादर, आदि-आदि कोई भी चीज ले आना भूल गये हो तो यहाँ शिव बाबा के भण्डारे में सब-कुछ है। सब मिल सकता है। आप घर के बच्चे हैं, कोई भी चीज ले सकते हैं। बाबा कहते हैं कि किसी प्रकार की भी यहाँ तकलीफ सहन न करना। हाँ, बाबा केवल एक तकलीफ देते हैं। वह यह कि — बस, निरन्तर शिव बाबा को याद करो और पवित्र बनो तथा दिव्य गुण धारण करो। ज्योतिस्वरूप बाप को याद करने की मेहनत है परन्तु उसमें भी वास्तव में कोई तकलीफ थोड़े ही है? बाप (शिव बाबा) न तो किसी विशेष आसन पर हठ करके बैठने के लिए कहते है न कोई उपवास या प्राणायाम आदि करने का कष्ट देते हैं। इन सभी तकलीफों से तो बाबा छुड़ा देते है। बस इतना फमाते हैं कि बुद्धि द्वारा मुझे याद करो तो तुम्हारे जन्म-जन्मान्तर के विकर्म दग्ध होंगे, खुशी का पारा चढ़ेगा और देह का भान मिट जायेगा और फिर पवित्र होकर वापस मेरे पास अपने परमधाम में आ जाओगे....।''

''अच्छा ममा, बच्चों से पूछा, किसी ने कोई भूल तो नहीं की ? बच्चे, अब भूलों को मिटाते जाओ। जन्म-जन्मान्तर ज्ञान न होने के कारण बहुत भूलें कीं हैं। अब ज्ञान मिला है, सोझरे में आये हो तो भूलें मत करना वरना अब सौगुणा अधिक दण्ड मिलेगा। यहाँ तक्दीर बनाने आये हो, तक्दीर को लकीर न लगा देना। इस ऊँचे बाप की अवज्ञा न करना। भूलों को इससे न छिपाना। यह बाप धर्मराज भी है। यहाँ बता दोगे तो आगे के लिए सावधानी मिल जावेगी, वरना फिर धर्मराजपुरी में दण्ड पाना पड़ेगा,क्योंकि स्वयं को ईश्वर के बच्चे मान कर फिर भी भूल करना, इसका बहुत बड़ा दण्ड मिलता है। अच्छा बच्चे, अब तो आप समझदार बने हो क्योंकि ज्ञान मिला है। आप बहुत ही सौभाग्यशाली हो। आपको कहा ही जाता है - ''लक्की स्टार्स'' (Lucky Stars) क्योंकि आप जो आत्मा रूपी तारे हो, ज्ञान द्वारा अपना सौभाग्य ऊंचा बना रहे हो। अच्छा बच्चे, अब बैठो अपने

अति प्रिय शिवबाबा की याद में! अशरीरी हो जाओ और बुद्धि को ले जाओ परमधाम में। बस, दिन-भर यही अभ्यास करते रहो ताकि अवस्था परिपक्व हो जाये। बस, यही धुन लगी रहे कि मैं आत्मा हूँ, परमधाम से इस सृष्टि-मंच पर पार्ट बजाने आयी हूँ, अब यह सृष्टि-ड्रामा पूरा हुआ, अब मुझे वापस परमधाम जाना है। चलो बच्चे, अब बुद्धि को ले जाओ शिव बाबा के पास। देखो, तुम बैठे तो फर्श पर हो परन्तु तुम्हारी बुद्धि सदा अर्श पर (आकाश से भी परे) परमधाम में रहती है। संसार के लोग देह-अभिमानी हैं और ईश्वर को जहाँ-तहाँ सब में व्यापक मानते हैं, इसलिए उनकी बुद्धि भटकती रहती है। आपको लक्ष्य स्पष्ट रूप से मिला हुआ है; अब उसमें स्थित हो जाओ...।''

अहा, बाबा के ऐसा बोलते-बोलते सभी वत्सों की आत्मा, शिव बाबा की याद में एकटिक हो जाती। ऐसा मालूम होता है कि शिव बाबा बहुत ही लाईट और माईट दे रहे हैं। जी करता है कि बस ऐसे ही बैठे रहें, यह सुख लूटते ही रहें। कभी तो यह रेकार्ड बज रहा होता —

''कहाँ ले चले हो, बता दो मुसाफिर
सितारों से पीछे ये कैसा जहाँ है....''

इसे सुनते-सुनते आत्मा, सूर्य, चाँद और तारों के भी पार, अर्थात् परमधाम में शिव बाबा (मुसाफिर) की याद में स्थित हो जाती । कभी गीत बजता —

''तू प्यार का सागर है,
तेरी एक बूंद के प्यासे हम....''

योगाभ्यास करने वालों का मन बोल उठता -

आज समय कितना सुन्दर है,
आज का दिवस महान्।
शिव बाबा से मिलने निकली,
ब्रह्मा की सन्तान।

हल्के फुल्के पंछी बन,
आकाश में उड़ते जाते हैं,
सूरज, चाँद, सितारे भी,
पीछे रहते जाते हैं।
परमधाम के बेहद घर में,
वो देखो क्या चमक रहा है!
सूक्ष्म बिन्दु दिव्य सितारा,[१]
जगमग जगमग दमक रहा है।
यही तो अपने शिव बाबा हैं,
जो करते कल्याण।
शिव बाबा से मिलने-निकली,
ब्रह्मा की सन्तान।
ज्ञान के सागर, प्रेम के सागर,
आनन्द रूप बनाते हैं,
इनकी महिमा कही न जाये,
क्या-क्या कर दिखलाते हैं!
धन्य हैं, धन्य वे बच्चे,
जो बनते उनकी सन्तान।
शिव बाबा से मिलने निकली,
ब्रह्मा की सन्तान।
आज समय कितना सुन्दर है,
आज का दिवस महान्।
शिवबाबा से मिलने निकली,
ब्रह्मा की सन्तान।

---

१. ज्योति बिन्दु शिव

इस प्रकार आत्मा ज्योतिस्वरूप परमपिता परमात्मा के प्यार से विभोर होकर उसके प्यार के रसास्वादन में तन्मय हो जाती। फिर क्लास समाप्त हो जाने पर सभी चुप-चुप ही वहाँ से उठकर अपने-अपने स्थान पर चले जाते।

इस प्रकार दिन गुजरते पता न चलता और आखिर जिज्ञासुओं के विदा होने की घड़ी भी आ पहुँचती। बाबा-ममा हाल में आकर बैठते। जाने वाली सारी पार्टी उनके सामने बैठतीं। एक-एक करके सभी बाबा-ममा के पास टोली लेते, मिलते और विदा होते। इधर रेकार्ड बज रहा होता — 'बचपन के दिन भुला न देना; आज हँसे कल रुला न देना....'' बाबा कहते -''सुन रहे हो, यह गीत क्या कह रहा है ? अब आपको फिर से बचपन मिला है क्योंकि आप ईश्वरीय विद्या के विद्यार्थी हो। यह विद्यार्थी जीवन (God-fatherly student life) सबसे श्रेष्ठ है। गीत कहता है कि यह जीवन भुला न देना। ज्ञान लेते-लेते कहीं शिव बाबा को छोड़कर फिर माया की ओर न चले जाना, विकारों के गढ़े में न गिर जाना।''

विदा होने के समय का मार्मिक दृश्य

ब्रह्माकुमारी शील इन्द्रा जी कहती हैं कि —''सभी एक-एक करके बाबा और ममा से मिलते, बाबा उनकी निजी धारणाओं को ऊँचा उठाने के लिए कभी कानों में और कभी प्रत्यक्ष रूप से शिक्षा भी देते और सभी के मुख में 'टोली' भी देते। फिर पीठ थपथपा कर कहते —''अच्छा बच्चे, जाते हो?'' तब सभी के नेत्र भीगे हुए होते ।

बड़ी आयु वाले जिज्ञासुओं की तो क्या कहें, छोटे-छोटे बच्चों की भी बाबा से ऐसी प्रीति जुट जाती थी कि जब वापस लौटने का समय आता तो वे जाने से इन्कार कर देते और इधर-उधर कहीं छिप जाते ताकि उन्हें कोई ढूँढ न पाये और गाड़ी का समय निकल जाय। जब उन्हें ढूँढ लिया जाता और वापस घर चलने के लिए कहा जाता तो वे कहते कि —'हम तो यहाँ बाबा के पास रहेंगे। अब हम यहाँ से और कहीं नहीं जायेंगे...।''

इतना प्यार करेगा कौन ?

यह कितने सौभाग्य की बात है कि जन्म-जन्मान्तर हम जिस भगवान् को प्रसाद चढ़ाते आये हैं, वही अब संगमयुग में प्रजापिता ब्रह्मा बाबा के तन में आकर अति स्नेह से हमें टोली (प्रसाद) देते हैं।

सर्व गुणों की दिव्यमूर्ति प्यारे बाबा!

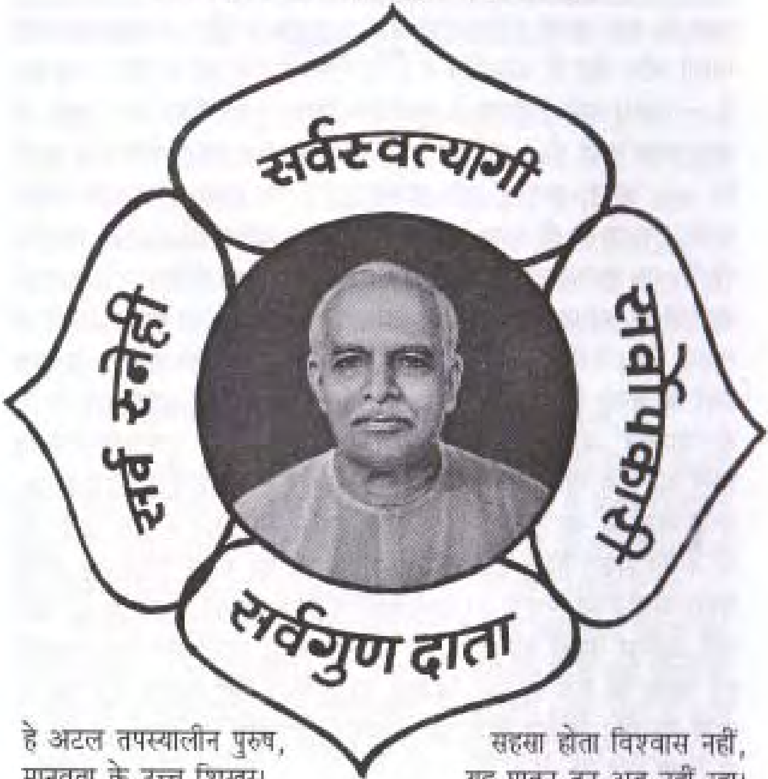

हे अटल तपस्यालीन पुरुष,
मानवता के उच्च शिखर।
गीता-ज्ञान तुम्हारे पावन
मुख कमल से गया निखर।
हे शान्ति-दूत तेरे माध्यम से,
शान्ति का सन्देश सुना।
भूमण्डल पर श्रेष्ठ परम तन,
प्रभु जिसका रथवान बना।

सहसा होता विश्वास नहीं,
यह पावन तन अब नहीं रहा।
सम्पूर्ण हुआ अब प्रजापिता,
उसने अव्यक्त रूप गहा।
हम दिव्य दृष्टि तो प्राप्त करें,
देखें वह रूप नया निखरा।
कानों में अब भी गूंज रही,
'बच्चे, बच्चे' की मधुर गिरा।

हे वन माली! भावी विश्व का तुमने अनुपम बाग सजाया।
दैवी गुण श्रृंगार-युक्त कर, शूल-शूल को फूल बनाया।

बाबा के साथ उनका इतना स्नेह जुट जाता कि वे लौकिक माता-पिता की ममता और मोह से आकर्षित न होते। तभी तो प्रभु की स्मृति में यह पद है –''ओम् नमो शिवाय ! तुम्हीं हो माता, तुम्हीं पिता हो, तुम्हीं हो बन्धु,सखा तुम्हीं हो....।'' वह बच्चे बाबा का हाथ पकड़ लेते और कहते कि – ''बाबा, हम तो नहीं जायेंगे....।'' तब बाबा उन्हें कहते-''मीठे बच्चे, तुम तो हो ही बाबा के। बाबा तुम्हें अब सर्विस (Service) पर भेज रहे हैं। तुम जाकर दूसरे बच्चों को भी शिव बाबा का परिचय दो। तुम इन बड़ों से भी अधिक सर्विस कर सकते हो। देखना, क्रोध न करना, किसी से लड़ना नहीं। ऐसे दैवी चलन से चलना कि सभी कहें कि यह तो सचमुच ईश्वर का बच्चा है! फिर जल्दी-जल्दी तुम पण्डा बन कर आना। तुम तो हो ही 'महात्मा' और पवित्र क्योंकि ब्रह्मचारी हो। लोगों पर तुम अपना प्रभाव डाल कर उन्हें भी पावन बनने के लिए उत्साह दे सकते हो।'' इस प्रकार, बच्चे बाबा की यह उत्साह-वर्द्धक बातें सुनकर अब जाने के लिए उन्हे 'न' भी न कर सकते परन्तु उन्हें वहाँ से लौटने का मन भी न होता। तब उनका चेहरा अजीब-सा लगता था। भोले-भाले बटुक बाबा को देखते ही रह जाते और आखिर उनकी आँखों से प्रेम के मोती बरस पड़ते और एक चमकती हुई माला का रूप ले लेते जिसका दूसरा सिरा नहीं मिलता था। फिर वे बाबा की गोद में बैठ जाते और अपने गीले नयनों को हाथ और कलाई से छिपा लेते...।

फिर सभी जाने के लिए तैयार होते, उधर गीत बज रहा होता –

''भगवान् तेरे घर का श्रृंगार जा रहा है...।''

सभी के नेत्रों से प्यार की बूँदें टपक पड़तीं। जाते-जाते वे पीछे निहारते रहते। बाबा और ममा.....'टा-टा' कहते रहते, रुमाल हिला-हिला कर सभी को विदा देते। कई बार तो वे यज्ञ-भवन के गेट तक जाकर छोड़ आते। फिर सारा रास्ता जिज्ञासुओं को शिव बाबा की और यज्ञ-वत्सों की याद आती रहती। वे मन ही मन में सोचते कि पता नहीं हम वहाँ से वापस क्यों

चले आये? हाय, हमने अमरलोक से मृत्युलोक में आने की बात पता नहीं क्यों मान ली....!!''

अब उनका स्नेह बाप-दादा से और यज्ञ-माता से जुट जाता और उन्हें बाबा जो शिक्षा देते, उसी स्नेह में वे उसे धारण करते और जीवन को उच्च बनाने तथा दूसरों की भी ईश्वरीय सेवा करने में तत्पर हो जाते।

इस प्रकार, जिज्ञासुओं का आबू में आना-जाना लगा रहता। नये-नये सेवा-केन्द्र भी खुलते जाते और ईश्वरीय सेवा-कार्य विस्तार को प्राप्त होता जाता। अब कई सम्मेलनों के आयोजकों से भी, ब्रह्माकुमारी बहनों को भाषणों के लिए निमन्त्रण मिलने लगे थे।

सम्मेलनों में सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रण

सन् १९५३ में अमृतसर से भी एक प्रसिद्ध संन्यासी निर्मल स्वामी जी के यहाँ से एक वेदान्त सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रण मिला था। उसमें ब्रह्माकुमारी जानकी जी तथा रुक्मिणी जी का जाना हुआ था। उस सम्मेलन के बारे में ब्रह्माकुमारी रुक्मिणी जी लिखती हैं कि :—

'निर्मल स्वामी जी ने वेदान्त सम्मेलन का जो आयोजन किया था, उसमें सम्मिलित होने के लिए हम देहली से गई थीं। उन्हें यह पहले से ही बता दिया गया था कि हम किस गाड़ी में आयेंगी। अत: वहाँ से कुछ शिष्ट व्यक्ति स्टेशन पर स्वागत के लिए आये थे। चूँकि अन्य सभी सन्यासी तथा साधु अपने-अपने स्थानों से फर्स्ट क्लास में ही आए थे, अत: सम्मेलन के आयोजकों ने सोचा था कि हम भी फर्स्ट क्लास में ही होंगीं। इसलिए वे हमें फर्स्ट क्लास के डब्बे में देखने आए थे परन्तु हम तो सदा तीसरे दर्जे के छकड़े में ही यात्रा करती थीं। अत: हमें जब आयोजकों की ओर से आया हुआ कोई व्यक्ति न दिखाई दिया तो हम अपने डिब्बे से उतर कर गेट के निकट पहुँची तो इतने में स्वागत समिति के लोग आये और बोले कि —'हम तो आपको फर्स्ट क्लास के डिब्बे में देखने गए थे।' खैर, वे हमें सम्मेलन के स्थान की ओर ले गए। अन्य

संन्यासियों के लिए तो उन्होंने वहाँ टैंट लगाये हुए थे। हम माताओं-कन्याओं के लिए उन्होंने सम्मेलन के स्थान के निकट ही एक मकान में स्थान ले दिया जोकि अभी नया-नया बना था। हमने जब स्थान ग्रहण किया तो वे हमारे लिए कॉफी, दूध, देसी घी तथा कच्ची सब्जी का भरा हुआ एक थाल ले आये। हमने थोड़ा-सा दूध और थोड़ी-सी सब्जी रख ली और बाकी सब-कुछ उन्हें लौटा दिया। इस बात का उन पर अच्छा प्रभाव पड़ा क्योंकि अन्य साधु-संन्यासी तो उनसे खूब माल लेते थे। निर्मल स्वामी जी भी हमारे पास आये और उन्होंने दो माताओं को हमारे यहाँ आवश्यक कार्यों के लिए रख दिया। वह माताएँ हमें कहतीं —''लाओ हम आपके कपड़े धो दें; आपका खाना बना दें; आपकी टाँगें दबा दें।'' परन्तु हम उनसे कहतीं कि हम अपने कपड़े स्वयं ही धोती हैं, हम खाना भी अपने हाथों से बनाती हैं और हम किसी से सेवा लेकर अपने ऊपर कर्मों का बोझ नहीं चढ़ातीं। ये जो हमारे नियम थे, इनसे वे बहुत प्रभावित हुईं। वे बोलीं —''संन्यासी तो अपने वस्त्र भी हम लोगों से धुलाते हैं; आपका कमाल है कि आप सारा कार्य स्वयं करती हैं! आप अपने बर्तन भी स्वयं साफ करती हैं !''

सम्मेलन में मंच बहुत बड़ा बना हुआ था और उस पर काफ़ी साधु-सन्यासी बैठे होते थे। उस पर एक ओर हम दोनों दैवी बहनें बैठी होतीं थीं। जनता का हम दोनों की ओर रोजाना ध्यान जाता था कि कि प्रवक्ताओं में मंच पर, ये दोनों 'देवियाँ' कौन हैं और इनका भाषण कब होगा? आखिर एक दिन ब्रह्माकुमारी जानकी जी का भाषण हुआ।

उनके भाषण से पहले अन्य साधु-संन्यासियों के जो भाषण हुए थे, उन सभी में शंकराचार्य जी का अद्वैत सिद्धाँत प्रतिपादित किया गया था। ''एक ब्रह्म ही सत्य है, जगत् मिथ्या है'' इस वाद को लेकर ही विभिन्न प्रवक्ता बोले थे। परन्तु जानकी बहन जी ने आत्मा और परमात्मा का अन्तर बताया था। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि परमात्मा जन्म-मरण और सुख-दुःख

के चक्र से न्यारा है, वही पतित-पावन और सुख-शान्ति का दाता है, उससे योग लगाने से ही सद्गति हो सकती है। वही धर्मग्लानि के समय अवतरित होकर गीता-ज्ञान देता है। आत्मा को परमात्मा मानना ही भ्रम अथवा मिथ्या ज्ञान है। बहुत-से भक्तों ने, इस भाषण को बहुत पसन्द किया। परन्तु सम्मेलन के आयोजकों ने सोचा कि हमारे अद्वैतवाद के मंच से आत्मा और परमात्मा को पुत्र और पिता के रूप में अलग बताया जा रहा है - यह ठीक नहीं है। अत: उन्होंने मुझे भाषण का अवसर नहीं दिया, हालाँकि उन्होंने घोषणा की हुई थी कि इन दोनों का भाषण होगा। प्रतिदिन वे मंच से घोषणा करते थे कि दूसरी बहन का (अर्थात् मेरा) भी भाषण होगा परन्तु हर रात्रि को प्रोग्राम का अन्त होने के बाद वे कहते कि "समय के अभाव" के कारण बहन जी का भाषण आज नहीं रखा जा सका।" इस प्रकार उन्होंने सप्ताह का कार्यक्रम पूरा कर दिया। लोगों को उनका यह व्यवहार अन्यायपूर्ण लगा। कई लोगों ने आयोजकों को उलाहना भी दिया।

सम्मेलन के स्थान के निकट जहाँ हम रहती थीं वहाँ सारा दिन हम लोगों को ज्ञान सुनाने में व्यस्त रहती। अब जब सम्मेलन समाप्त हुआ तो लोग हमसे पूछने लगे कि अब आप कहाँ जायेंगी? हमने कहा कि हमें जो निमन्त्रण मिला था, वह समाप्त हुआ है, अत: अब हम वापस देहली जायेंगी। परन्तु वे हमें रहने के लिए आग्रह करते थे। उनका बहुत आग्रह देखकर, हमने उनसे कहा कि हम निर्मल स्वामी जी के निमन्त्रण पर आयीं थीं; यदि वे कहेंगे कि आप लोग कुछ दिन ठहरें तब हम ठहरेंगी वरना नहीं। तब उनमें से कई माताएँ, भाई आदि निर्मल स्वामी जी के पास गये और उन्होंने उनसे कहा कि इन बहनों को अभी कुछ दिन हमारे निमन्त्रण पर ठहरने के लिए कहा जाय। वे माताएँ तथा पुरुष अमृतसर के गिने-चुने परिवारों में से थे। अत: निर्मल स्वामी जी उनकी बात को टाल न सके। वे उनके साथ ही हमारे यहाँ आये और बोले कि —"इन लोगों की इच्छा है कि अभी कुछ समय आप इस नगर में इनके निमन्त्रण पर ठहरें और ज्ञान-

वर्षा करें। सो यदि हो सके तो आप इनकी बात स्वीकार कर लें।'' अत: हम वहाँ ठहर गयीं। जिस दिन हमें वहाँ से विदा होना था, निर्मल स्वामी जी हमारे पास बादामों से भरा हुआ एक थाल लिवा आये। उस थाल में हमारे आने-जाने का किराया भी रखा था। परन्तु हमने उन्हें एक तरफ़ का किराया लौटा दिया। हमने कहा कि हम आपके निमन्त्रण पर आई तो थीं, परन्तु अभी हम वापस जा तो नहीं रही हैं, अभी तो हम इन लोगों के निमन्त्रण पर यहाँ कुछ समय के लिए ठहर रही हैं। अत: हम जाने का किराया नहीं लेंगी।''

परन्तु अब हमें निमन्त्रण देने वाले दो परिवार थे और दोनों अपनी-अपनी ओर हमें ले चलने के लिये आग्रह करते थे। आखिर दोनों को राजी करने के लिए हम दोनों बहनों में से एक बहन एक निमन्त्रण पर और दूसरी दूसरे निमन्त्रण पर चली गयीं। हम प्रात:काल क्लास कराके फिर दिन में दोनों मिलती थीं और ईश्वरीय सेवा का प्रोग्राम बना लेती थीं। दो-चार दिनों में देहली से और बहनें भी आ गयीं और अब शहर में कई स्थानों पर हमारे प्रवचन होने लगे।

अब सत्संग सुनने वालों की संख्या काफ़ी बढ़ चुकी थी। अच्छे-अच्छे परिवार ज्ञान से लाभ उठा रहे थे। परन्तु अब कई लोगों ने देखा कि प्रचलित मन्तव्यों और इन बहनों के मन्तव्यों में काफ़ी अन्तर है। बहनें परमात्मा को सर्वव्यापी नहीं मानतीं बल्कि भिन्न मानती हैं। इस-इस प्रकार के ईश्वरीय ज्ञान-बिन्दु कई लोगों को तो बहुत युक्ति-युक्त मालूम हुए और अन्य कोई अन्ध श्रद्धालु लोगों को कथा-वाचकों ने तथा शास्त्रवादियों ने भड़का दिया। अत: कुछ लोगों ने आना बन्द कर दिया और जो निष्पक्ष थे, अपने विवेक का प्रयोग करके सुनने वाले थे तथा दूसरों के बहकावे में आने वाले नहीं थे, वे नित्य प्रति आते रहे। उनके जीवन की धारणा ऊँची उठी है। कुछ लोगों ने उन्हें भी हमारे यहाँ जाने से रोकने के लिए बाद में धरना भी लगाया परन्तु किसी के रोकने से भला ऐसा कोई व्यक्ति रुक सकता

है? जिसके जीवन में अलौकिक परिवर्तन हुआ हो और जिसका निश्चय अपने ही अनुभव तथा विवेक पर टिका हो; क्या वह लोक-लाज की परवाह करता है? नहीं। अत: अब वहाँ भी स्थायी ईश्वरीय सेवाकेन्द्र बन गया....। अत: अब जन-जन को प्रभु का सन्देश दिया जाने लगा जिसे कवि ने अपने पदों में इस प्रकार कहा है : –

मनोरम ज्ञान का दाता
सहज अति योग सिखलाता
सदाशिव विश्व का त्राता
मनुष्यो, लो उठो पीलो, अमृत वरदान लाया है
स्वयं भगवान् आया है!

तमस् के स्वप्न घुलते हैं
अमा के बन्ध खुलते हैं
हृदय के पुष्प खिलते हैं
प्रकाशित प्राण-मन करने कोई दिनमान लाया है
स्वयं भगवान् आया है!

शुभ यह काल संगम का
स्वयं शिव के समागम का
सभी के प्राण प्रियतम का
पुन: दैवी विजय का सृष्टि में जय-गान छाया है
स्वयं भगवान् आया है!

ईश्वरीय सेवा के विभिन्न कार्यक्रम

अब स्थान-स्थान पर भाषणों द्वारा दीपावली, महाशिवरात्रि, रक्षाबन्धन, जन्माष्टमी, होली आदि-आदि विशेष-विशेष उत्सवों पर विशेष आयोजनों द्वारा तथा ईश्वरीय सेवा-स्थानों पर नित्यप्रति प्रात:, सांयकाल तथा दिन-भर ज्ञान की क्लासों द्वारा, और भी कई तरह से ईश्वरीय सन्देश लोगों तक पहुँचाने का यत्न किया जाता था। जो भी पुस्तक-पुस्तिका, फोल्डर आदि छपाये जाते थे, उनकी एक-एक प्रति पत्र-सहित सभी प्रदेशों, देशों और विदेशों के राजाओं-महाराजाओं को, भारत के विभिन्न नेताओं को, देश-विदेश की विख्यात लाइब्रेरियों (Libraries) को, विश्वविद्यालयों को, धार्मिक सभाओं आदि-आदि को भेजी जाती थी।

उदाहरण के तौर पर जुलाई, सन् १९५३ में अन्य महाराजाओं के अतिरिक्त नेपाल के महाराजा को भी साहित्य भेजा गया तथा दिसम्बर १९५३ में भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी को आबू में राजसूय अश्वमेध अविनाशी ज्ञान-यज्ञ में पधारने के लिए ईश्वरीय निमन्त्रण भी दिया गया। उन्होंने इसके लिए धन्यवाद तो लिख भेजा परन्तु वे आये नहीं।

जुलाई[1] १९५३ में नेपाल सेना के मेजर जनरल सुरा जंग बहादुर राणा तथा सेनाध्यक्ष कमाण्डिंग जनरल हिरण्य शमशेर जी के पत्र भी आये

---

1. "His Majesty's Letter, Ps/N. 129/53, dt. 24-7-1953
Caronation Ceremony of His Highness Maharaja Sir Bheern Shamsher Jung Bahadur Rana, the Late Prime Minister and Supreme Commander-in-chief of Nepal.

थे, जिनमें उन्होंने बाबा के प्रति बहुत ही स्नेह एवं सम्मान व्यक्त किया था। २४ जुलाई, १९५३ को ब्रह्माकुमार विश्व किशोर जी के नाम नेपाल से पत्र आया था[1], जिसमें लिखा था कि –''महाराज भीरन शमशेर जंग बहादुर राणा की ताजपोशी के अवसर पर दादा लेखराज महाराजा के एक मान्य अतिथि थे और इसलिये वे राज्यकुल एवं राजा के निकटतम दायरे में सम्मिलित थे। महाराजा के पोते, मेजर जनरल सुबरना शमशेर जंग राणा के विवाह के अवसर पर दादा लेखराज का खिंचा हुआ एक फोटो-जिसमें वे राजबग्घी में बैठें हैं और राज्यकुल की सुरक्षा-सैनिक उनके पीछे हैं.....।''

गीता जयन्ती के अवसर पर गीता के भगवान् के बारे में स्पष्टीकरण

दिसम्बर, १९५३ में 'गीता जयन्ती' के अवसर पर एक पुस्तिका हिन्दी और अंग्रेजी में छपवाकर आचार्यों, विद्वानों तथा जन-साधारण को बाँटी गयी। उन्हीं दिनों ईसाई लोग भी बम्बई तथा अन्य नगरों में 'मेरी' का वार्षिकोत्सव मना रहे थे। ४ और ७ दिसम्बर १९५३ को बम्बई से प्रकाशित होने वाले पत्र, टाइम्स ऑफ इण्डिया में 'ईसाई' और 'मेरी' के जो चित्र प्रकाशित हुए थे, उसमें ईसा को मोर-मुकुटधारी दिखाया गया था। अत: अब ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की ओर से जो पुस्तिका

---

1. Mr. Lekhraj was one of the guests of His Highness and, as such, was accorded Unreserved access of the closest Royal Circle. There was a photo taken on another Ceremonial occassion in Connection with the marriage Ceremony of His Highness's grandson, Major General Subarna Shmasher Jung Bahadur Rana, M.A., DADA Lekhraj is shown in that photo in the processikon Car accompanied by Royal Guards riding be-hind....."

छपवाई गई, उसमें बताया गया कि कैसे आज भारत के लोग परमपिता परमात्मा के दिव्य नाम, दिव्य धाम और दिव्य कर्त्तव्यों के यथार्थ ज्ञान से अपरिचित हैं और अपने आदि सनातन देवी-देवता धर्म को भी नहीं जानते बल्कि स्वयं को 'हिन्दू' मानते हैं जबकि वास्तव में हमारे धर्म का नाम 'हिन्दू' नहीं है। उस पुस्तिका में अनेक युक्तियों से यह भी बताया गया था कि यद्यपि आज प्राय: लोग मानते हैं कि गीता का ज्ञान भी कृष्ण ने दिया था तथापि सत्यता इससे भिन्न है। यदि सचमुच भगवान् मोर-मुकुटधारी, सजे-सजाये श्री कृष्ण के दिव्य रूप में प्रगट होते तो श्रीमद्‌भगवद्‌गीता, श्रीमद्‌भागवत्, महाभारत आदि ग्रन्थों में यह क्यों लिखा होता कि —"मुझे साधारण तन में देखकर मूढ़मति लोग मनुष्य-तन में आये हुए मुझ परमात्मा को तुच्छ समझते हैं और कि कंस, शिशुपाल आदि ने उन्हें गालियाँ दीं और, अर्जुन क्यों कहता कि मुझे आप अपने दिव्य एवं मोहिन रूप का दर्शन कराओ जबकि मनमोहन रूप में श्री कृष्ण सामने थे ही?"

इस प्रकार, इस पुस्तिका में यह अच्छी तरह स्पष्ट किया गया है कि श्री राधा और श्री कृष्ण तो वास्तव में द्वापर युग में नहीं, बल्कि सतयुग के आरम्भ में हुए जिनका नाम स्वयंवर के पश्चात् क्रमश: 'श्री लक्ष्मी' और 'श्री नारायण' हुआ और कि वास्तव में गीता-ज्ञान परमिपता परमात्मा (शिव) ने कलियुग और सतयुग के 'संगम समय'प्रजापिता ब्रह्मा के साधारण मानवी तन में अवतरित होकर दिया और उस ज्ञान द्वारा जब सतयुग की पुन: स्थापना हो चुकी तथा कलियुगी अधर्मों वाली सृष्टि का महाविनाश भी हो चुका, तब उस पावन दैवी सृष्टि में श्री कृष्ण और श्री राधा आये। इस प्रकार उसमें बताया गया कि वास्तव में भारतवासिसयों के धर्म का नाम 'आदि सनातन देवी-देवता धर्म' है क्योंकि इनके पूर्वज श्री कृष्ण आदि 'देवता थे न कि 'हिन्दू' और कि इस धर्म की स्थापना, कलियुग और सतयुग के संगम पर स्वयं परमपिता परमात्मा (शिव) ने आदि देव ब्रह्मा के द्वारा ५००० वर्ष पूर्व कराई थी। इस पुस्तिका में यह

भी बताया गया कि दिनाँक ४ और ७ दिसम्बर को बम्बई में टाइम्स ऑफ इण्डिया में 'मेरी' वार्षिकोत्सव मनाने के सिलसिले में ईसा को भी मोर-मुकुटधारी चित्रित किया गया है; यह ईसाइयों ने आदि सनातन देवी-देवता धर्म के श्रीकृष्ण देवता की नकल मात्र की है; वे इस मोर-मुकुट का महत्व कुछ भी नहीं जानते।

भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद के नाम पत्र

१ सतम्बर, १९५४ को डा० राजेन्द्र प्रसाद जी को एक अन्य पत्र भेजा गया। इस पत्र में लिखा गया कि :–

'प्रिय प्रभु की सन्तान,

...हम भारत-माताएँ तथा कन्याएँ भारत के कल्याणार्थ अपना कर्त्तव्य समझकर आपको सविनय सूचित करती है कि भारतवासियों को स्वधर्म की शिक्षा न मिलने के कारण, भारत अनाथ और अति दीन हो गया है। केवल इतना ही नहीं अपितु अपने सर्वोत्तम दैवी धर्म को न जानने के कारण वे अनेक मध्यम तथा कनिष्ठ 'धर्मों' में परिवर्तित हो गये हैं और होते जा रहे हैं।

भारत के प्रधान पद पर आरूढ़ आप यदि नियुक्त किये गये राज्यपाल तथा मंत्रीगण ....आदि-आदि सनातन, देही-अभिमानी' (Soul-Conscious) सर्वगुण सम्पन्न, सोलह कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी, मर्यादा पुरुषोत्तम, अहिंसा-प्रधान दैवी धर्म, को जान जायेंगे तो आपकी सहायता से भारत भूमि कल्प (५०००) वर्ष पहले की तरह जन्म-जन्मान्तर के लिए दो-मुकुटधारी राजाओं की भूमि बन जायेगी और सृष्टि में इसकी जयजयकार होगी।

विनाश ज्वाला ठीक कल्प पहले के समान अब कलियुग और सतयुग के आरम्भ के संगम पर भगवद्‌गीता के प्रोग्राम के अनुसार प्रज्वलित हो रही है। अत: अलौकिक शुभ कार्य में तत्पर हो जाना ही आप-जैसे बुद्धिमान तथा धर्म-विश्वासी प्रधान का कर्त्तव्य है...।'' यह पत्र बाद में हिन्दी

और अंग्रेजी भाषा में छपाकर जन-साधारण को बाँटा भी गया। परन्तु जनता तथा उन द्वारा चुने नेता अब धर्म की बातों की ओर कहाँ इतना ध्यान देते थे? वे तो माया की गहरी नींद में सोये पड़े थे। फिर देश की शासन सत्ता किसी एक के हाथ में तो थी नहीं कि वह कोई निर्णय करके कुछ कर डालता। आज तो भारत अपने उच्च धर्म की निधि को खो चुका है।

जापान में विश्व धर्म-सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रण

सन् १९५४ में जापान में 'शिमिजु नगर' में एक 'विश्व-धर्म-सम्मेलन' में सम्मिलित होने के लिए 'यज्ञ माता' के पास आबू में निमन्त्रण पहुँचा। यज्ञ-माता ने ब्रह्माकुमार आनन्दकिशोर जी तथा ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणि जी, ब्रह्माकुमारी रत्नमोहनी जी को ईश्वरीय सन्देश देने के लिए जापान भेजा। यह भारत माता का सौभाग्य था कि उसकी ये ब्रह्मचर्य व्रत धारिणी, कमल-पुष्प निवासिनी मनोविकार-निवारणी ज्ञान-गुणदायिनी कन्यायें भारत की ओर से सम्मिलित हुईं। इन्होंने सम्मेलन में खुले शब्दों में परमपिता परमात्मा के अवतरण के बारे में जानकारी दी क्योंकि सम्मेलन का एक विषय 'परमात्मा का अवतरण' था। सम्मेलन की कार्य-सूची में 'विश्व-शान्ति' का विषय भी शामिल था। ब्रह्माकुमारी रत्नमोहिनी जी, जोकि वर्तमान् में माउण्ट आबू (राज.) में हैं, लिखती हैं:–

'व्यक्तिगत शान्ति और विश्व-शान्ति' – इस विषय पर भाषण

''हमने निःसंकोच सभी को बताया कि 'विश्व-शान्ति' की स्थापना के लिए पहले तो व्यक्ति के मन में शान्ति होना ज़रूरी है क्योंकि व्यक्ति ही समाज की एक इकाई है। व्यक्ति के मन में शान्ति तभी हो सकती है जब उसके कर्म अच्छे हों क्योंकि सुख-दु:ख का आधार मनुष्य के कर्मों पर है। पुनश्च कर्मों का आधार मनुष्य के मन पर है क्योंकि कर्म करने से पहले मनुष्य के मन में संकल्प उठता है अथवा इच्छा उत्पन्न होती है, तब ही

कर्मेन्द्रियाँ कर्म में तत्पर होती हैं। अत: मनुष्य के मन अथवा विचारों का सात्विक होना या काबू (Control) में होना ज़रूरी है। मन को कोई-न-कोई विकार (काम, क्रोधादि) ही अपवित्र तथा अशान्त करता है। मन को कण्ट्रोल करने वाली बुद्धि है। परन्तु आज मनुष्य की बुद्धि में बल नहीं रहा, इसलिए मनुष्य आज चाहता कुछ है और सोचता कुछ और ही है। परन्तु मन उससे कुछ और ही करा देता है। अत: बुद्धि में बल भरने के लिए एक तो ईश्वरीय ज्ञान की आवश्यकता है क्योंकि ज्ञान ही बुद्धि की खुराक है और, दूसरे, इसके लिए परमपिता परमात्मा से बुद्धि का योग होना ज़रूरी है क्योंकि परमात्मा ही सर्वशक्तिवान् ज्ञान के सागर और पतित-पावन हैं। परन्तु मनुष्य परमात्मा से बुद्धि का योग तब तक नहीं लगा सकता जब तक कि उसे परमात्मा का परिचय अर्थात् ज्ञान न हो। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करके याद (स्मृति) द्वारा बुद्धि का सम्बन्ध (Link Connection) परमात्मा से जोड़े। भारत का यही प्राचीन 'राजयोग' है जिससे कि पहले भारत कभी विश्व का एक आश्चर्य (Wonder of the world) था। यह योग स्वयं परमात्मा ने ही सिखाया था क्योंकि वही अपना सत्य परिचय दे सकते हैं। आज पुन: वे भारत का प्राचीन प्राय: लुप्त ज्ञान और राजयोग सिखाकर व्यक्ति को भी पवित्र बनाकर शान्ति दे रहे हैं तथा, गुप्त वेश में, 'प्रजापिता ब्रह्मा' के तन द्वारा सतयुगी, दैवी सुख-शान्ति-सम्पन्न स्वराज्य की पुन: स्थापना भी करा रहे हैं। आप लोग जागिये और उसे 'ज्ञान-नेत्रों' द्वारा पहचानिये। वर्तमान समय के लक्षण देखकर सोचिये कि क्या अब धर्म-ग्लानि का समय नहीं है? और अब उस 'पतित-पावन' एवं 'विश्व-शान्ति के संस्थापक' परमपिता परमात्मा को आना नहीं चाहिए?''

विश्व शान्ति के लिये नेताओं को चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं है

हमने सभा में स्पष्ट रूप से बताया कि —''परमपिता परमात्मा कहते हैं कि — विश्व-शान्ति की स्थापना के लिए आप चिन्ता न कीजिए। यह

कार्य मेरा है। आप इसमें मुझे सहयोग दीजिए। आप से मुझे इतना सहयोग चाहिए कि आप स्वयं पवित्र बनिये और मेरी स्मृति में रहिये क्योंकि अब मुझे पूर्णतया पवित्र सतयुगी दैवी सृष्टि की स्थापना करनी है। विश्व में सम्पूर्ण शान्ति केवल सतयुग में ही होती है और उस विश्व की अथवा युग की स्थापना मैं सृष्टि का रचयिता (Creator), स्वयं ही कराता हूँ; यह कार्य किसी मनुष्य का नहीं है। अत: आप सभी धार्मिक नेता स्वयं पवित्र एवं योग-युक्त बनो तथा दूसरों को भी अब पवित्र बनने का तथा ईश्वर को याद करने का एकमात्र सन्देश दो क्योंकि वर्तमान काल विश्व के इतिहास का अन्तिम चरण है....।''

हमने उन्हें बताया कि ऐटम और हाइड्रोजन बम विश्व के विनाश के लिये बने हैं और कि तृतीय विश्व-युद्ध आपके रोकने से भी नहीं रुक सकेगा क्योंकि उस द्वारा महाविनाश होना ही है और लगभग सभी आत्माओं को परमपिता परमात्मा अब सब की शान्ति की इच्छा पूरी करने के लिये उन्हें वापस अपने धाम ले जायेंगें और आसुरी मतों के विनाश के परिणामस्व-रूप इस मनुष्य लोक में भी पूर्ण शान्ति हो जायेगी। यहाँ पर केवल एक दैवी धर्म, एक चक्रवर्ती दैवी मर्यादा वाला राज्य और एक ही भाषा होगी। फिर २५०० वर्षों तक न कोई युद्ध होगा और न विश्व में अशान्ति होगी...।

बाद में उलाहना न देना !

हमारी इन अधिकारपूर्ण बातों को सुनकर लोग आश्चर्यान्वित होते। उनके मन को हमारी बात ठीक भी लगती परन्तु उन्हें आचरण में लाने का यत्न तो कोई विरला ही सौभाग्यशाली करता। हमने अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए प्रभु का परिचय दे दिया ताकि कल कोई उलाहना न दे सके कि –''प्रभु! आप साधारण मानवी वेश में आये और, जिन्होंने आपको पहचान कर अपना जीवन उच्च बनाया तथा आपसे अपार खज़ाना पाया, उन्होंने हमें सूचना भी न दी और आपका परिचय भी न दिया।!''

जापान में शिव की प्रतिमा का प्रयोग

ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणि जी कहती हैं कि –''जापान में हम 'एनानायक्यो' (Ananaikyo) नाम की जिस धार्मिक संस्था के निमन्त्रण पर 'विश्व धर्म सम्मेलन' मे सम्मिलित हुए थे, उसके प्रचारक तथा अनुयायी जिस प्रकार की साधना करते थे, उसकी ओर हमारा विशेष ध्यान गया क्योंकि उसमें वे एक ऐसी प्रतिमा का प्रयोग करते थे जिस प्रतिमा का प्रयोग भारतीय लोग भी करते है। उन लोगों की साधना की विधि यह थी कि वे अपने तरीके से एक आसन पर बैठ जाते थे और अपने सामने, कुछ ही दूर एक स्टैंड (Stand) रखते थे और उस पर केन्द्र में एक अण्डाकार पत्थर रखते थे। उसे वे 'पवित्र' (Holy) मानते थे और उसी पर अपने नेत्र टिकाकर, अर्थात् दृष्टि स्थिर करके वे मन को एकाग्र करने का अभ्यास करते थे। वे मानते थे कि इस प्रकार के अभ्यास आत्मा का परमात्मा से सम्बन्ध जुट जाता है। अपनी भाषा में वे जो शब्द प्रयोग करते थे, उसका भाव यह होता कि यह अभ्यास आत्मा और परमात्मा के बीच मानों एक 'पुल' (Bridge) बाँधने के भाव से किया जाता है। उनकी संस्था का नाम 'एनानायक्यो' भी शायद इसी अर्थ का बोधक था।

एक दिन हमने उस मत के अनुयायियों से पूछा कि –''आप अपनी साधना-पद्धति में इस अण्डाकार पत्थर का क्यों प्रयोग करते हैं? आप किसी अन्य आकार का पत्थर क्यों नहीं ले लेते? इस पत्थर को आप किसका प्रतीक मानते हैं?''

वे बोले – ''इसे हम 'पवित्र' (Holy) मानते हैं। साधना की यह रीति हमारे यहाँ परम्परा से चली आई है। इस साधना से हमें शान्ति मिलती है। यह किसका प्रतीक है? – यह हम नहीं जानते। इसके विषय में शायद हमारे मान्यवर प्रधान अथवा संस्थापक ही बता सकेंगे।''

हमने सोचा कि यह भी एक विचित्र बात है कि जिस प्रतीक का ये लोग अपनी साधना में प्रयोग करते हैं, उसके बारे में इन्हें इतना भी पता

नहीं कि यह किसकी प्रतिमा है! वह लोग अभ्यास समाप्त करने के बाद, उस पत्थर को स्टैंड से उतार कर एक साफ एवं अच्छे वस्त्र में आदर-पूर्वक लपेट कर रख लेते और अभ्यास के समय उसे फिर निकाल कर प्रयोग में लाते, परन्तु इसका माहात्म्य क्या है, इसके बारे में वे कुछ भी न जानते थे।

ब्रह्माकुमारी रत्नमोहिनी जी कहती हैं कि –''हमने एक दिन इसी विषय को लेकर उस संस्था के प्रधान से भी चर्चा की। उन्होंने भी बस यही जवाब दिया कि 'हम इसे पवित्र मानते हैं।' इससे अधिक वे भी कुछ न बता पाये। संस्था के प्रधान महोदय ने भी यही उत्तर दिया।

आखिर उन्होंने हमसे कहा कि –''आप यह प्रश्न करती हैं तो अवश्य ही इस प्रश्न के पीछे आपका कुछ भाव होगा? शायद आप इसके बारे में जानती होंगी?''

हमने कहा – ''हाँ, अवश्य! यह तो आपके, हमारे और सारे विश्व-भर की मनुष्यात्माओं के परमपिता परमात्मा की प्रतिमा है। भारत में तो नगर-नगर में इसके मन्दिर हैं। वहाँ लोग उसे 'शिवलिंग', अर्थात् 'शिव की प्रतिमा' मानते हैं। 'शिव' परम-आत्मा का गुण-वाचक नाम है क्योंकि परमात्मा कल्याणकारी, अर्थात् दु:ख-हर्ता और सुख-कर्ता हैं। आप जानते नहीं हैं, परन्तु मानते आप भी उसी को ही हैं तभी तो आप उस परम पवित्र पिता की इस प्रतिमा को पवित्र मानकर उस पर मन को एकाग्र करके उससे शान्ति पाते हैं। यदि वह आपके मन का मीत नहीं है, आपके हृदय का सम्राट नहीं है, आप की याद का इशारा नहीं है, आपकी लगन का लक्ष्य नहीं है तो आप अपना मन उस पर क्यों एकाग्र करते हैं और लगन से उसमें क्यों मगन होते हैं? यदि आपके आँखें उसे नहीं ढूँढती तो आप उस पर अपने नेत्र क्यों टिकाते हैं? मन उसकी प्रतिमा पर क्यों एकाग्र करते हैं? यदि यह आपकी याद का इशारा नहीं है तो आपने इसी आकार का पत्थर क्यों चुना है? यदि आप प्रभु के इस प्रतीक से पवित्रता नहीं चाहते

तो आप इसे पवित्र क्यों मानते हैं, इसे आदरपूर्वक वस्त्र में लपेट कर क्यों रखते हैं? भाइयों, यह तो उस परमप्रिय परमात्मा की प्रतिमा है जोकि निराकार, अर्थात् अशरीरी हैं। निराकार का प्रतीक होने के कारण ही तो आप इसे वस्त्र नहीं पहनाते वरना यदि यह किसी देवता की मूर्ति होती तब तो आप इसे नहला-धुलाकर वस्त्र अवश्य पहनाते...।'' हमारी इन बातों को सुनकर उनको खुशी भी हुई और उन्हें पहली बार यह जानने को मिला कि भारत के लोग इसे परमपिता परमात्मा शिव की प्रतिमा मानते हैं। हमने सोचा कि देखो, स्वयं भारतवासियों ने ही अपने परमपिता का परिचय देना छोड़ दिया है,तभी तो अपनी साधना में शिव बाबा की प्रतिमा का प्रयोग करने वाले लोग भी आज यह नहीं जानते कि यह किसकी प्रतिमा है ! आज यों ही लोग 'जगद्गुरु' की उपाधि लिए बैठे हैं, उनसे कर्त्तव्य तो इतना भी न हो पा रहा है कि वे जापान वालों को शिव बाबा का इतना तो परिचय दिला दें।

ब्रह्माकुमार आनन्दकिशोर जी कहते हैं कि –''एनानायक्यो' संस्था के प्रधान तथा अन्य प्रमुख व्यक्तियों का हमारे बारे में इस बात पर विशेष ध्यान गया था कि हम शाकाहारी (Vegetarian) हैं। अत: एक बार जब हम सभी उन लोगों से ज्ञान-चर्चा कर रहे थे और अन्य कई प्रतिनिधि भी वहाँ उपस्थित थे, तब उस संस्था के प्रमुख व्यक्तियों ने हमसे प्रश्न किया –''आप लोग शुद्ध शाकाहारी हैं?''

हमने कहा –'' जी हाँ, हम केवल सात्विक आहार करते हैं। हम माँस आदि तामसिक वस्तुओं को मनुष्य के लिए वर्जित मानते हैं।''

वे बोले –''वर्जित क्यों मानते हैं? आज पशु-पक्षी इतनी संख्या में बढ़ते जाते हैं कि यदि मनुष्य इन्हें अपना भोजन न बनायें तब तो इनकी संख्या इतनी बढ़ जायेगी कि जिसका हिसाब नहीं।''

हमने कहा –''आप सोचिए कि आबादी तो मनुष्यों की भी बढ़ रही है। तब क्या इसका यह अर्थ है कि मनुष्य अन्य मनुष्यों को खाने लग

जायें? कभी आपने सुना है कि सभ्य मनुष्य अन्य मनुष्यों को खाते हों ? मनुष्य-मनुष्य को नहीं खाता क्योंकि वह सोचता है कि इनमें श्वास है, जीव हैं, इन्हें मारने से दु:ख होता है। जब किसी मनुष्य को कोई मारता है तो वह अपना दु:ख प्रगट करता है। यदि पशु-पक्षी मनुष्य की भाषा में बोल सकते होते तो वे भी आपके आगे अपना दुखड़ा रोते। आपके आगे वे आपकी भाषा में आपसे फर्याद नहीं कर सकते, इसलिए आप उन्हें मार कर खाते हैं ! वास्तव में तो यह हत्या है, अन्याय है, अत्याचार है, 'अपराध' है, पाप है। किसी को भी दु:ख देना पाप है। किसी की भी हत्या करना, कर्म-सिद्धान्त की दृष्टि से अपराध है, चाहे यह सरकार इसे अपराध न मानती हो।'

हमारे इन वचनों को सुनकर वे चुप रह गये। मनुष्य -मनुष्यों को क्यों नहीं खाते? - इस प्रश्न का उनसे कोई जवाब न बना, न बन सकता था क्योंकि सभी देशों में मनुष्य की हत्या करना तो अपराध माना ही जाता है।

कुछ चुप रहने के बाद उनमें से एक व्यक्ति बोला –''अच्छा, यह बताइये कि मछली खाने में तो कोई हर्ज नहीं है न? वह तो पानी का फल है जैसे कि अन्य फल पृथ्वी अथवा खेत से पैदा होते हैं?''

हमने कहा –''मछली की तड़पन, उसकी धड़कन, उसकी वेदना आदि तो आपको साफ देखने में आती है। मछली तो मनुष्यों की तरह ही सजीव है - ऐसा स्पष्ट मालूम होता है। मनुष्यों ने उसे खाने के लिए अनेक बहाने बना लिए हैं और उनमें एक यह भी झूठा बहाना है कि यह पानी का एक फल है। मनुष्य के खाने के लिए तो संसार में अन्य बहुत पदार्थ है और वे एक-से एक अच्छे भी हैं....।''

ब्रह्माकुमारी रत्न मोहिनी जी कहती है कि –''इस संस्था (एनानायक्यो) ने जापान में अपनी अन्य सम्बन्धित संस्थाओं के नाम हमें पत्र भी दिये और हमने बहुत-सी धार्मिक संस्थाओं के लोगों से भेंट की तथा उन्हें ईश्वरीय सन्देश दिया। दूर पूर्वी देशों में प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया के

प्रतिनिधि ने भी हमें सहयोग दिया तथा भारत के राजदूतों ने भी। कुछेक समाचार पत्रों में ईश्वरीय ज्ञान के चित्र भी प्रकाशित हुए और ईश्वरीय सन्देश भी छपा। जापान में एक अन्य धार्मिक (बौद्ध) संस्था, जिसका नाम 'तेनरिक्यो' (Tenrikyo) है, ने स्वेच्छा से 'कल्पवृक्ष' के चित्र काफी संख्या में छपवा दिये। उनके इस सहयोग से काफी संख्या में हम लोगों को ये चित्र बाँट सके। इसके अतिरिक्त हमने बहुत आकर्षक छोटी-छोटी पुस्तिकायें भी 'विश्व-शान्ति' के विषय पर तथा 'द्वितीय विश्व धर्म-सम्मेलन' के बारे में छपवाई थीं। वह भी हमने लोगों को जग-जगह निःशुल्क दीं। उन देशों में लोगों को परमपिता परमात्मा का परिचय देने का अच्छा अवसर था। भारत से जो गुजराती और मारवाड़ी लोग उन देशों में जाकर व्यापार कर रहे थे, उन लोगों ने इस ज्ञान को बहुत दिलचस्पी से सुना। उन्होंने स्थान-स्थान पर सभाओं का आयोजन किया और हमारे भाषण रखाए। समाचार पत्रों में भी उन्होंने हमारे आगमन की सूचना प्रकाशित की। जब हम लोग वापस भारत लौट रहे थे तो वे हमें रोकना चाहते थे; वे कहते थे कि 'हमारी अवस्था को परिपक्व बनाये बिना आप लोग वापस जाना चाहते हैं, यह कैसे हो सकेगा?''

ब्रह्माकुमार आनन्दकिशोर जी कहते हैं कि ''हम हाँगकाँग, सिंगापुर, मलाया, जाकार्ता आदि भी गये और वहाँ भी विशिष्ट व्यक्तियों को तथा भारत से आये लोगों को भी परमपिता परमात्मा के अवतारण की सूचना तथा ईश्वरीय ज्ञान का सार दिया। जब हम टोकियो में थे तो वहाँ के रेडियो पर अंग्रेजी में रेडियो के संवाददाता से वार्तालाप भी प्रसारित हुआ था। विभिन्न रीति से जन-जन को प्रभु सन्देश देते, हम लगभग एक वर्ष भारत से बाहर रहे। वापस लौटने पर मद्रास तथा बम्बई में 'इण्डियन एक्सप्रेस' आदि समाचार पत्रों में भी हमारी विदेश-यात्रा का समाचार छपा था। भारत से उन-उन देशों में गये हुए जो गुजराती तथा अन्य लोग हमारे सम्पर्क में आये थे, वे भी हमसे पत्र-व्यवहार करते रहे और हम उन्हें पत्रों द्वारा

ईश्वरीय ज्ञान का सार लिखते रहे। उन्हीं के मार्फत ही बम्बई में ईश्वरीय सेवा का कार्य भी शुरू हुआ।

जापान में शिमिज़ु नगर में जो विश्व-धर्म-सम्मेलन हुआ, उस अवसर पर, २२ अक्टूबर, १९५४ में वहाँ के आयोजकों को एक तार भी भेजी गई थी उसका कहना यह था कि –''गीता में वर्णित वचन के अनुसार अब परमपिता परमात्मा फिर से भारत में 'आदि सनातन देवी-देवता धर्म' की स्थापना कर रहे हैं और विज्ञानाभिमानी लोग निकट भविष्य में ५००० वर्ष पहले की तरह ऐटम और हाइड्रोजन बमों द्वारा अनेकानेक तथा-कथित 'धर्मों' का महाविनाश करेंगे।'' इस तरह के स्पष्टीकरण के तौर पर एक पत्र भी उन्हें लिखा गया कि –'सतयुग और त्रेतायुग में भारत में श्रीलक्ष्मी-श्रीनारायण तथा श्रीसीता-श्रीराम आदि दैवी सम्प्रदाय का राज्य था और सारे विश्व में एक ही दैवी धर्म पृथ्वी पर था। अब वह धर्म प्रायः लुप्त हो गया है। उसके स्थान पर लोग 'हिन्दू' धर्म को मानते हैं। अतः अब फिर से पूर्णतः पवित्रता वाला वह धर्म स्थापना करने के लिए परमपिता परमात्मा अवतरित हुए हैं....' इस तार और पत्र को भी काफ़ी संख्या में छपाकर बाँटा गया।

विदेश यात्रा में समाचार पत्रों ने भी काफी सहयोग दिया। उदाहरण के तौर पर टोकियो से प्रकाशित होने वाले प्रसिद्ध समाचार पत्र 'फ्री प्रेस बुलेटिन' ने २२ मार्च १९५५ को हामरे बारे में जो समाचार प्रकाशित किया उसमें स्पष्ट उल्लेख था कि ये कहते हैं कि अब कलियुग जा रहा है और सतयुग आ रहा है। इस प्रकार सिंगापुर के 'सिंगापुर स्टेण्डर्ड' ने १ नवम्बर १९५५ के संस्करण में हमारी विदेश यात्रा के लक्ष्य के बारे में छापा। भारत में वापस लौटने पर मद्रास से प्रकाशित होने वाले दैनिक पत्र 'इण्डियन एक्सप्रेस' तथा 'हिन्दू' ने भी समाचार प्रकाशित किया और देहली तथा बम्बई के समाचार पत्रों ने भी हमारे समाचार को स्थान दिया। उदाहरण के तौर पर देहली इण्डियन एक्सप्रेस के रविवारीय संस्करण

'सण्डे स्टेण्डर्ड' ने ८ नवम्बर, १९५५ को 'ब्रह्माकुमारी बहनों की पूर्वी देशों की यात्रा से वापसी' - इस शीर्षक के अन्तर्गत समाचार और फोटो छापे तथा 'सण्डे स्टेण्डर्ड' ने ८ नवम्बर १९५५ को जापान में विश्व-धर्म-सम्मेलन में दिये गये हमारे भाषण का सारांश हमारे फोटो सहित छापा।

चित्रकूट में अखिल भारतवर्षीय भक्ति योग दार्शनिक सम्मेलन

अक्तूबर १९५५ में चित्रकूट में 'अखिल भारतवर्षीय भक्तियोग दार्शनिक सम्मेलन' हुआ। उसमें सम्मिलित होने के लिए ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय को भी निमन्त्रण प्राप्त हुआ। ब्रह्माकुमारी प्रकाशमणि जी, गंगा जी तथा रत्नमोहिनी जी तथा ब्रह्माकुमार आनन्दकिशोर जी भी उसमें सम्मिलित हुए।

ब्रह्माकुमारी आत्म-मोहिनी जी कहती हैं कि –''उस सम्मेलन में अनेकानेक विद्वान्, पण्डित, आचार्य, संन्यासी, तथा कथित 'जगद्-गुरु' आदि आये हुए थे। उत्तर प्रदेश के अनेकानेक नगरों से तथा आसपास के गाँवों से श्रोता लोग भी काफी संख्या में इकट्ठे हुए थे। साधुओं-सन्तों के टेंटों (खेमों) से एक नया नगर-सा बसा हुआ लगता था। निरन्तर कई दिन का प्रोग्राम था। मंच पर कई बार विद्वानों में मत-विरोध हुआ। जनता ने उनमें स्पष्ट रूप से वाक्-युद्ध देखा। एक विद्वान् जो भाषण कर जाता, दूसरा विद्वान् अपने भाषण में उसका खण्डन कर देता। शास्त्रों के हवाले दे-देकर सभी अपने-अपने मत का मण्डन करते थे। श्रोतागण के मन में उलझन पैदा हो गई कि आखिर सत्य-मार्ग कौन-सा है। उन्हें लगा कि शास्त्रों में भी मत-विरोध है। यदि शास्त्र एक-दूसरे का खण्डन न भी करते हों तो उनके विद्वान् तो करते ही हैं।

लोग तो वहाँ यह आशा लेकर आये थे कि चित्रकूट के वातावरण में जब शीतल स्वभाव से विद्वान् लोग प्रभु-चर्चा करेंगे तो मन को शान्ति प्राप्त होगी। परन्तु वहाँ उन्होंने देखा कि कुछेक विद्वानों के मन में तो एक-दूसरे के प्रति आग भड़क रही है। कई पंडितों को अपनी-अपनी

पण्डिताई का बहुत ही नशा अथवा अभिमान था। कुछेक विद्वानों को बोलने का समय कम दिया गया था। वे रुष्ट हो गए थे। लोगों में यह चर्चा थी कि इस सम्मेलन के आयोजन 'सन्त कृपालु जी' ने अपनी प्रसिद्धि के लिए तथा अपनी विद्वता का लोहा मनवाने के लिए इस सम्मेलन का आयोजन किया है। आयोजन का आशय कुछ भी रहा हो, परन्तु इतना तो अवश्य है कि श्रोतागण को किसी एक सर्वोत्तम जीवन-दर्शन का सरल और सुनिश्चित शब्दों में बोध नहीं हुआ। विद्वान् लोगों की क्लिष्ट भाषा, शास्त्रों के ब्योरों और पण्डिताई-प्रदर्शन में वे बेचारे तो वास्तविक ज्ञान-प्राप्ति से वंचित-से ही रहे। एक बार तो लड़ाई का-सा वातावरण भी पैदा हो गया था क्योंकि दो प्रवक्ताओं के मन में जो मनमुटाव और विरोध हुआ, उसके परिणाम स्वरूप उनके अनुयायियों में भी ठन गई। लड़ाई की आग शीघ्र ही बुझा दी गई।

हम लोगों को तो कोई पेचीदा बात कहनी ही न थी। हमें सरल शब्दों में ईश्वरीय सन्देश ही देना था, सो दिया। अपना कर्त्तव्य पूरा किया। जगह-जगह से जो साधु-संन्यासी पारिव्राजक, आचार्य आदि आये हुए थे, उन्हें भी हम व्यक्तिगत रूप से मिलीं तथा उस अवसर पर 'अखिल भक्तियोग दार्शनिक सम्मेलन (चित्रकूट में) ईश्वरीय ज्ञानोपदेश'-यह पुस्तिका छपाकर सभी को दी गई।

इस सम्मेलन के अवसर पर संत कृपालु जी को २५ अक्तूबर, १९५५ को एक तार भी आबू से भेजा गया था। उसमें यह लिखा था कि :–

"..........

इस धर्म सम्मेलन में सम्मिलित होने वाले सभी भारतवासी विद्वानों, आचार्यों, पंडितों, संन्यासियों, आदि-आदि को यह सन्देश दीजिये कि किसी को भी निराकार, ज्ञान-सागर, सर्वशक्तिवान् परमपिता परमात्मा शिव का सत्य ज्ञान नहीं है जोकि त्रिमूर्ति परमात्मा शिव कल्प में (५००० वर्ष

में) केवल एक ही बार अवतरित होकर देते हैं। यदि आप ब्रह्माकुमारियों को, जोकि आपके सम्मेलन में प्रतिनिधि रूप में सम्मिलित हुए हैं, से मिलेंगें और ध्यान देकर सुनेंगे तो वे आपको निराकार परमपिता परमात्मा का सत्य परिचय देंगी और बतायेंगी कि कैसे वह आदि-देव प्रजापिता ब्रह्मा के तन में अवतरित होते हैं और शिरोमणि श्रीमद्भगवद्गीता का ज्ञान देते हैं और बाद में कैसे चतुर्भुज विष्णु के युगल साकार रूप- श्रीलक्ष्मी और श्रीनारायण द्वारा, सतयुगी देव-सृष्टि का पालन कराते हैं। वह शंकर के द्वारा कलियुगी अनेक अधर्मों का महाविनाश भी कराते हैं......।''

रूस के प्रधान मन्त्री को तथा साउदी अरेबिया के राजा को तार

एक तार रूस के प्रधानमन्त्री बुल्गानिन को तथा ख्रुश्चेव को भी दी गई जब वह भारत में राष्ट्रपति-भवन में आकर ठहरे थे और साउदी अरेबिया (Saudi Arabia) के राजा को तार भेजी गई थी। उसमें लिखा था कि :—

''आबू के दिलवाड़ा मन्दिर को न देखना गोया विश्व की सबसे अधिक अद्भुत चीज़ को देखने से चूकना है। हम आपको आमन्त्रित करते हैं कि तीस करोड़ रुपये की लागत से बना हुआ यह मन्दिर जोकि ताजमहल से भी अच्छा है, अवश्य देखिये। इसमें मनुष्य-जाति के आदि पिता तथा आदि सनातन देवी देवता धर्म (Original deity religion) के संस्थापक प्रजापिता ब्रह्मा की प्रतिमा है जो धर्म के सम्पूर्ण पवित्रता पर आधारित था और योग-बल द्वारा स्थापित किया गया था। अब विश्व-शान्ति के स्थापक त्रिमूर्ति परमात्मा शिव अवतरित होकर फिर से वह कार्य कर रहे हैं।....''

परन्तु उन द्वारा उत्तर मिला कि अभी समयाभाव होने के कारण हमारा आना मुश्किल है!

मेले में टेलीविजन पर ब्रह्माकुमारी बहनों के प्रवचन का सारांश

परमपिता परमात्मा की प्रिय सन्तान !

हम प्रजापिता ब्रह्मा की सन्तान ब्रह्माकुमारियाँ आपको ज्ञानसागर

परमात्मा का ज्ञान (सन्देश) सुनाते हैं वे ब्रह्मामुख से कहते हैं कि – "मैं सर्वव्यापी नहीं, बल्कि परमधाम का रहने वाला हूँ। मेरा रूप ज्योति बिन्दु है और मैं पुन: सतयुगी दैवी सृष्टि की स्थापना तथा आसुरी सृष्टि के विनाश का कार्य क्रमश: प्रजापिता ब्रह्मा तथा महादेव शंकर के द्वारा करवा रहा हूँ...श्री लक्ष्मी श्री नारायण के सुख शान्ति सम्पन्न राज्य के वही अधिकारी बनेंगे जो मुझ पतित पावन ज्ञान सागर परमात्मा की श्रीमत का पालन करेंगे अर्थात् 'पवित्र और योगी' बनेंगे।"

कल्पवृक्ष और सृष्टिचक्र के चित्र जो आपको यहाँ दिखाये गये हैं, विश्व का सतयुग से लेकर कलियुग तक का इतिहास बताते हैं और जो कि हमने दिव्य साक्षात्कार के आधार पर ही बनाए हैं.....'

सतयुग में यही भारत स्वर्ग (वैकुण्ठ) था जबकि श्रीलक्ष्मी-श्रीनारायण का अटल, अखण्ड, निर्विघ्न राज्य था। जबकि आज यही भारत नरक अर्थात् दु:खी, कंगाल व मोहताज हो गया है। उस समय में एक धर्म, एक राज्य, एक भाषा व एक मत था जबकि अब अनेक धर्म, अनेक राज्य, अनेक भाषाएँ व मत-मतान्तर हो गये है जिस कारण लड़ाई-झगड़ा व कलह सर्वत्र है! अब परमात्मा पुन: दैवी धर्म व सतयुग राज्य की स्थापना कर रहे हैं। अत: इसी जीवन में अतीन्द्रिय सुख शान्ति और भविष्य में डबल ताजधारी देवी देवता पद प्राप्त करने के लिये हम आपको हार्दिक निमन्त्रण देते हैं कि हमारे किसी भी सेवा केन्द्र पर पधार कर लाभ उठावें ।...

दिसम्बर १९५५ में देहली में एक अन्तर्राष्ट्रीय औद्योगिक मेला (International Industrial Fair) हुआ था। वह देहली में अपनी श्रेणी की एक पहली प्रदर्शनी थी, जोकि इतनी विशाल थी। उसमें एक टेलीविजन स्टुडियों था। उसमें ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के प्रतिनिधि को भी भाषण करने तथा कल्प वृक्ष के चित्र की व्याख्या करने पर कई बार अवसर मिला था। उस प्रदर्शनी को लाखों लोगों ने देखा था। बहुत लोगों को

टेलीविजन पर कल्प वृक्ष का दिव्य चित्र देखने तथा उसकी व्याख्या सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ क्योंकि उस अति विशाल प्रदर्शनी अथवा मेले में, जोकि कई एकड़ भूमि में फैला था, कई स्थानों पर टेलीविजन स्क्रीन लगी हुई थीं। उस मेले में हजारों की संख्या में कल्प वृक्ष के चित्र और उस भाषण की प्रतियाँ बाँटी गयीं।

उस मेले में एक स्टाल के कुछ भाग में ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की ओर से भी दिव्य चित्रों की प्रदर्शनी सजी हुई थी। अनुभवी बहनें और ज्ञान-युक्त भाई दर्शकों को मौखिक रूप से उन चित्रों की व्याख्या देते थे। लोगों के समूह उन्हें देखने और समझने आते थे। आध्यात्मिक प्रदर्शनी का वह पहला लघु प्रयोग था।

बम्बई में वेदान्त सम्मेलन

३० जनवरी, १९५६ को बम्बई में वेदान्त सम्मेलन हुआ था जिसमें ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय को भी सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रण मिला था। उस सम्मेलन में भी प्राय: शंकराचार्य के अद्वैत मत के संन्यासियों आदि ने भाग लिया था। उसमें 'निर्मल स्वामी जी' तथा अन्य बहुत से संन्यासी भी थे जिन्होंने कि अमृतसर में ब्रह्माकुमारी बहन के भाषण को सुना था। उन्हें यह मालूम था कि यह ईश्वरीय विश्व-विद्यालय परमात्मा को सभी आत्माओं से अलग, सर्वश्रेष्ठ और जन्म-मरण तथा दु:ख-सुख से न्यारा मानता है और शंकराचार्य के अद्वैतवाद से सहमत नहीं है। अत: उन संन्यासियों ने वहाँ के आयोजकों पर दबाव डाल कर ब्रह्माकुमारी बहनों का निमन्त्रण कैन्सिल करा दिया। आयोजकों ने कोई कारण भी न दिया कि आखिर जो निमन्त्रण उन्होंने पहले लिखित रूप में दिया था; उसके आधार पर आबू से आई ब्रह्माकुमारियों का निमन्त्रण समाप्त क्यों कर दिया। निवृत्तिमार्ग के संन्यासी तो माताओं-बहनों का तिरस्कार करते ही आये हैं। वे तो कहते हैं कि —'नारी को 'ओम्' कहने का भी अधिकार नहीं है। ब्रह्माकुमारी बहनें पवित्र प्रवृत्ति-मार्ग पर अर्थात्

'गृहस्थ व्यवहार करते हुए भी पवित्र-जीवन' बनाने पर जोर देती थीं। अत: उनसे संन्यासियों ने विरोध-भाव के वशीभूत हो निमन्त्रण खत्म करा दिया।

परन्तु ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय से लाभान्वित होने वाले कई लोग आयोजकों से मिले और उन्होंने कहा कि जनता को इन बहनों के उच्च अनुभव का लाभ मिलना चाहिए। उन्हें यह भी कहा गया कि जिन संन्यासियों ने बहनों को निमन्त्रण न देने के लिए दबाव डाला है, "उनसे भी हमारी बात कराई जाय कि आखिर सब को एक ही आत्मा मानने वाले अद्वैतवादियों में यह द्वैत क्यों पैदा हुआ। अन्त में आयोजकों ने बहनों का भाषण रखने का निर्णय किया। मंच-मन्त्री ने मंच पर से बहनों के नाम की घोषणा की कि वे आयें और अपना भाषण रखें परन्तु बहनों को सूचना देर से मिली थी, इसलिए वे नाम की घोषणा के बाद पहुँची और उन्हें मंच पर आदर-पूर्वक बिठाया गया। मंच-मन्त्री की कोशिश थी कि समय रहने पर इनका भाषण हो परन्तु उस दिन कार्यक्रम समाप्त होने वाला था। उस दिन वहाँ भारत सरकार के तत्कालीन मन्त्री गुलजारी लाल नन्दा जी का भाषण था। पहले निमन्त्रण मिलने पर बहनों का जो भाषण तैयार था, उसको तो पुस्तिका के रूप में छपवाया गया था। उसकी प्रतियाँ उस सम्मेलन में सभी को बाँट दी गयीं।

सम्मेलन में 'भारत साधु समाज' बनाने का भी प्रस्ताव पारित किया गया था। सम्मेलन समाप्त होने पर ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय की ओर से एक तार मन्त्री गुलजारी लाल नन्दा जी के नाम भेजा गया। उसमें उन्हें लिखा गया कि पंचवर्षीय योजना और 'भारत साधु समाज' के बारे में हम ईश्वरीय ज्ञान पर आधारित कुछ दृष्टिकोण पेश करना चाहते हैं। इसके उत्तर में गुलजारी लाल नन्दा जी का १६ फरवरी १९५६ को तार आया कि आप कल ही बिड़ला मन्दिर नई देहली में हो रही बैठक (Meeting) में सम्मिलित हों। अत: ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के प्रतिनिधि अगले ही दिन सम्मिलित हुए। उसके शीघ्र ही बाद, २० फरवरी, १९५६ को गुलजारी

लाल नन्दा जी, जोकि उन दिनों योजना मंत्री थे, के निवास पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना के बारे में उन्हें कुछ सुझाव दिये गये। बाद में यह सुझाव उन्हें लिखित रूप में भी भेजे गये। उसकी प्रति साइक्लोस्टाइल कराके अन्य विशिष्ट लोगों को भी दी गयी। उसका सार यह था कि :—

''गांधी जी स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कहा करते कि अच्छे लक्ष्य की पूर्ति के लिए साधन भी अच्छे होने चाहिए। आपने द्वितीय पंचवर्षीय योजना के मसविदे की भूमिका में लिखा है कि इसे तैयार करने में भारत की प्राचीन मर्यादा और संस्कृति तो आध्यात्मवाद पर आश्रित है। उसकी तो इस मसविदे में सर्वथा अवहेलना की गयी है।

उदाहरण के तौर पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना में देश से बेरोजगारी की समस्या की ओर तो ध्यान दिया गया है परन्तु इस बात पर पूरी तरह ध्यान नहीं दिया कि यदि देश में जनगणना इस तीव्र गति से बढ़ गयी जिस गति से अभी वृद्धि हो रही है, तब तो सरकार द्वारा हजार प्रयत्न होने पर भी बेरोजगारी की समस्या का उन्मूलन नहीं हो सकता। अत: इसके लिए परिवार नियोजन की ज़रूरत है और उसके लिए ब्रह्मचर्य की। ब्रह्मचर्य की भावना जन-मन में सुदृढ़ करने के लिए स्कूलों और कालेजों में आध्यात्मिक शिक्षा का दिया जाना अत्यावश्यक है। उस शिक्षा के दिव्य प्रभाव से आने वाली पीढ़ी न केवल स्वेच्छा से ब्रह्मचर्य अथवा संयम को अपनायेगी बल्कि उसका चारित्रिक विकास भी ऐसा होगा कि चोरी-चकारी, भिक्षावृत्ति, रिश्वत, डकैती आदि-आदि का भी अन्त होगा। तभी तो एक सुखी समाज और और चरित्रवान राष्ट्र का निर्माण हो सकेगा।'' इस प्रकार शायद यह पहली धार्मिक संस्था थी जिसने सरकार का ध्यान परिवार-नियोजन और उसके लिए ब्रह्मचर्य के महत्व की ओर आकर्षित किया। सरकार को बताया गया कि आज देश में अपराधों की रोकथाम के लिए और जेलों पर करोड़ों रुपया खर्च होता है, झगड़ों के निपटारे के लिए करोड़ों रुपया न्यायालयों पर भी व्यय किया जाता है और जनता वकील

और विधान के घेरे में पड़ी रहती है; तो यदि उन्हें सात्विक बनाने पर सरकार इस इतनी बड़ी राशि का कुछ थोड़ा-सा अंश भी लगा दिया करे तो देश का कितना भला हो जायेगा !

इसी प्रकार, पंचवर्षीय योजना में मद्यपान के बारे में सरकार की जो नीति थी, उसके बारे में भी कहा गया कि इसकी रोकथाम डंडे के बल से या जनता को कानूनी शिकंजे में कसने से नहीं होगी। उससे तो देश में चोरी-छिपी और अनाचार बढ़ेगा क्योंकि लोग देसी तरीके से मद्य तैयार करेंगे और रिश्वत् से अपनी रक्षा का प्रबन्ध कर लेंगें। अत: इसकी रोक-थाम की विधि भी यही है कि लोगों को नैतिक विधान का परिचय, शिक्षा के माध्यम से तथा अन्य प्रमुख माध्यमों (Mass Publicity Media) के द्वारा दिया जाय ताकि उनका नैतिक उत्थान हो।

उन्हें यह बताया गया कि आप पिछड़ी जातियों (Backword Classes) का उत्थान करना चाहते हैं,सो तो अच्छा ही है परन्तु आप जिस कोशिश में लगे हैं, उसका परिणाम यह होगा कि लोगों का पेट तो शायद भर भी जायेगा परन्तु उनकी आत्मा भूखी मर जायेगी। फिर आज कई धनी लोग जो निर्धनों का शोषण करते हैं, यदि उनकी बुद्धि में यह बात भली-भाँति बिठा दी जाय कि सभी मनुष्यात्माएँ उस एक ही परमपिता परमात्मा की सन्तान हैं तो उनकी दृष्टि-वृत्ति ही बदली जा सकती है और उनके मन में भ्रातृ-भाव तथा दिव्य-प्रेम जागृत हो सकता है और सभी में कार्य-क्षमता (Effciency) तथा आचार (Entegrity) का स्तर ऊँचा उठ सकता है।

इस प्रकार, कई तरीकों से आध्यात्मिक शिक्षा का महत्व दर्शाया गया। उन्हें यह भी लिखा गया कि जैसे अनेकानेक भाषाएँ होते हुए भी संविधान में एक भाषा को 'राष्ट्रभाषा' का स्थान देने का विधान है, वैसे ही अनेक धर्म होते हुए भी भारत-वासियों की अधिकांश संख्या का जो आदि सनातन धर्म था, उसकी शिक्षा दिये जाने का प्रबन्ध सरकार कर सकती है। आज सरकार स्वयं को धर्म-निरपेक्ष (Secular) मानती है, परन्तु सरकार 'हिन्दू कोड-

बिल' आदि भी तो बना रही है, जिसे कि लोग एक प्रकार से धार्मिक मामला ही मानते हैं। तो ऐसा नहीं है कि सरकार यदि चाहे तो धर्म के बारे में कुछ भी नहीं कर सकती। सरकार वास्तविक धर्म की शिक्षा देने के लिए कदम ले और दूसरे 'धर्मों' के लोग भी भले ही अपनी शिक्षा देते रहें।

उन्हें यह भी बताया गया कि वास्तव में धर्म तो एक ही है, वह तो अहिंसा, सहनशीलता, ब्रह्मचर्य और परमात्मा के साथ पिता-पुत्र का सम्बन्ध यह सिखाता है। परन्तु आज सरकार ने धर्म का आधार ही छोड़ दिया है। वास्तव में यह उसकी सबसे बड़ी भूल है जो कि उसकी जड़ों को खोखला कर देगी। महात्मा गाँधी ने भी स्वतन्त्रता के लिए गीता का ही आधार लिया था परन्तु आज सच्चे स्वराज्य की स्थापना के कार्य में सरकार ने गीता को छोड़ दिया है। सच्चाई तो यह है कि 'गीता' सभी धर्मों के अनुयायियों के लिये सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है क्योंकि इसमें परमपिता परमात्मा के महावाक्य हैं।

यह कैसी हानिकारक बात है कि आज लोग गीता में श्री कृष्ण देवता के महावाक्य मानते हैं जबकि वास्तव में उसमें निराकार परमात्मा के महावाक्य हैं। यदि आज यह बात प्रमाणित कर दी जाय तो सभी धर्मों के अनुयायी इसे सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ मानकर इसकी शिक्षाओं को शिरोधार्य समझेंगे और तब सरकार को भी इस सर्वमान्य शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए कोई आपत्ति नहीं रहेगी। अत: हमारा सुझाव है कि सरकार एक आयोग (Commission) निश्चित करे जिसमें न्याय के नियमों से परिचित कुछ धर्म परायण तथा निष्पक्ष व्यक्ति इस विषय का निर्णय करें। हम उनके समक्ष यह बात भली-भाँति प्रमाणित करेंगे कि गीता-ज्ञान वास्तव में परमपिता परमात्मा ने दिया था। तब सरकार सभी शिक्षा-संस्थानों में इसकी शिक्षा देने की व्यवस्था करे ताकि भारत का कल्याण हो....।''

इस प्रकार, विभिन्न रीति से सामान्य जनता को ईश्वरीय सन्देश, शिक्षा, सावधानी और चेतावनी दी जा रही थी। नित्य प्रति काफ़ी संख्या में

नये-नये लोग इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के सम्पर्क में आ रहे थे और लाभ उठा रहे थे। ब्रह्माकुमारी बहनें तो अपने-अपने अनुभवों के आधार पर नर-नारियों को ज्ञान द्वारा लाभान्वित करने तथा उनका योग ज्योति-स्वरूप परमपिता परमात्मा से जोड़ने की सेवा करने में तत्पर थीं ही परन्तु अब ईश्वरीय सेवा के कार्य में नया मोड़ आया।

मातेश्वरी सरस्वती जी का जनता की सेवार्थ कानपुर धरणी पर पदार्पण

अब आबू में मातेश्वरी सरस्वती जी को स्थान-स्थान से जिज्ञासुओं द्वारा लिखे ऐसे पत्र प्राप्त होने लगे जिनमें बहुत ही स्नेह, विनय और आदर से यह निवेदन किया होता कि दिव्य गुणों की मूर्ति माँ उनके नगर में पधारें और उनके जीवन में भी गुण भर दें। वे उन्हें लिखते –''माँ, ओ प्यारी माँ, अति मधुर माँ, इस नगर में हम आपके बच्चे चिरकाल से आपकी राह देख रहे हैं कि हमारी दिव्य माँ अभी आयी कि आयी। माँ आपने देर क्यों लगाई है? शीतला मैया, आओ आपके आने से विकारों की अग्नि से जले इस नगर के जन-मन को शीतलता मिलेगी। माँ, आपके ज्ञान-वीणा वादन से अनेकों की सुषुप्त आत्मा जागेगी और उनमें एक नये दिव्य जीवन के लिए उमंग तथा तरंग भर जाएगी। माँ, ये ज्ञान-सितारे, ज्ञान-चन्द्रमा के बिना शोभा नहीं देते। इसलिए आप अपने इस रूहानी बच्चों के बीच पधारो माँ ! माँ आपके दिव्य गुणों की ठण्डी छाँह से हम आत्माओं को वह आराम मिलेगा जो स्वर्ग में भी नहीं मिलता। आपकी ज्ञानभरी लोरी की आवश्यकता है माँ, क्योंकि अभी हम ज्ञान मिलने के आयु के हिसाब से छोटे बच्चे हैं...। बोलो, माँ आप कब आ रही हैं ...?''

इस प्रकार के आग्रह, अनुरोध, अनुनय-विनय भरे पत्र अथवा आह्वान के स्वर माँ के पास नित्य पहुँचते रहते। माँ उन्हें पढ़कर मुस्करा देतीं। जिज्ञासु भी चुप हो जाते। वे सोचते थे कि पवित्र माँ जब यहाँ आयेंगी तो उनके लिए यहाँ ऐसा पवित्र वातावरण कहाँ है? यह तो माया नगरी है।

यहाँ तो हर कपड़े से, हर कोने से विकारों की दुर्गन्ध आती है। माँ ने तो कभी किसी आसुरी स्वभाव वाले व्यक्ति के घर पदार्पण किया ही नहीं, तो इस नगरी में उनका आह्वान करके माँ को आने का कष्ट देना क्या उचित है? परन्तु उनके मन में ये संकल्प टिक न पाते। उन्हें तो बस अब एक ही धुन सवार थी कि यह नगरी कैसी भी हो, माँ हमारे पास आये ताकि हम यहाँ गृहस्थ-व्यवहार में रहते हुए कुछ दिन नित्य प्रति शिक्षा लेकर अपने जीवन को कर्म-योग की सुदृढ़ नींव पर खड़ा करने का अभ्यास करें। आबू में, यज्ञ की चार दीवारी में तो है ही पवित्र वातावरण, परन्तु यहाँ माया नगरी में रहते हुए हमारी अवस्था योग-युक्त हो जाय - यही तो हमें प्राप्त करना है और उसके लिए यदि माँ आ जाय तो सोने में सुगन्धि भर जायेगी।

आखिर वह दिन भी आ गया। नवम्बर, १९५६ में माँ मधुबन अथवा ईश्वरीय तपोवन से कानपुर सेवा-केन्द्र पर पधारीं ताकि प्रभु से बिछुड़े हुए लाल उनकी मधुर, दिव्य गुणों से युक्त, वात्सल्यपूर्ण वाणी को सुनकर लाभान्वित हो सकें।

कानपुर में मातेश्वरी जी का स्वागत

ब्रह्माकुमारी विश्व मोहिनी जी, जो इस समय गुरुदासपुर में ईश्वरीय सेवा में तत्पर हैं, कहती हैं कि मातेश्वरी जी जब कानुपर पधारीं तो उनका दैवी रीति से भव्य स्वागत हुआ। वे जितने दिन वहाँ रहीं, प्रतिदिन प्रातः उनकी ज्ञान-वीणा सुनने के लिये नियम-पालन करने वाले बहुत-से बहन-भाई बहुत ही लगन से आते रहते। दिन-भर नगर के विशिष्ट लोग उनसे अध्यात्म सम्बन्धी अपने प्रश्न हल कराते रहते थे। समाचार पत्रों के प्रतिनिधि भी उनसे भेंट-वार्ता करते और अपने-अपने समाचार पत्रों में मातेश्वरी जी की अनूठी वाणी के सार छापते थे। इनमें से 'डेली टेलीग्राफ', अंग्रेजी में दैनिक पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स' (कानपुर संस्करण), 'दैनिक जागरण', 'स्वतन्त्र भारत', 'एडवान्स' तथा 'प्रदीप' इत्यादि के नाम

विशेष तौर पर उल्लेखनीय हैं। इन समाचार पत्रों में बहुत मोटे शीर्षक के अन्तर्गत अनेक लेख, भेंट-वार्ता अथवा समाचार छपे थे। इनमें से कुछ शीर्षक ये थे – 'विश्व एवं व्यक्तिगत शान्ति', 'पृथ्वी पर स्वर्ग उतरने ही वाला है', 'जगदम्बा सरस्वती के प्रवचन', 'सुख-शान्ति की प्राप्ति का सहज उपाय' आदि-आदि।

स्पष्ट शब्दों में ईश्वरीय सन्देश

इनमें स्पष्ट रूप से बताया गया था कि मातेश्वरी जी कहती है – "अब परमपिता परमात्मा शिव सतयुगी पावन सृष्टि की पुन: स्थापना कर रहे हैं और कलियुगी महाविनाश की तैयारियाँ भी ऐटम बमों, मूसलों, प्राकृतिक प्रकोपों तथा गृह-युद्धों के रूप में तीव्र गति से हो रही है और निकट भविष्य में विनाश-ज्वाला प्रज्वलित होने ही वाली है। अत: यह जो समय चल रहा है, अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिये बहुत ही महत्व रखता है...। व्यक्तिगत एवं विश्व-शान्ति के बारे में बताया गया था कि वर्तमान् समय स्थायी, वास्तविक तथा पूर्ण शान्ति प्राप्त न होने के कारण व्यक्तिगत तथा संगठित रूप में मनुष्य दु:ख की पूर्ण निवृत्ति और वास्तविक एवं स्थायी शान्ति की प्राप्ति के लिये अनेक प्रकार के प्रयत्न और साधानाएँ करते हैं तथापि उन्हें यथेष्ट सफलता प्राप्त नहीं हो रही हैं। अभी तक यज्ञों, सम्मेलनों और शासन-प्रणालियों में परिवर्तनों इत्यादि के रूप में जो प्रयत्न किये जा चुके हैं, उनकी असफलता ही इस बात को प्रमाणित करती है कि मनुष्य ने अशान्ति के मूल कारण को नहीं जाना है और इसलिए वे भ्रान्ति-वश विश्व-युद्ध की रोकथाम ही को शान्ति स्थापना करना मानते हैं। विश्व-शान्ति तभी स्थापन हो सकती है जब प्रत्येक मनुष्य के मन में शान्ति हो क्योंकि 'मनुष्य' समाज की इकाई है। परन्तु यह भी सच है कि मनुष्य को भी पूर्ण_रूपेण शान्ति का अनुभव तभी हो सकता है जब समस्त विश्व में शान्ति हो। ये दोनों बातें अन्योन्याश्रित हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् के महावाक्य हैं कि 'धर्म की स्थापना और अधर्म अथवा कलियुगी आसुरी

सृष्टि का विनाश मैं कराता हूँ।' अत: सतोप्रधान सुख-शान्तिमय सृष्टि की स्थापना ज्ञान स्वरूप, सर्वशक्तिवान्, सर्व आत्माओं के पिता परमात्मा का ही कार्य है। वह ही कलियुग के अन्त और सतयुग के आदि के संगम काल में आदि देव ब्रह्मा के साधारण माध्यम द्वारा गीता-प्रसिद्ध सहज राजयोग सिखाकर, मुक्ति तथा जीवनमुक्ति प्रदान करते हैं और शंकर द्वारा अधर्म की सृष्टि का विनाश कराके सब आत्माओं को कर्म-बंन्धन से मुक्त करते हैं और उन्हें अपने परमधाम, ब्रह्मलोक अथवा शिवपुरी में वापिस ले जाते हैं।''

माया से सावधानी और प्रभु की पहचान

ब्रह्माकुमारी सरला जी कहती है कि मातेश्वरी जी अनेक विवेक-संगत युक्तियों से सिद्ध करती थीं वर्तमान् समय माया की 'अति' है और अब इसका 'अन्त' भी निकट आ चुका है। वे वात्सल्यपूर्ण वचनों से समझाती — बच्चो, साधारण मानवी तन में परमात्मा आये हैं, इसलिये आप उन्हें पहचान नहीं पा रहे हो। परन्तु यदि अभी गफ़लत करोगे तो बाद में पश्चात्ताप से क्या होगा? जिस पिता को जन्म-जन्मान्तर ढूँढते थे, अब वह आया है, आपके लिये स्वर्गिक सुख की सौगात लाया है तब भी आप सोये हुए हैं। भाग्य बनाने वाला 'रचयिता' तथा सद्गति देने वाला सद्गुरु आया है और उसे बूढ़े ब्राह्मण के रूप में देखकर, सत्य नारायण की कथा कहने-सुनने वाले आप लोग भी उसे पहचान नहीं सकते और भ्रान्ति-वश समझते हैं कि वह शायद आपसे कुछ लेना चाहता है? नहीं, नहीं वह लेने नहीं, देने आया है, झोली भरने आया है, जिसके बाद कभी आपको किसी प्रकार की कमी रहेगी ही नहीं। इस प्रकार अपनी मीठी वाणी से वे आत्माओं को शान्ति और शीतलता देती रहतीं। उनकी आल्हादिनी शक्ति, उनकी मधुर मुस्कान, उनकी प्यार की पुचकार, उनके मन से उत्कीर्ण होने वाले हर्ष एवं स्नेह की लहरें ऐसा शान्त, पवित्र, दिव्य एवं हर्षोल्लास वातावरण बना देती थीं कि अनायास ही अनेक जन —''माँ, मीठी माँ, तेरी शीतल

छाँहिं....।'' इस प्रकार के बालोचित शब्दों से उन्हें सम्बोधित करने लगते। कोई कहता — यह शीतला हैं, दूसरा कहता यह मनोबल को बढ़ाने वाली, विकार रूप शुंभ-निशुम्भ को हराने वाली, बुद्धि के महर्षि-पन का अन्त करने वाली दुर्गा माँ हैं। उनकी ओजस्वी एवं स्नेह-भरी वाणी सभी को ऐसा अनुभव कराती जैसे कि उनके पाप-ताप मिटते जा रहे हों।

तभी तो कवि ने कहा है —

स्वागत्, शुभदे जगदम्बिके!

असुर-पंच-विकार-विदारिणी
त्रिविध-ताप-भयावह-हारिणी
सतत अक्षय मंगलकारिणी
धन्य-धन्य सदये जगदम्बिके!

योगिनी अचला अनिमेषिनी
विमलता-सुचिता-संचारिणी
तमस् के बहु-दुर्ग-विनाशिनी
धन्य-धन्य शुभदे जगदम्बिके!

शुभ-सुहावन संगम-काल की
ज्योत्सना जननी तब भाल की
सूचना मिटते भ्रम-जाल की
धन्य-धन्य प्रज्ञा-प्रतिमूर्ति हे!

विहरते ब्रह्मा में शिव यती
विश्व की करने अब सद्गति
प्रिय प्रजापति-वत्स सरस्वती
धन्य-धन्य वददे जगदम्बिके!

सहज योगमयी शिव-शक्ति हे
सहज ज्ञानमयी अनुरक्ति हे

वत्स हैं कहते तब गोद के
धन्य-धन्य जननी शत स्वागतम्!
प्रिय पिता ब्रह्मा-तन वृद्ध में
प्रभे सदाशिव के अवतार की
तुम चलीं करने उद्घोषणा
धन्य-धन्य तब हे मम मातरम्!
तममयी कलि की रजनी मिटी
प्रकट संगम-काल-सुहावना
सतयुगी सुख-सृष्टि-निमित्त हे
चिर प्रकाशमयी मम् मातरम्!
ग्रसित दुर्दम देहाभिमान से
स्मृति-विहीन हुए जड़ थे सभी
अमृत-ज्ञान मिला, हम जी उठे
अमरते, जय हे, मम मातरम्!
विमलते, तुमने वह दृष्टि दी
मिल रही सुखमूल पवित्रता
वन्दना यह लो जगदम्बिके
सकल-वंदित-वन्देमातरम्!

कानपुर में मातेश्वरी जी की मधुर ज्ञान-वीणा की मधुर स्वर लहरी

ब्रह्माकुमारी आत्म इन्द्रा जी कहती हैं कि "इस अवसर पर कानपुर में एक विशाल सभा का भी आयोजन किया गया था । वह दृश्य भी देखने-जैसा था। बहुत ही शान्त वातावरण था। मंच भी बड़े ही अच्छे ढंग से सजा हुआ काफ़ी ऊँचा बना हुआ था। नगर के बुद्धिजीवी लोग काफ़ी संख्या में पधारे हुए थे। सभी मातेश्वरी जी की प्रतीक्षा में बैठे थे और उनके नेत्र उस प्रवेश द्वार की ओर लगे हुए थे जिस द्वार से मातेश्वरी जी ने सभा

में पधारना था। आखिर सभी की प्यारी माँ आती दिखाई दीं। उनकी चाल में एक निराला पन था। मुख कमल तो सदा खिला रहता ही था। व्यक्तिगत रूप उनका भव्य था ही। उनका आध्यात्मिक प्रभाव भी कुछ ऐसा निराला था कि मन को शीतलता एवं हर्ष प्रदान करता था तथा पवित्रता एवं प्रभु-प्रेम के लिये प्रेरित करता था। माँ को देखते ही सभी लोग अपने-अपने स्थान पर उठ खड़े हुए और वातावरण में एक कुतूहल था कि देखें माँ क्या कहती हैं। माँ ने श्वेत आसन धारण किया और उनके विराजमान होने पर सभी लोग पूरे ध्यान से उनकी मधुर वाणी को सुनने के लिये उत्सुक हो उठे।

मंच मंत्री भी पहले तो अवाक्-से बैठे रहे; शायद वे इसी सोच में थे कि सरस्वती माँ का परिचय उनके सामने किन शब्दों में दें। परन्तु सरस्वती माँ के उपस्थित होने से उनकी भी वाणी का प्रवाह अभूतपूर्व रूप से चला। घोषणा होने के बाद माँ पहले तो मौन रहीं। सरस्वती भी मौन हो जाय तो इसका भी कुछ तो रहस्य रहा होगा। ज्ञान एवं योग से प्राप्त होने वाला आनन्द है ही निराला कि उसका वर्णन कैसे किया जाय? अत: माँ तो प्रभु-प्यार से भरे नेत्रों द्वारा मानों इशारे ही इशारे में समस्त जनता को कह रहीं —''वत्सों; क्या अभी भी संसार के विषय-विकारों से मन ऊबा नहीं ? जिस प्रभु को पुकारते थे, क्या उसके यहाँ पधारने पर उससे आत्मिक मिलन मनाने के लिये अभी भी पवित्र बनने का चाव आप में नहीं ? जीवन के यह थोड़े से दिन गुजरते पता भी नहीं चलता, तब क्या इन्हें आत्मिक सुख में रमने की बजाय विकारों की धूल में धूमिल करना सही समझते हैं? मुख की बजाय नैन बोलते रहे। नयन अधिक निकट हैं भृकुटि में स्थित आत्मा के। अत: माँ का आत्मन् नैनों से सभी वत्सों को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा में कह रहा था — बस बहुत हो गई! अब तो चलने की तैयारी करो उस प्रभु की प्रकाश नगरी के पावन वातावरण में।''

फिर जो लोग इस मौन भाषा को नहीं समझते थे, उनके लिये माँ के

होंठ वीणा की तारों की तरह ज्ञान-गीत गाने लगे। अद्भुत स्वर लहरी थी जिससे आत्मन् आनन्द-विभोर हो उठा। ईश्वरीय तान छेड़ दी थी माँ ने। आत्मिक सुख अनुभव करने लगे सभी वत्स – ऐसा कि जैसे मरुस्थल में, गीष्म ऋतु में प्यासे पथिक को कोई शीतल जल का प्याला पिलाकर उसके प्राणों की रक्षा करे। अलौकिक माँ से मधुर ज्ञान-लोरी पाकर आत्माओं को ५००० वर्ष के बाद सच्चे स्नेह का अनुभव हुआ।

इस प्रकार माँ ने प्रथम बार यज्ञ से बाहर जाकर मधुर – ज्ञान वीणा से जन-मन को प्रभु-सन्देश दिया। अब तो अनेकानेक सेवा केन्द्रों से माँ को निमन्त्रण आने लगे कि वे उनके नगर में भी आकर आत्माओं को ज्ञान की मधुर लोरी देकर जगाएँ। अत: इस लोक कल्याण के लिए सेवार्थ माँ को दिल्ली में आना पड़ा।

मातेश्वरी जी का दिल्ली में पदार्पण

ब्रह्माकुमारी रुक्मिणी जी कहती है कि देहली में नित्य प्रति ज्ञान लाभार्थ आने वाले बहन-भाई तो बहुत समय से इस बात के लिए अनुरोध कर ही रहे थे कि मातेश्वरी जी तथा पिता श्री जी देहली में पधारें। वे बहुत बार मीठा उलाहना देते हुए कहते थे कि –''आपने तो उनसे कई वर्ष तक ज्ञान लाभ लिया है, डायरेक्ट उनसे योग भी सीखा है, क्या जगत के अलौकिक माता-पिता से हमें यह सौभाग्य प्राप्त नहीं होगा? हैं तो सभी ईश्वर की गोद के बच्चे, तब क्या हमें उस परमपिता से इन साकार माध्यमों के द्वारा आत्मिक स्नेह,दिव्य सम्पदा, पवित्रता की अपार राशि तथा हर्ष का अविनाशी खज़ाना लूटने का भी अवसर नहीं मिलेगा? इस प्रकार, उन सभी ने भाव-विभोर होकर, अति-स्नेह-युक्त एक सामूहिक पत्र 'मधुबन' में लिख भेजा। उसमें अनुनय-विनय किया कि यदि माता-पिता दोनों नहीं भी आ सकते तो पिता-श्री कम-से-कम मातेश्वरी जी को भेज कर उनके जन्म-जन्मान्तर की ज्ञान-पिपासा को तृप्त करने का अनुग्रह करें।

ब्रह्माकुमारी कमल सुन्दरी जी कहती हैं कि –''जब सभी को सभा में

यह संदेश सुनाया गया कि – मातेश्वरी जी ने उनका वह निमन्त्रण स्वीकार किया है तो वे खुशी से फूले न समाते थे। वे माँ की मधुर वाणी सुनने के स्वप्न साकार होते देखकर उनके मुख-मण्डल पर हर्ष की जो रेखाएँ बन आई थीं, वो समस्त सांसारिक सुख प्राप्त होने पर भी वैसी नहीं हो सकती थीं। उन्हें तो यह खुशी थी कि मातेश्वरी जी से सम्मुख ईश्वरीय ज्ञान सुन कर, उनके जन्म-जन्मान्तर की मन की मैल मिटेगी और वे यह भी सोचते थे कि वे अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों को भी मातेश्वरी जी के, आलोकित करने वाले, प्रवचनों से लाभान्वित करने का यत्न करेंगें। अत: खूब तैयारियाँ होने लगीं और दिन गिनते-गिनते उत्सुकता बढ़ने लगी।''

जब वह दिन आ पहुँचा तब रेलवे स्टेशन पर उनका स्वागत करने के लिए ब्रह्मा-वत्स काफ़ी बड़ी संख्या में पहुँचे हुए थे। सभी श्वेत वस्त्रधारी, सभी हर्षित-मुख। प्लेटफार्म पर अन्य यात्री तथा उनको छोड़ने आए हुए उनके मित्र देखकर आश्चर्य में पड़े हुए थे कि आज क्या होने वाला है? ये सभी यहाँ क्यों इकट्ठे हुए हैं? उनके मस्तक पर प्रश्न-चिन्ह भी बना हुआ था। ब्रह्माकुमार उन्हें कुछ ईश्वरीय साहित्य देकर माँ का परिचय देते थे। सभी को खुश देख कर हर्ष के चिन्ह तो उनके चेहरों पर भी जा पहुँचे थे। वे भी उत्सुकता से वहीं खड़े हो जाते थे। सारे वातावरण में एक अपूर्व खुशी की लहर थी और सभी आँखें गाड़ी के आने की दिशा पर लगी थीं।

.....वह देखो गाड़ी छक-छक करती प्लेटफार्म पर आ रही है और सभी के नयन माँ को ढूँढते रहे हैं। माँ भी अपने कम्पार्टमेंट के द्वार में बच्चों को निहारने के लिए मुस्कुराती हुई खड़ी है। क्या कोई वर्णन कर सकता है उस सुखद घड़ी का जब माँ ने बच्चों के बीच देहली धरनी पर पदार्पण किया। बस, सभी का मनवा उल्लास और अपनत्व से भर कर यही कह रहा था – ''यह हमारी माँ है.....हमारी माँ आ गई है.....।''

अरे यह ज्ञानवीणा वादिनी सरस्वती माँ हैं। यह वही है जिनको चित्रकार हँस वाहिनी विद्या वरदायिनी के रूप में चित्रित करते हैं। धन्य है

हमारे यह नयन और सफल हैं हमारी यह जीवन की घड़ियाँ कि हम बिछुड़े बच्चों का माँ से अलौकिक मिलन हुआ। अरे कितने भाग्यशाली हैं हम, जिन्हें माँ की पहचान मिली है....''

मना करने पर भी बहुत लोग फूल मालाएँ ले आये थे। अवश्य ही उन्होंने सोचा होगा कि जन्म-जन्मान्तर, जब हमें माँ की पहचान नहीं तब तो हम माँ की मूर्तियों पर पुष्प अर्पित करते रहे, पर उसके दर्शनों की प्यास न बुझी और अब जब नयनों को अंजन देने वाली माँ आयेंगी तो क्या हम माँ को पुष्प भी भेंट न करें? अत: पहले से रोकने पर भी वे रुके नहीं, बल्कि अच्छे-से-अच्छे सुगन्धिपूर्ण, खिले हुए फूल, गुलदस्ते और पुष्प मालाएँ ले आये थे। परन्तु पुष्प तो उनके स्नेह एवं आदर भाव की अभिव्यक्ति मात्र थे, वास्तव में विशेष चीज तो उनकी उच्च मनोभावना ही थी....

आगे बढ़े वे माँ को पुष्पमाला समर्पित करने। परन्तु माँ का वर हाथ उन्हें थमने का संकेत देने के लिए उठा। यह क्या? सभी ने सोचा होगा, हमें माँ रोकती क्यों है? हमारे हार्दिक उद्गारों की बाढ़ भला कोई रोक भी सकेगा क्या? परन्तु सरस्वती माँ ने पिता-श्री द्वारा बताये स्वर्णिम महावाक्य सुनाते हुए कहा :–

''वत्सो! मुझे यह फूल नहीं चाहिएँ। मुझे तो आप-जैसे चेतन (मानवी) फूल चाहिएँ। आप तो अब काँटों से फूल बने ही होंगे; आप वत्स ही मेरे लिए मन-वांछित पुष्प-माला हैं। मुझे तो पिता-श्री ने ऐसे पुष्पों की माला पिरोने के लिए भेजा है। बोलो, क्या आप ऐसे फूल बने हैं ? क्या आपने स्वयं में दिव्य गुणों की सुगंधि भरी है?'' मन्द-मन्द हँसी से, माँ ने ऐसा प्रश्न कर दिया और फिर मौन होकर वे योग-युक्त नयनों से हरेक वत्स की ओर निहारने लगीं, मानो उनके अन्तर्मन को वे जागृत करने की अलौकिक सेवा कर रही हों और प्रश्न को लिये वे हम ब्रह्माकुमारी बहनों की ओर भी देखने लगीं जो कि यहाँ के जनों को ईश्वरीय ज्ञान एवं योग की अनुभूति

कराने की सेवा में नियुक्त थीं। परन्तु चौथाई मिनट भी नहीं हुआ होगा कि सभी बोले उठे –''हाँ माँ, हम तो अब शिव बाबा के ज्ञान द्वारा कांटों से फूल बने हैं।'' माँ का मुख कमल अब पूरी तरह खिल उठा और....

देहली में माँ के पास सारा दिन जिज्ञासु आते रहते थे। नित्य प्रात: ठीक समय पर दूर-दूर से सभी उनकी पवित्र वाणी सुनने को आया करते। सारा दिन माँ अथक रीति से मानव-मन को हर्षाने वाले ईश्वरीय ज्ञान का खज़ाना लुटाती रहतीं। माँ के थोड़े-से वचन भी बहुत-से प्रश्नों को एक-साथ हल कर देते। लोग सोच कर आते हैं कि हम मातेश्वरी जी से यह पूछेंगें, वह पूछेंगें परन्तु जब वे सभा में आकर उनकी वाणी सुनते अथवा माँ के पास आकर बैठते तो उन्हें ऐसा मालूम होता कि मन की सभी गाँठें खुल गयीं हैं और सब संशय छिन्न हो गये हैं। वे उस वातावरण में दिव्यता का एक अनुपम प्रभाव महसूस करते और माँ से उनका हार्दिक स्नेह जुट जाता। वे ऐसा अनुभव करते कि वास्तव में तो उनकी यह ही माँ है; वे स्वयं को फिर से 'बच्चे' अनुभव करते तथा 'माँ' से टोली (प्रसाद) मिलने पर ऐसा अनुभव करते कि जैसे फिर से उनका बचपन लौट आया हो और माँ स्नेह से प्यार-दुलार तथा मुख मीठा करने को कुछ दे रही हों। इस भावना से पूरित अब उन लोगों के नेत्र स्नेह- जल से भर आते....

माँ जहाँ ठहरी हुई थीं, वहाँ एक बहुत बड़ा शामियाना लगा था और प्रतिदिन विशाल सभा लगा करती थी। नित्य प्रति माँ की ज्ञान-वीणा के नये ही स्वर होते थे। वे कहती कि –''देखो, दूर देश से एक मुसाफिर इस पराये देश में आया है। उस मुसाफ़िर को आँख नहीं पहचानतीं परन्तु दिल जानता है। वह मुसाफ़िर कुछ ही दिन के लिये यहाँ आया है।''....इस प्रकार से उत्सुकता जाग्रत करके वे समझातीं कि – ''वह मुसाफ़िर तो परमपिता शिव परमात्मा ही हैं जो कि ब्रह्मलोक से इस माया नगरी में आये हैं। उन्हें हम इन चर्म-चक्षुओं से तो नहीं देख सकते परन्तु हमारा मन महसूस करता है कि जो बातें वह करता है, जो स्नेह वह देता है, लोक-

परलोक के भेद वह बताता है, उससे तो सिद्ध होता है कि वह त्रिकालदर्शी और त्रिलोकीनाथ शिव ही हैं।'' फिर, वह समझातीं, —''देखो, परमात्मा को लोग सागर (ज्ञान सागर, शान्ति सागर....) तो मानते है परन्तु वे यह नहीं जानते कि वह सौदागार भी है। उस जैसा सौदागार अन्य कोई नहीं। वह भोला भण्डारी है। खूब भर कर देता है — ऐसा कि अन्य कोई भी नहीं दे सकता परन्तु वह यों ही नहीं दे देता। वह पक्का व्यापारी है। भक्त अपने भोलेपन में समझते हैं कि वह दाता है परन्तु वे यह नहीं जानते कि वह कुछ लेता भी हे। यदि वह लेने के बिना ही दे दे, तब तो सभी को ही दे दे। परन्तु ऐसा तो है नहीं। वह कहता है कि अपने दुर्गुण मेरे अर्पण कर दो, अपना मन मुझे दे दो तो मैं सभी वरदानों से आपकी झोली भर दूँगा।''... इस प्रकार, नये-नये तरीके से समझाते हुए कहतीं —''देखो तो, अब बहुत समय तो गुजर भी चुका है। वह मुसाफ़िर यहाँ थोड़े ही दिन तो रहता है। उनमें से भी अब तो थोड़े ही दिन रह गये हैं। इस कलियुगी संसार को आग तो लगनी ही है। आखिर तो एक दिन सब जल जाना है। तब क्यों नहीं आप इन विकारों को उसके हवाले कर देते ताकि वह आपको अपने ईश्वरीय खजाने से निहाल कर दे। अरे, ऐसे सौदागार से भी आप सौदा नहीं करेंगे? अब नहीं तो फर कब करोगे?''

इस प्रकार, मातेश्वरी जी, जीवन को पवित्र बनाने तथा शिव बाबा से योग लगाने के लिये प्रेरित करती रहतीं। नित्य नया उत्साह और उल्लास भरती रहतीं.... दिन व्यतीत होते कुछ पता भी नहीं चला। मालूम ही नहीं पड़ा कि उनके लौटने का दिन भी आ पहुँचा। सभी का मन कहता कि अभी तो आयीं थीं, वह। कोई कहता —''माँ, अब जाओ मत।'' माँ कहतीं - ''वत्स अच्छा आप ही चले चलो हमारे साथ; आप वहीं रह जाना माँ के पास।'' माँ की बात ही ऐसी होती कि उसका उत्तर 'हाँ' न तो हो सकता, 'ना' भी न हो सकता। सभी खिलखिला कर रह जाते परन्तु माँ के जाने की बात सोचकर सभी सोचते - क्या ही अच्छा होता कि हम जब तक जीते हैं यहाँ सम्मुख ही ज्ञान सुनते रहते। आखिर सभी ने एक स्वर से कहा —''माँ, आप जाती तो हैं परन्तु हमें एक वरदान दीजिए। हम से एक वायदा कीजिए, माँ! वह यह कि हम सभी की ओर से पिता-श्री के आगे हमारी यह

मनोभावना रखी जाय कि अब वे हम वत्सों के बीच पधारें। माँ, आप हम सभी बच्चों की ओर से पिता-श्री को कहेंगी न?''

पिता-श्री को देहली में पधारने के लिये निमन्त्रण

ब्रह्माकुमारी धैर्य पुष्पा जी कहती हैं कि सभी ने सम्मिलित रूप से एक अत्यन्त स्नेह-युक्त पत्र भी पिता-श्री जी को लिखा जिसमें अनुनय-विनय करते हुए उनसे कहा –''प्यारे बाबा, ५००० वर्षों के बाद ही तो हम आत्माओं को परमपिता की पहचान मिली है और यह अलौकिक परिचय मिला है। यह संगम-युग छोटा-सा ही तो है जबकि ज्ञान-कुम्भ प्राप्त हुआ है। अब भी यदि आप हमारे बीच न पधारेंगे तो फिर यह सुहावना समय कब आयेगा ? बाबा, हम चिरकाल से आपकी राह देख रहे हैं। बाबा, आपके आने से हमें ज्ञान की ऐसी बहुत-सी युक्तियाँ मिलेंगी जिससे कि घर-गृहस्थ में रहते हुए भी कमल पुष्प के समान पवित्र रहने में हमें सफलता प्राप्त होंगी। बाबा, हम ज्ञान-वर्षा द्वारा काँटों से कलियाँ और कलियों से फूल तो बने हैं परन्तु आप ज्ञान-सूर्य अब पधारेंगे तो हम फूल से फल बनकर दूसरों की भी ज्ञान-रस से सेवा करने के योग्य बनेंगे।''

कन्याओं ने बहुत-ही भोले-भाले शब्दों में, हुज्जत से लिखा, ''बाबा हम कन्याओं का कहना तो आप अवश्य मानेंगे ही क्योंकि इस पतित दुनिया में हमारे तो एक परमपिता ही हैं, तभी तो ५००० वर्ष पहले भी भगवान् 'कन्हैयालाल' ही कहलाये।'' माताओं ने लिखा कि ''हम ही तो कल्प पहले वाली माताएँ हैं जिनको ज्ञान-मुरली से चराने वाले आप निराकार परमात्मा गोपाल हैं। अत: हमारा विनम्र निवेदन तो आप नहीं टाल सकेंगें। आइये, बाबा, आइये, अब ज्यादा इन्तजार न कराइये।'' भाइयों ने लिखा –'' हम ही तो ५००० वर्ष पहले वाले 'गोप' हैं जिनका तो प्रभु से विशेष स्नेह का गायन सर्व शास्त्रों में है। बाबा, हम् जानते हैं कि देहली एक माया-नगरी है, परन्तु आप आयेंगे तो आपके साथ ही पतित-पावन

शिव बाबा तो आयेंगे ही क्योंकि आप ही तो उनके रथ[1] हैं; तभी तो यहाँ के भक्त-जन को पवित्रता के लिए मार्ग-प्रदर्शना मिलेगी। आपके आने से हम वत्सों को एक नया उत्साह मिलेगा, नई उमंगें हमारे जीवन में आयेंगी जिससे कि हम जन-जन को ईश्वरीय सन्देश देकर उनकी ज्ञान-सेवा करने में तत्पर हो जायेंगें। आपके यहाँ पधारने से, जन्म-जन्मान्तर से अज्ञानता एवं माया से मूर्च्छित हुए अनेकानेक आत्माओं को ज्ञान रूप संजीवनी बूटी मिल जाएगी.... बाबा, आइये, अब देर न लगाइये। कल्प से बिछड़े हुए आपके हम बच्चे आप की राह में आँखें बिछाए बैठे हैं...."

इस प्रकार, सभी ने हस्ताक्षर करके, एक अति शोभनीय, स्नेह-युक्त, भावना-पूर्ण पत्र बाबा को भेजा। आखिर प्रेम के सागर, शिव बाबा तथा ब्रह्मा बाबा ने उसे स्वीकार किया और उनके आने की शुभ सूचना पाकर सभी का हृदय-कमल खिल उठा। सभी के मन में ऐसा आह्द था कि जैसे वे इस कलियुगी दुनिया में न रहते हों बल्कि इससे बहुत ऊपर, किसी ऐसे लोक में बसते हों जहाँ न विकार है, न दु:ख, न बुराई है, न अशान्ति। खुशी का पारावार न था। बस, हमारे प्राण-प्यारे बाबा आने वाले हैं- इस याद में सभी का मन स्थित हो गया था। भले ही वे तन से यहाँ थे, उनका मन तो बाबा के पास था।

बाबा ने आने से पहले ही मधुबन, माउण्ट आबू, से लिख भेजा: "मीठे-मीठे, सिकीलधे बच्चे, शिव बाबा तो इस समय पतित विश्व को पावन बनाने की सर्विस (Service) पर उपस्थित है। बच्चों के स्नेह-वश ही तो उन्हें परमधाम छोड़ कर इस माया नगरी में आना पड़ा है। बाबा तो आये ही हैं ज्ञान-रत्नों से आप बच्चों की झोली भरने। बच्चों की बार-बार पुकार सुन, आखिर तो दिल्ली को ठक्कर से ठाकुर अथवा पत्थरपुरी से पारसपुरी बनाने के लिए आना ही होगा। अत: शिव बाबा का, इस रथ को, फ़र्मान मिला है कि, चलो तैयार हो जाओ, दिल्ली जाना है क्योंकि बच्चे

१. साकार माध्यम।

बहुत याद कर रहे हैं। बाप (शिव बाबा) को ले आने के लिए दादा (ब्रह्मा बाबा) को तो आना ही होगा। बच्चे, देखा आप कितने सिकीलधे[१] और प्यारे हैं। जिसे दुनिया 'अपरम्पार' एवं 'त्रिलोकी नाथ' मानती है, वह आप बच्चों की सेवा पर आ उपस्थित हुआ है और आप बच्चों की बात को स्वीकार कर लेता है। परन्तु, देखो, यह याद रखना कि किस हस्ती (परम अधिकारी) को आप अपने पास मेहमान के तौर पर बुला रहे हो। उसको आपने पहचाना है तो अवश्य ही उसके सदके (उस पर न्यौछावर होने के भाव में) पवित्र रहना होगा क्योंकि वह आया ही है, इस 'छी:-छी: (विकारी) दुनिया को 'गुल-गुल' (फूलों के समान सुगंधिपूर्ण)बनाने। अत: पूरे ही नियमों में अवश्य रहना होगा। अवस्था ज्ञान-युक्त बनाये रखनी होगी....'' बाबा ने यह भी लिखा है –''देखो बच्चे, स्टेशन पर कोई भी फूल न लाये और ज्यादा बच्चों के आने की ज़रूरत ही नहीं है। बच्चे, फालतू खर्च नहीं करना है क्योंकि आप वत्स अब यह तो समझ चुके हैं कि ज्ञानवान्‌ मनुष्य का तो एक-एक पैसा अनमोल है जिसे वह दूसरों की ज्ञान-सेवा में लगाकर सफल कर सकता है। वत्सो, मैं न तो कोई साधु हूँ न महात्मा, मैं तो 'बाबा' हूँ; अत: फूल लाने का क्या अर्थ? बाप तो आप वत्सों को सदा फूलों की तरह खिले हुए देखना चाहता है; माया आप में कभी भी मुरझाहट न लाये! आपमें दिव्य गुणों की सुगन्धि बनी रहे और उस द्वारा अनेकानेक जनों को यह परिचय मिले कि अवश्य ही ज्ञान-सूर्य परमपिता परमात्मा का कर्त्तव्य चल रहा होगा, तभी तो इनमें दिव्य गुणों की यह अनोखी सुगन्धि है। आप वत्सों ने ही तो अपने पिता को प्रत्यक्ष करना है क्योंकि प्रसिद्ध उक्ति भी इसी प्रकार है।[२] ....

बाबा की निराली युक्ति

ब्रह्माकुमारी धैर्य मीण जी कहती हैं कि चतुर सुजान बाबा की यह

---

१. बहुत समय के बाद चाव से मिलने वाले।

२. Son shows father.

निराली ही युक्तियाँ थीं जिससे वे सदा जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिए शिक्षा देते तथा ज्ञान को मनोरम रहस्यों से परिचित करते रहते। बाबा ने यह भी निर्देश दिया था कि सभा में केवल उन्हीं को प्रवेश दिया जाय जो ब्रह्मचर्य का तथा आहार-विहार की शुद्धि का पालन करते हों और सही अर्थ में आस्तिक हो ताकि ऐसा न हो कि उस परम-पावन शिव बाबा के इस पृथ्वी पर आने पर कोई अज्ञानता एवं विकारों के वशीभूत होकर उनके महावाक्यों की अवज्ञा करके पाप का भागी बनें।

बाबा ने यह लिख दिया था कि शिव बाबा तो गुप्त है क्योंकि इन चर्म-चक्षुओं द्वारा तो उसे देखा नहीं जा सकता। अत: जिन्हें ज्ञान-दृष्टि प्राप्त नहीं है, वे बेचारे तो यह जान नहीं सकेंगें कि इस साधारण मानवी तन में वह विचित्र प्रभु स्वयं पधारते हैं। अत: बाबा कहते —''बच्चे, बाप तो साधारण मनुष्य-तन में आते हैं, अत: वह साधारण रीति ही आप वत्सों के बीच आयेंगें : ठाठ-बाट या बनाव-श्रृंगार करने की ज़रूरत नहीं है। इस कलियुगी दुनिया की तो सारी चीजें माया से मैली हुई हैं, बाबा तो इनका अन्त हुआ देखते हैं, अत: इनसे मन को उपराम करके अब हमें अपना शान्त परमधाम तथा वैकुण्ठधाम ही याद रखना है जहाँ हरेक वस्तु स्वाभाविक रीति से अत्यन्त सुन्दर एवं सुखदायक है ...।''

बाबा का शुभागमन

आखिर इस कल्प में वह अत्यन्त शुभ घड़ियाँ आ गई जब सभी प्राणों से भी प्यारे, राज्य-भाग्य के दाता, दिव्य दृष्टि विधाता, परमपिता का दिव्य रीति से स्वागत करने का स्वर्णावसर मिला। सभी अपने हृदय को ज्ञान-पुष्पों से संजोकर प्यारे बाबा से मिले। जो सारी सृष्टि को हरा-भरा गुलशन बनाने वाला बाबा है, उसको 'फूलों' ने 'फूल' भी अर्पित किये। परन्तु वह फूल और उनके पीछे की भावना अलौकिक और न्यारी थी।....

नित्य प्रति अमृत वेले सभी ब्रह्मा-वत्स, शिव बाबा की मधुर ज्ञान-मुरली सुनने आते और उन्हें ऐसा महसूस होता कि जैसे उन्हें अतुल धन

की लाटरी मिल गयी हो। उनसे मिलने वाले लोग आश्चर्य में पड़ जाते कि आखिर इनमें इतनी खुशी का कारण क्या है। उन्हें क्या मालूम कि ज्ञान-गुण-सागर, प्रेम-सागर, आनन्द-सागर परमात्मा इन आत्माओं की जन्म-जन्मान्तर की ज्ञान-पिपासा तृप्त कर रहे हैं और इन्हें अपार अतीन्द्रिय सुख दे रहे हैं। बाबा नित्य नये, गुह्य एवं रमणीय ज्ञान-विज्ञान से लाभान्वित करते रहे। थोड़े ही दिनों में सभी ऐसा महसूस करने लगे कि उनकी आध्यात्मिक कमजोरियाँ काफ़ी मात्रा में समाप्त हो गयी हैं, उनके जो संस्कार मिट नहीं पा रहे थे, वे सहज ही मिट गये हैं कि जैसे वे थे ही नहीं। उन्हें मालूम होता कि जिन मनोविकारों को वे दुर्जेय माने बैठे थे, वे तो वास्तव में कागज के शेर की तरह मानो पहले से ही मरे हुए थे। आहा-आहा, जीवन हो तो ऐसा हो कि जिसमें न कोई गम है न चिन्ता और ईश्वरीय मस्ती से भरपूर तथा विकारों से दूर और न्यारा और प्यारा है। अब सभी को यह अनुभव हुआ कि वास्तव में पवित्र बनने के लिए घर-गृहस्थ को छोड़कर जंगल में जाने की आवश्यकता नहीं है।

बाबा प्राय: अपने दिव्य प्रवचनों में कहा भी करते -''वत्सों, कर्म-संन्यासी तो अपने गृहस्थ एवं व्यापार को छोड़ कर जंगलों में चले जाते हैं। वे कहते हैं कि स्त्री के संग में रहते हुए काम विकार को जीतना असम्भव है और संसार में रहते हुए विकारों से अलिप्त नहीं रहा जा सकता। परन्तु ऐसा सोचना तो गलत है। अब आप इस ईश्वरीय ज्ञान एवं योग-बल द्वारा घर-गृहस्थ को चलाते हुए पवित्र रह कर दिखाओ तो इससे संसार का काफी उपकार होगा। देखो, आपको आज ईश्वरीय ज्ञान देने की सेवा में जो ब्रह्माकुमारी बहनें निमित्त हैं इन्हें तो पवित्र रहने का अधिकार न मिलने के कारण मजबूरी से घर छोड़ना पड़ा अथवा इन पर तो सितम ढा-ढा कर इन्हें यह कदम लेने पर मजबूर कर दिया गया वरना तो गीता के भगवान् शुद्ध प्रवृत्ति मार्ग ही स्थापित करने आते हैं। वे घर-बार छुड़ाने नहीं आते, वे तो घर को स्वर्ग बनाने आते हैं। आप सब कारोबार करो,

परन्तु जिस बाप को आप बुलाते थे कि हे 'परमपिता' आप आओ और पतित से पावन बनाओ, अब वह कह रहा कि है –'' बच्चों, अब मैं आया हूँ; अब तो यह विकारों का गन्दा धन्धा छोड़ों!''

'देखो, आप अपने वास्तविक स्वरूप में हो तो 'आत्मा' ही न? और प्रारम्भिक स्वरूप में आप थे तो पवित्र ही न? तो जबकि आप का स्वधर्म ही पवित्रता और शान्ति है तो उसमें स्थित होना असम्भव क्यों होना चाहिए? परन्तु, वत्सों, यह सम्भव तभी होगा जब आत्मा-निश्चय (Soul-Conscious) बनेंगे और मुझ निराकार परमपिता परमात्मा शिव की स्मृति में रहेंगे। योग के बिना अथवा आत्मिक दृष्टि अपनाये बिना पवित्र रहना असम्भव है। अत: अब आप योग-युक्त होवो तो पवित्र बनने का बल स्वत: ही आपको प्राप्त होगा ....''

बिष को पीना और पिलाना बन्द !

बाबा कहते –''वत्सों, इन विकारों ने ही तो जन्म-जन्मान्तर से आपको तंग कर रखा है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, आलस्य – ये कोई अच्छी चीज़ थोड़े ही हैं? तो जबकि आप इन्हीं के कारण दु:खी है, तब आप इन्हें निकालते क्यों नहीं? जैसे कोई भी व्यक्ति अपने घर में कचड़े को सम्भाल कर नहीं रखना चाहता, तब आपने इन्हें अपने मन में क्यों रख रखा है? क्या आप इन्हें कोई अनमोल खज़ाना समझते हैं? वत्सों, इस हेय चीज को अब इनको मेरे हवाले कर दो तो मैं आपको तली पर स्वर्ग- का स्वराज्य दूँगा। वत्सो, मैं आपसे और कुछ नहीं माँगता, मुझे तो आप अपनी यह निकम्मी चीज दे दो। यह निकम्मी होती है, क्या आप इन्हें अपने काम की वस्तु मानते हो? अरे नहीं, इन्होंने ही तो सारा काम बिगाड़ा है। यह दुनिया जो पहले स्वर्ग थी, वह इन्हीं के द्वारा ही तो नरक बनी है। ......''

फिर, बाबा समझाते –''देखो, कुछ लोगों का धन्धा मटा-सट्टा करना होता है। वे पुराने कपड़े, पुरानी चीजें लेते है और उसके बदले में नए

बर्तन या अन्य कुछ अच्छा सामान देते हैं। यह शिव बाबा भी मानों कि मटा-सट्टा करने वाले ही हैं। ये पुराने खराब संस्कार ले लेते हैं और उनके बदले में पवित्रता दिव्य-गुण तथा जन्म-जन्मान्तर के लिए खुशी और आनन्द दे देते हैं। व्यवहार से मटे-सट्टे वाले लोग तो जितने मूल्य की चीज लेते हैं, उसके बदले में उससे कुछ कम ही दाम की चीज देते हैं परन्तु बाबा तो उससे कई गुणा अधिक, नहीं-नहीं अपार एवं अतुल खजाना दे देते हैं। क्या ऐसे शिव बाबा के साथ मटा-सट्टा नहीं करोगे? अपनी कमियाँ और कमजोरियाँ उसको देकर अपना भाग्य ऊँचा नहीं बनाओगे?''

इस प्रकार, बाबा जब मधुर ज्ञान-मुरली बजाते तो सभी अतीन्द्रिय सुख में झूम उठते। परन्तु संसार के लोग तो इसी भ्रम में हैं कि भगवान् काठ की कोई मुरली बजाया करते थे अथवा किसी रत्न-जड़ित्त, सोने की मुरली के स्वरों से वे गोप-गोपियों को सुख दिया करते। आहा, उधर लोग भगवान् को ढूँढ रहे थे और इधर वह साधारण मानवी वेश में ज्ञान-मुरली द्वारा आत्माओं को गीता-ज्ञान दे रहा था। तभी तो कवि बोल उठा :—

अजी, सुनो ये कितने मीठे प्यारे हैं अनमोल
ये वंशी के बोल !
इन्हीं स्वरों में छिपे हुए हैं कितने सत्य महान्
इन्हीं स्वरों में भरा पड़ा है सारा गीता-ज्ञान
इनकी मीठी तानों से मन-प्राण उठा है डोल
ये वंशी के बोल !
इनमें छिपी हुई है मानवता की आर्त्त पुकार
इसीलिए तो ब्रह्मा-कुल इन पर जाता बलिहार
विष से देते मुक्ति हृदय में अमृत का रस घोल
ये वंशी के बोल !
इनको सुनकर सुप्त शरीरी-आत्मन् उठता जाग

मन के कालीदह में पैठा, नाथा जाता नाग
काम-दहन से शुद्ध बुद्धि में ऋतुपति का हिल्लोल
ये वंशी के बोल !
इनमें मुखरित होता है परमात्म-ज्ञान-अवतंस
प्रतिभाषित- 'हम ज्योति-पिता के अंश नहीं, हैं वंश'
अनगिन सृष्टि-रहस्य सहज ही आज रहे हैं खोल
ये वंशी के बोल !

ब्रह्माकुमारी जानकी जी कहती हैं कि साकार बाबा की ज्ञान-मुरली का प्रभाव तो ऐसा था ही कि जिस से आत्मा आनन्दित हो उठे परन्तु साथ ही साथ बाबा का स्नेह, उनके चितवन पर मधुर मुस्कान, उनका दिव्य व्यक्तित्व, उनका उठना-बैठना ही ऐसा निराला था कि कोई भी प्रभावित हुए बिना न रह सकता। सभी कहते कि इस आयु में इतनी स्फूर्ति, ऐसा पूर्ण स्वास्थ्य, ऐसी सीधी बैठक, मुख-मण्डल पर ऐसा तेज, मस्तक में, भृकुटि के बीच स्पष्ट दिखाई देता हुआ दिव्य प्रकाश — ये सभी तो ऐसे हैं कि न हमने आज तक किसी के व्यक्तित्व में देखे हैं, न ही हो सकते हैं। उनके मन में निश्चय की नींव पक्की हुई कि यह भगवान् शिव के साकार माध्यम हैं क्योंकि जो ज्ञान-रत्न, तीनों कालों के जो गुह्य रहस्य, आत्मा के जन्म-जन्मान्तर की जो कहानी उनके मुखारविन्द द्वारा व्यक्त होती थी, वह थी ही ऐसी अकाट्य तर्क से युक्त, ऐसे दिव्य विवेक से संगत तथा ऐसी सत्य कि दूसरा तो कोई किसी भी हालत में, ऐसे रहस्यों का उद्घाटन नहीं कर सकता था। बाबा से अपार प्यार-दुलार पाकर, उनके पितृवत व्यवहार से सभी को यह भासना आई कि आत्मा के अलौकिक पिता तो यह ब्रह्मा बाबा ही हैं और पारलौकिक पिता परमपिता परमात्मा शिव भी इस रथ में हैं।

इस प्रकार, निश्चय-बुद्धि होकर सभी ज्ञान-मार्ग में चलने लगे। अब सभी अपने निजी अनुभव से मानते थे कि यह बाबा जगत् का पिता है, यह वही ब्रह्मा बाबा है जो कल्प पहले भी ऐसी सृष्टि की रचना के निमित्त बने थे कि जिसमें अपार स्नेह था और सम्पूर्ण पवित्रता थी। बाबा के सम्पर्क में आने से तथा ज्ञान-चक्षु प्राप्त होने से उनका मन अब बार-बार स्वयं से कहता — अरे

मन, इस तन में तो भगवान् आये हैं। मैंने स्वयं ही तो उन्हें देखा है। आहा, कितने सौभाग्यशाली हैं हम ! परन्तु यह कैसी विडम्बना है कि दुनिया के अन्य लोग अज्ञान-निन्द्रा में सोये पड़े हैं चलो अब हम ही उन्हें बतायें कि :–

हमने तो देखा है, हमने तो पाया है।
साँवरिया तन में शिव भारत में आया है॥

करते अनुमान यहाँ
करते अनुमान वहाँ
मेरे में, तेरे में·
सब में भगवान् कहाँ?

वह तो इस भारत में आता है, आया है।
हमने तो देखा है, हमने तो पाया है॥

कहते हो, यों न कहें
कैसे पर मौन रहें
ऐसे निश्छल प्रियका
कैसे दुर्वाद सहें।

कैसे हम रहने दें, विभ्रम जो छाया है।
हमने जब देखा है, हमने जब पाया है॥

व्यापक की बात बुरी
आतम-अपघातकारी
कहते जो ईश्वरता
जड़ता में है बिखरी।

सच मानो माया ने तुमको भरमाया है।
हमने तो देखा है, हमने तो पाया है॥

कहना यदि मानोगे
तुम भी पहचानोगे
हमने जो जाना है
वह सब तुम जानोगे ।

पाओगे अक्षय निधि स्वर्णिम जो लाया है।

हमने तो देखा है, हमने तो पाया है।।

उसका अब होना है
अवसर क्या खोना है
यह तो जागृति के दिन
इनमें क्या सोना है।
किरणों के केसर में जग-जगह अह्ववाया है।
हमने तो देखा है, हमने तो पाया है।।

मीठे शिव बाबुल की
वंशी कितनी बांकी
मन को है छीन चुकी
उसकी छबि की झाँकी
माया ने ठुकराया प्रभु ने अपनाया है।
हमने तो देखा है, हमने तो पाया है।।

मंजुल-मंजुल वाणी
कितनी यह कल्याणी
कितनी वरदानमयी
कैसी यह शुभसनी !
इसमें कुछ जादू है, हमको मन भाया है।
हमने तो देखा है, हमने तो पाया है।।

बाबा की वाणी में इतना ओज और इतना बल होता था कि बात मत पूछो! बात सीधी मन पर जाकर ही लगती थी। बुद्धि के कपाट खुल जाते थे। आत्मा प्रभु स्मृति में टिक जाती थी। प्रभु से टूटा हुआ नेह जुट जाता था तथा समूची सृष्टि के प्रति यह भावना जागृत हो जाती थी कि उन्हें भी ईश्वरीय सन्देश दिया जाये। बाबा के हर प्रवचन से यह प्रबल प्रेरणा मिलती कि अब तो बस जब तक जीते हैं, संसार की अलौकिक सेवा करनी है, सभी को प्यारे परमपिता का यह परिचय देना है तथा उनका कल्याण करना है। बाबा भी नित्य प्रति समझाते कि किस व्यक्ति को उस परमपिता का कैसे परिचय देना है। इस प्रकार अपने साथ-साथ दूसरों का कल्याण करने की भी शिक्षा बाबा देते।

अब वह दिन भी आया जब सृष्टि की वृहद् सेवा करने वाले बाबा आबू पर्वत पर लौटने वाले थे। सभी अपना दिल मसोस कर रह गये। सभी को ऐसा लग रहा था जैसे कि उनसे कोई अपार खज़ाना छीन रहा हो। परन्तु बाबा से यह वचन लेकर ही सभी को सान्त्वना हुई कि बाबा शीघ्र ही फिर आयेंगे।

बाबा तो गये, परन्तु सभी का मन भी साथ ले गये। अब तार तो जुट ही गयी थी, परन्तु लगातार भावनायें तो प्रभु के पास पहुँचती ही रहती थीं परन्तु अब डाक-तार भी जाने लगे कि बाबा आप फिर आइये, हम आपके बिना नहीं रह सकेंगे। अब तो आपको बार-बार आना ही होगा, हम बच्चों को ज्ञान के मधुर बोल से आदि-मध्य-अन्त के रहस्यों से बहलाना ही होगा। अब तो सभी को ऐसी धुन सवार थी कि सभी ईश्वरीय संदेश देने में खूब रुचि ले रहे थे।

बाबा ने भी ईश्वरीय सेवार्थ वत्सों को साधन उपलब्ध कराने के लिए बड़ी संख्या में पत्र (Leaflets) छपवाये। बाबा समझाते कि — ''बच्चे, अब आपने तो शिव बाबा को पहचाना है परन्तु करोड़ों भक्त, पहचान के बिना मन्दिरों में जाकर पुकार रहे हैं। अत: अब आप वत्सों का यह कर्त्तव्य है कि उन्हें भी परिचय दो। उन्हें भी आत्मा और परमात्मा-सम्बन्धी रहस्य समझाओ।''

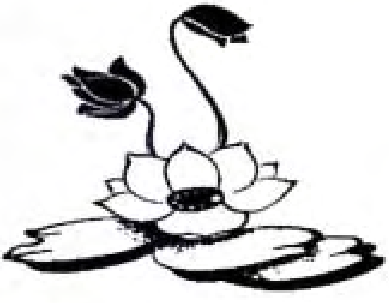

भक्तों को सन्देश दो !

ब्रह्माकुमारी ईशु जी कहती हैं कि उन दिनों बाबा ने हरेक प्रकार के मन्दिर में जाने वाले भक्तों के लिए अलग-अलग पत्र छपवाये थे। कुछ पत्र तो शिवलयों में बाँटने के लिये प्रकाशित कराये गये। उसमें लिखा था कि –''प्रभु-प्रेमी भाइयों और बहनो! क्या आप जानते हैं कि शिव कौन है, उनका धाम कौन-सा है, वे क्या करते हैं तथा उनके साथ आपका क्या सम्बन्ध है? जिस शिव की महिमा करते हुए आप कहते हैं कि –''शिव के भण्डारे भरपूर, काल-कण्टक सब दूर'' उस शिव की भक्ति तथा पूजा करने पर भी आपके जीवन में आज भी काल-कण्टक क्यों है और आपके सुख-शान्ति के भण्डारे अभी भरे क्यों नहीं ?'' पुनश्च, क्या आप जानते हैं कि ''शिव और शंकर में क्या अन्तर है'', शिवरात्रि क्यों मनाई जाती है और परमपिता परमात्मा शिव इस सृष्टि में कब आते हैं तथा क्या कर्त्तव्य करते हैं कि आज तक भी उनका गायन चला आता है। यदि आप इन रहस्यों को जानना चाहें तो नि:शुल्क ज्ञान-प्राप्ति के लिये हमारे किसी भी ज्ञान-सेवाकेन्द्र पर पधारें।''

बाबा कहते –''वत्सों, आप हर शिवालय में जाकर भक्तों को समझाओ कि जिस परमपिता शिव की आप यहाँ पूजा कर रहे हैं, वह तो अब भारत को पुन: शिवालय के समान पवित्र बनाने के लिये अवतरित हो चुके हैं; अब तो उनसे सभी वरदान लेने का समय है। कैसी आश्चर्य की बात है कि जिससे आपका इतना स्नेह है, उसके कर्त्तव्य, धाम तथा सम्बन्ध को भी आप नहीं जानते। एक ओर तो आप शिव की पूजा करते हैं, दूसरी ओर 'शिवोहम्' अर्थात् 'मैं स्वयं ही शिव हूँ' – ऐसा मानते हैं और तीसरी ओर गुरुओं को शिव स्वरुप मान कर उनकी पूजा करते हैं। अरे, जिस शिव बाबा ने ५००० वर्ष पहले भारत को कौड़ी-तुल्य से हीरे-तुल्य बनाया था,

उस मीठे-मीठे, राज्य-भाग्य के दाता परमपिता शिव परमात्मा को भी आप नहीं जानते ! तभी तो भारत अनाथ और कंगाल हो गया है! यदि अब आप परमपिता शिव के परिचय को जान जायें तो मुक्ति और जीवनमुक्ति के तथा परमशान्ति और आनन्द के भागी बन सकते हैं।''

इसी प्रकार, श्रीकृष्ण के मन्दिरों में तथा श्रीलक्ष्मी-श्री नारायण के मन्दिरों में जाने वाले भक्तों के लिये भी पत्र छपवाये थे । उनमें लिखा था —''श्रीकृष्ण-प्रेमियो! क्या आप जानते हैं कि श्रीकृष्ण अब कहाँ है और फिर कब आयेंगे? क्या आपको मालूम है कि श्रीनारायण स्वयं श्रीकृष्ण ही का स्वयंवर के बाद का नाम है? क्या आप जानते हैं कि पूर्व जन्म में क्या पुरुषार्थ करने से उन्हें विश्व के महाराजन् अथवा वैकुण्ठ के शिरोमणि देवता का पद प्राप्त हुआ था? यदि आप श्रीकष्ण के समान वैकुण्ठ का देव पद पाना चाहते हैं अथवा यदि उनसे आपको अनन्य स्नेह है, तो उनके समान पवित्र बनने के लिये तथा घर-गृहस्थ के कर्त्तव्यों को निभाते हुए, सहज राजयोग का अभ्यास सीखने के लिये पधारिये। हम आपको एक सप्ताह के लिये शुभ निमन्त्रण देते हैं। आप एक भी कौड़ी खर्च किये बिना योग का आनन्द और मुक्ति तथा देव-पद प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु अब नहीं तो कभी नहीं।''

इसी प्रकार आदि देवी सरस्वती तथा प्रजापिता ब्रह्मा की जीवन-कहानी अथवा जगदम्बा जी के जीवन-चरित्र को जानने के लिये भी निमंन्त्रण पत्र छपवाये गये थे। उसमें लिखा था — ''क्या आप जानते हैं, कि वे कब हुए थे, उन्हें 'जगदम्बा' और 'जगत्-पिता' किस अर्थ में कहा जाता है? जबकि वे जगत के माता-पिता हैं तो उनसे मनुष्यात्माओं को क्या वर्सा (अलौकिक जन्म-सिद्ध अधिकार) मिलता है?''

इसी तरह श्री राम की जीवन-कहानी को जानने के लिये भी निमन्त्रण छपवाये गये थे। और 'आदिनाथ ब्रह्मा का स्थान आबू' नाम से भी एक पुस्तक प्रकाशित की गयी थी ताकि आबू में देलवाड़ा मन्दिर को देखने जो

भी यात्री आयें उन्हें आदि देव ब्रह्मा तथा अम्बा का और उनको भी योग-तपस्या सिखाने वाले परमपिता परमात्मा शिव का परिचय मिल सके। बाबा समझाया करते थे कि उस मन्दिर में तपस्या करती हुई जो मूर्तियाँ हैं, वे जगत-पिता तथा जगदम्बा की ही स्मारक हैं। जिन्होंने ईश्वरीय ज्ञान द्वारा मानवों को मरजीवा जन्म दिया। उन दोनों को ज्ञान देने वाले हैं सब से उच्च, परमपिता शिव जिनकी स्मारक माला (सिमरणी)में युगल मणके के ऊपर फूल के रूप में है। बाबा ने यह भी समझाया था कि देलवाड़ा के मन्दिर में नीचे तपस्या करते हुए दिखाया गया और ऊपर छत पर वैकुण्ठ के दृश्य नक्श किये गये हैं जिसका भाव यही है कि इस तपस्या द्वारा उन्होंने स्वर्गिक राज्य-भाग्य प्राप्त किया था। परन्तु आज भक्त लोग मन्दिर देखने इतनी दूर से आते तो हैं किन्तु वे इन रहस्यों को नहीं जानते और वे इनके कर्त्तव्य-काल को न जानने के कारण इस रहस्य से भी अपरिचित हैं कि आदि पिता और अम्बा अब पुन: सजीव रूप में यही कार्य करा रहे हैं।

सचमुच, यह बड़ी विडम्बना है मानव जिन को पूजता और मानता है, उनकी जीवन-कहानी को जानता नहीं है।

विश्व के कल्याण के लिए भावना और योजना

बाबा प्राय: समझाया करते थे कि ''भक्तों को ये निमन्त्रण पत्र देते हुए, मन में उनके प्रति कल्याण की भावना रखते हुए उन्हें समझाया जाय कि जन्म-जन्मान्तर उन्होंने भक्ति तो की है परन्तु अब अपने इष्ट के बारे में पूरा ज्ञान तो प्राप्त कर लें क्योंकि ज्ञान से ही सद्गति होती है। ईश्वरीय ज्ञान ही को अंजन कहा गया है। ज्ञान को ही दिव्य-चक्षु भी माना गया है, जिसका अर्थ यह होता है कि ज्ञान-नेत्र के बिना मनुष्य अन्धा-जैसा ही है।' अत: बाबा कहते —''वत्सों भक्तों को भगवान् का परिचय देते समय मन में यह भाव धारण करो कि हे शिव बाबा, इनकी बुद्धि का ताला खोल दीजिये ताकि माया द्वारा भरमाया हुआ हमारा यह भाई आपको पहचान कर अब पवित्र बनें और पुरुषार्थ करने लग जाये ताकि इसका भी उच्च भाग्य

बने !''

ब्रह्माकुमारी संदेशी जी कहती हैं कि सारे विश्व का कल्याण करने की योजनाएँ बनती रहती थीं। सभी मत-पंथ वालों को परमपिता का परिचय देकर उससे योग-युक्त करने की विधि बाबा समझाते रहते थे। लोंगो को ज्ञान-रत्नों का खज़ाना देने के लिए ईश्वरीय ज्ञान की पुस्तकों के रूप में भी प्रकाशित कराया गया था। एक पुस्तक का तो शीर्षक ही था - 'अविनाशी ज्ञान-रत्न' अंग्रेजी भाषा में जो पुस्तक छपी, उसका भी इसी अर्थ को लिये हुए शीर्षक था —''ट्रैजर आफ गॉडली नालेज '' (Treasure of Godly Knowledge) इसके अतिरिक्त हिन्दी में 'आनन्द का मार्ग' और अंग्रेजी में 'वे टु ब्लिस्फुल लाईफ' (Way to Blissful lfie) ये दो पुस्तकें भी छपीं। हर त्योहार के अवसर पर भी छोटी-छोटी पुस्तक-पुस्तिकाएँ प्रकाशित की जाती हैं। एक पुस्तिका थी — 'शिव और शिवरात्रि'। इन्हीं दिनों में परमपिता शिव का प्रजापिता ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर के साथ एक चित्र (त्रिमूर्ति का चित्र) भी प्रकाशित किया गया ताकि जन-जन को यह परिचय दिया जा सके कि परमात्मा देवों का भी देव है और वही इन क्रमशः तीनों द्वारा स्थापना, पालना तथा विनाश के दिव्य कर्त्तव्य संगम युग में कराता है तथा करा रहा है। एक पुस्तक —''सृष्टि-नाटक की धार्मिक राजनीतिक व्याख्या'' अंग्रेजी में जो पुस्तक छपी थी, उसका मुख-शीर्षक था — "Religio-Political Explanation of World History", वह भी त्रिमूर्ति, कल्प-वृक्ष तथा सृष्टि-चक्र के चित्रों सहित प्रकाशित हुई थी।

बाबा की ऐसी प्रेरणादायक वाणी, जिनमें विश्व के कल्याण के लिये ही योजनाएँ थीं, सुनकर हम सभी का यह संकल्प दृढ़ होता कि अब हमें दूसरों को भी ईश्वरीय सन्देश देना चाहिए। सभी ब्रह्मा-वत्सों के यही बोल थे :—

हम सबका अब मन कहता है, एक तुम्हारे ही गुण गायें
बाकी थोड़े और रहे दिन

अब विनाश में कितनी देरी
फिर भी कुम्भकर्ण बन सोये
माया ने जिनकी मत फेरी
नयी सृष्टि का भेद तुम्हारा हम निशि-दिन उनको बतलायें
हम सबका अब मन कहता है, एक-तुम्हारे ही गुण गायें!
तब आगमन और परिचय की
हम सबको दें आज बधाई
और बजायें शुभ स्वागत में
हम अपने मन की शहनाई
'भारत में भगवान् पधारे' सबको यह विश्वास दिलायें
हम सबका अब मन कहता है, एक तुम्हारे ही गुण गायें!
हम अपनी वाणी से बाँटें
अब केवल वरदान तुम्हारा
इन नयनों से सदा सभी को
मिलता हो बस एक इशारा –
'बाँह पसार मिलो सब प्रभु से'— यह कहते तुम पर बलि जायें
हम सबका अब मन कहता है, एक तुम्हारे ही गुण गायें!

परन्तु जब ब्रह्मा-वत्स जन-जन को ईश्वरीय सन्देश देने जाते तो कुछ लोग तो यह सन्देश सुनकर ईश्वरीय ज्ञान एवं योग की शिक्षा लेना शुरू कर देते किन्तु बहुत-से लोग माया के वशीभूत हो सोये रहते। तब हम बाबा से कहते – "प्यारे बाबा, हम तो इनके कल्याण की भावना मन में रखकर इनको प्रभु-परिचय देने का पूरा यत्न करते हैं परन्तु बहुत-से लोग सुनते ही नहीं। बाबा हमने तो आपको अब पहचान लिया है और आपको अपना हाथ भी दिया है परन्तु ये तो विकारों की ओर खिंचा में हैं। दूसरे शब्दों में :–

नाम तुम्हारा इतना सुन्दर

इतना प्यारा रूप तुम्हारा
यह तो मिथ्या बात बड़ी है
कहना नाम-रूप से न्यारा !
अनायास परिचय में तुम आये, हमने पहचान लिया है
हमने तुमको हाथ दिया है !
जगा रहे तुम, किन्तु हाय ये
जाग नहीं पाते, अति विस्मृत
तुम्हें तत्व में व्यापक कहकर
कितना है कर रहे तिरस्कृत !
क्या होगा भगवान्‌ ! इन्होंने तो भारी पाप किया है
हमने तुमको हाथ दिया है !
काम-क्रोध-मद-मोह-लोभ की
माया जग में व्याप रही है,
उसकी पीड़ा से सब व्याकुल
बोझिल धरती काँप रही है
इनकी यह मूर्च्छना देखकर आज धड़कने लगा हिया है
हमनेग तुमको हाथ दिया है !
ये सुनते ही नहीं,भला हम
इनको क्या पहचान बतायें
ये गुनते ही नहीं, भला हम
इनके आगे क्या गुण गायें
इनकी यह बेसुधी देखकर हमने दामन थाम लिया है
हमने तुमको हाथ दिया है !
ये आसुरी सम्पदा वाले
भले, तुम्हें पहचान न पाते
पर सुजाग दैवी कुल वाले

तुमसे जोड़ रहे हैं नाते !

जितने भी निष्पाप- सजनियाँ, शिव ही उनका एक पिया है

जिसको हमने हाथ दिया है।

हमने तुमको हाथ दिया है !

तब बाबा हम में फिर बल भरते। ज्ञान के नये-नये रत्न देते। हम पुन: लोगों को जाकर ईश्वरीय सन्देश देते और कहते कि –'' अब तो प्रभु आ चुके है। अब तो पवित्र बनो। अब: दु:ख और विकारों का समय बीत चला है।'' हम उनसे कहते :–

कलियुग के अन्तिम दिन जाते
दु:खदायी पाँच विकारों के
अब तो संगम के दिन आये
मौजों के और बहारों के

प्रभु से मिलने का पर्व यही, अब और विराम न ले कोई !

दु:ख-जन्य विकर्मों के बन्धन
वह एक-एक कर काट रहा
विष खींच रहा जड़-चेतन का
सुखदायी अमृत बाँट रहा

अमृत पीने की एक शर्त, माया का जाम न ले कोई !

उसके अमृत की एक घूँट
मन के सब रोग हरण करती
उसके नयनों की मधु चितवन
प्राणों में पावनता भरती

यह गुणदाता गुण देता है, अवगुण के नाम न ले कोई !

आसान योग की बात हुई
तरकीब बड़ी है प्यार भरी
यह दो शब्दों का ज्ञान अरे !

कोई भी बात नहीं गहरी
हम धर्म-युद्ध में जुट जायें, अब तो आराम न ले कोई !
हम देही, सन्तति हैं शिव की
क्या बात रही फिर संशय की
है राज-भाग्य सतयुग सृष्टि
लेने-देने के निश्चय की
दु:खधाम बड़ा ही दु:खदायी, फिर क्यों सुखधाम न ले कोई
दु:ख का अब नाम न ले कोई !

कई लोग इस कल्याणमयी वाणी को सुनकर, माया की नींद छोड़ जाग भी जाते और अपने भाग्य को उच्च बनाने के लिये हमारी तरह दिव्य पुरुषार्थ करना प्रारम्भ कर देते। इस प्रकार दिनोंदिन ब्रह्मा-वत्सों की संख्या बढ़ने लगी। बाबा ने जो साहित्य छपवाया था, उसे हम लोगों में वितरित कर सेवा में लगे रहते तथा और साहित्य छपवाते रहते।

ब्रह्माकुमारी रुक्मिणी जी कहती हैं कि बाबा जब-कभी साहित्य छपवाने के लिए निर्देश देते, तब यही कहते कि –"इसे अच्छे कागज पर तथा बहुत शोभनीय छपवाना क्योंकि यह ऊँचे-से-ऊँचे पिता-शिव बाबा – के अनमोल महावाक्य हैं। अन्य लोग इनके मूल्य को नहीं जानते परन्तु आप तो परिचित हैं कि बुद्धि रूप तिजोरी में इन्हें धारण करने से मनुष्य को भविष्य में भी २१ जन्मों के लिये स्वर्ग में अपार खज़ाना मिलता है। बाबा यह भी कहा करते कि इन अनमोल रत्नों का मूल्य कोई दे ही नहीं सकता। अत: उनसे इसका मूल्या क्या लेना है? यह तो सभी बच्चों के लिए बाप (शिव बाबा और ब्रह्मा-बाबा की) देन हैं, आप बच्चों से पैसे थोड़े ही लेंगें? फिर, आज बच्चों के पास रखा ही क्या है; भारत तो कंगाल हो गया है! एक समय था जब यहाँ सोने के महल थे। देखो तो विदेश से आने वाले यात्रियों ने भी तो यहाँ के बारे में यही लिखा है कि 'यह भूमि सोने की चिड़िया थी।' इतिहास भी बताता है कि विदेशी

आक्रमणकारी यहाँ से ऊंटों पर सोना लाद-लाद कर ले गये! जो सोने का भारत था, आज वह मिट्टी का भारत बन गया है! माया अथवा विकारों ने इस जगत्-प्रसिद्ध देश की ऐसी हालत कर दी है! तभी तो उस परमपिता को दया आई और वह फिर इसे मोहताज से सिरताज बनाने के लिए इस पतित दुनिया में आये हैं। अत: बाप तो इनकी झोली भरने आये हैं, वह तो दाता ही है,उसने क्या लेना है? परन्तु यदि इनको मुफ्त में साहित्य दिया जाय तो ये बेचारे इनका मूल्य ही नहीं मानेंगें और इन्हें मुफ्त लेने की आदत पड़ जाएगी। अत: ऐसा दोष लेने की बजाय इन से उतना ही लिया जाय जितना की पुस्तक पर खर्च आया हो अथवा जितना किसी की सामर्थ्य हो।''

बाबा यह भी समझाते थे कि शिव बाबा के वचन अनमोल हैं। ज्ञान का एक वचन एक रत्न से भी ज़्यादा कीमती है। साँसारिक रत्न तो एक जन्म तक मनुष्य के पास रह सकते हैं और उनसे सभी प्रकार के सुख भी नहीं मिलते, परन्तु ज्ञान को तो 'अविनाशी रत्न' कहा जाता है क्योंकि ज्ञान द्वारा जन्म-जन्मान्तर के लिये सम्पूर्ण स्वर्गिक सुखों की प्राप्ति होती है और वहाँ न अकाल मृत्यु होती है, न ही बुढ़ापा या रोग ही मनुष्य को दु:खी करते हैं। अत: यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाय तब तो यह ज्ञान ऐसा उच्च है कि इसे सोने के पन्ने पर; यदि सम्भव हो तो रत्नों से बनी मस (स्याही) से छपवाया जाय। परन्तु इस कलियुगी अन्धेर नगरी में, जबकि मिथ्या ज्ञान फैला हुआ है, इसका मूल्य पहचानने वाले ही कहाँ है? ये ज्ञान प्राय: लुप्त हो चुका है, तभी तो शिव बाबा को स्वंय आना पड़ा है। परन्तु जैसे वह स्वयं गुप्त (अव्यक्त) है, वैसे ही उसका ज्ञान भी गुप्त है, अर्थात् उसे पहचानने वाली बुद्धि लोगों में नहीं है।

त्रिमूर्ति मासिक पत्रिका का प्रकाशन

ब्रह्माकुमारी संदेशी कहती हैं कि उन्हीं दिनों बाबा ने एक मासिक पत्रिका भी प्रारम्भ करने का निर्देश दिया था। उसका नाम 'त्रिमूर्ति' इसी

लिये रखा गया था कि लोगों को बताया जा सके कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर के भी रचयिता जो परमपिता परमात्मा शिव हैं, उन्हीं द्वारा दिया हुआ ज्ञान इसमें संकलित है।

इस पत्रिका में कार्टून, रेखा-चित्र तथा चित्र-लेख इत्यादि भी होते थे जिससे विषय रुचिकर रीति से स्पष्ट हो जाते थे।

ब्रह्माकुमारी निर्मल शान्ता जी कहती हैं कि इस प्रकार साहित्य द्वारा भी जन-मन की ईश्वरीय सेवा की जा रही थी। अन्य धार्मिक संस्थाओं से निमंत्रण मिलने पर उनके मंच से भी ईश्वरीय सन्देश दिया जा रहा था। देहली तथा अन्य नगरों में अनेक संस्थायें सम्मेलनों में भी आमन्त्रित करती थीं, वहाँ भी भाषणों द्वारा एकत्रित, सहस्त्रों नर-नारियों को परमपिता परमात्मा का परिचय तथा समय की पहचान दी जाती थी।

देहली में विश्व धर्म-सम्मेलन

नवम्बर, १९५७ में एक विश्व धर्म-सम्मेलन देहली में लाल किले में हुआ था। उसमें तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी, प्रधानमन्त्री पं० जवाहर लाल नेहरू जी तथा अन्य कई मन्त्रियों ने भी भाग लिया था और बहुत से देशों से, बिभिन्न धर्मों के प्रतिनिधि भी पधारे थे। यह एक बहुत ही विशाल सम्मेलन था। इस अवसर पर बाबा के निर्देश से रंगीन चित्र छपवाये गये थे, जिनमें सबसे ऊपर विश्व-रचयिता परमपिता शिव परमात्मा और उनके नीचे ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर का चित्र था और इन तीनों के नीचे सृष्टि के पाँच युगों का चक्र अंकित था। चित्र के दोनों ओर के स्तम्भों (Columns) में 'रचयिता और रचना' का अर्थात् परमपिता परमात्मा शिव, उनकी सर्वप्रथम रचना 'त्रिदेव' का तथा इस मनुष्य-सृष्टि के आदि-मध्य-अन्त का संक्षिप्त परिचय था। इनके साथ ही सुनहरी एवं चाँदी-जैसे रंग में छपे हुए मुख-पृष्ठ वाली एक बहुत ही सुन्दर पुस्तक छपवाई गयी थी। इसमें यह बताया गया था कि यद्यपि आज भारत को राजनैतिक तौर पर तो स्वराज्य प्राप्त हुआ है,तथापि यहाँ सुख का साम्राज्य नहीं है क्योंकि

देशवासी काम, क्रोधादि विकारों के वशीभूत हैं। देश के नेताओं ने धरना, अनशन तथा असहयोग आन्दोलनों द्वारा जो स्वराज्य प्राप्त किया है वह मृगतृष्णा के समान है; उससे सम्पूर्ण सुख की कामना करना व्यर्थ है। अत: स्वराज्य के लिए बापू गाँधी जी का जो स्वप्न था, वह पूरा नहीं हो सकता। अब विश्व के बापू, परमात्मा शिव तथा प्रजापिता ब्रह्मा, भारत को पुन: सतयुगी, पावन एवं सुख-शान्ति, सम्पन्न, स्वर्णिम भारत बनाने के लिए सहज ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राजयोग की शिक्षा दे रहे हैं। ज्ञान-बल, योग-बल तथा पवित्रता बल, अर्थात् चरित्र-बल, से ही सच्चा स्वराज्य स्थापित हो सकता है।

सम्मेलन में हमने अपने भाषण में भी जीवन को निर्विकार बनाने तथा उसके लिए ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राजयोग की शिक्षा प्राप्त करने पर ही बल दिया था और परमपिता परमात्मा शिव के अवतरण का शुभ सन्देश सभी को दिया था। इस दृष्टिकोण से जो सुन्दर, सुनहरी पुस्तक सभी को दी गयी थी, उसके मुख पृष्ठ पर भी ''सदा शुभ बधाई'' — ये शीर्षक अंकित था। हजारों की संख्या में इसी शीर्षक से सुन्दर निमन्त्रण पत्र भी छपवाये गये थे ताकि जन-जन को परमपिता के अवतरण की सूचना दी जा सके। विदेशी लोगों को भी साहित्य भेंट किया गया था। भारत के राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री तथा अन्य गणमान्य व्यक्तियों को तार भी भेजे गये थे। जिसमें उन्हें स्पष्ट शब्दों में बताया गया था कि अब विश्व के बापू, परमपिता परमात्मा शिव, फिर से प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा भारत में सच्चे स्वराज्य की स्थापना का कार्य कर रहे हैं, आप भी समय निकालकर इस सत्यता को जानो।

राजनीतिक नेताओं, समाज-सेवकों तथा न्यायाधीशों को ईश्वरीय सन्देश

उन्हीं दिनों राजनीतिक नेताओं, समाज-सेवियों तथा न्यायाधीशों के भी कुछ सम्मेलन हो रहे थे। उनके लिए उपयुक्त साहित्य छपवाकर उन्हें भी दिया गया था। उन विशिष्ट व्यक्तियों ने उस साहित्य को बहुत पसन्द किया

था। इसके बारे में हम अधिक उल्लेख पुस्तक के दूसरे भाग में करेंगें।

आगे के वर्षों में क्या-क्या हुआ, इसका उल्लेख हम इस जीवन-कहानी के भाग-२ में करेंगे। इस अंक में तो सन १९५७ तक का संक्षिप्त इतिहास है। यह दिव्य इतिहास अथवा यह अलौकिक जीवन-कहानी, जहाँ तक मुझे मालूम हो सकी है, और मेरे अनुभव में आई है,मैंने लिपिबद्ध करने का छोटा-सा प्रयत्न किया है। समयाभाव के कारण जैसा बन पड़ा है, वैसा ही जनता के समक्ष रखा है। हो सकता है कुछ आवश्यक तथ्य रह गए हों।

अभी इस भाग में पिता-श्री जी की जो जीवन-कहानी लिखी गई है, उसके पीछे अभिप्राय यही है कि इसे पढ़कर नर-नारी वर्तमान समय को पहचानें और भारत में चल-रहे परमपिता परमात्मा के कर्त्तव्यों को जानकर उन द्वारा अपना कल्याण करें ताकि उन्हें बाद में ऐसा न कहना पड़े। कि — ''हे प्रभु, आप साधारण तन में आये, आपने हमें निमन्त्रण भी दिया, आपने दिव्य कर्तव्य भी किये और साकार देह को छोड़कर अव्यक्त रूप द्वारा भी कल्याण-कार्य किया, परन्तु हम आपको न पहचान सके! अहो, प्रभु, आपकी लीला अपरम्पार है! प्रभु, आपने गोप-गोपियों के साथ अलौकिक चरित्र भी किये, आपने शिव-शक्तियों को आत्मिक शक्ति भी दी, उन गोप-गोपियों और शक्तियों ने हमें जगाने के लिए कोटि-कोटि यत्न भी किये, परन्तु हम फिर भी न जागे!''

बाबा की अद्‌भुत जीवन-कहानी का अथवा प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय के इतिहास का यह तो पहला भाग हमने प्रकाशित किया है, इसमें सन् १९५७ तक के मुख्य वृत्तान्तों का, जहाँ तक हमें पता चल सका, संकलन किया है। इससे आगे का बहुत ही महत्वपूर्ण इतिहास आप दूसरे भाग में पढ़ेंगे।

—'**संजय**'

– ओम् शान्ति –